||२१७||

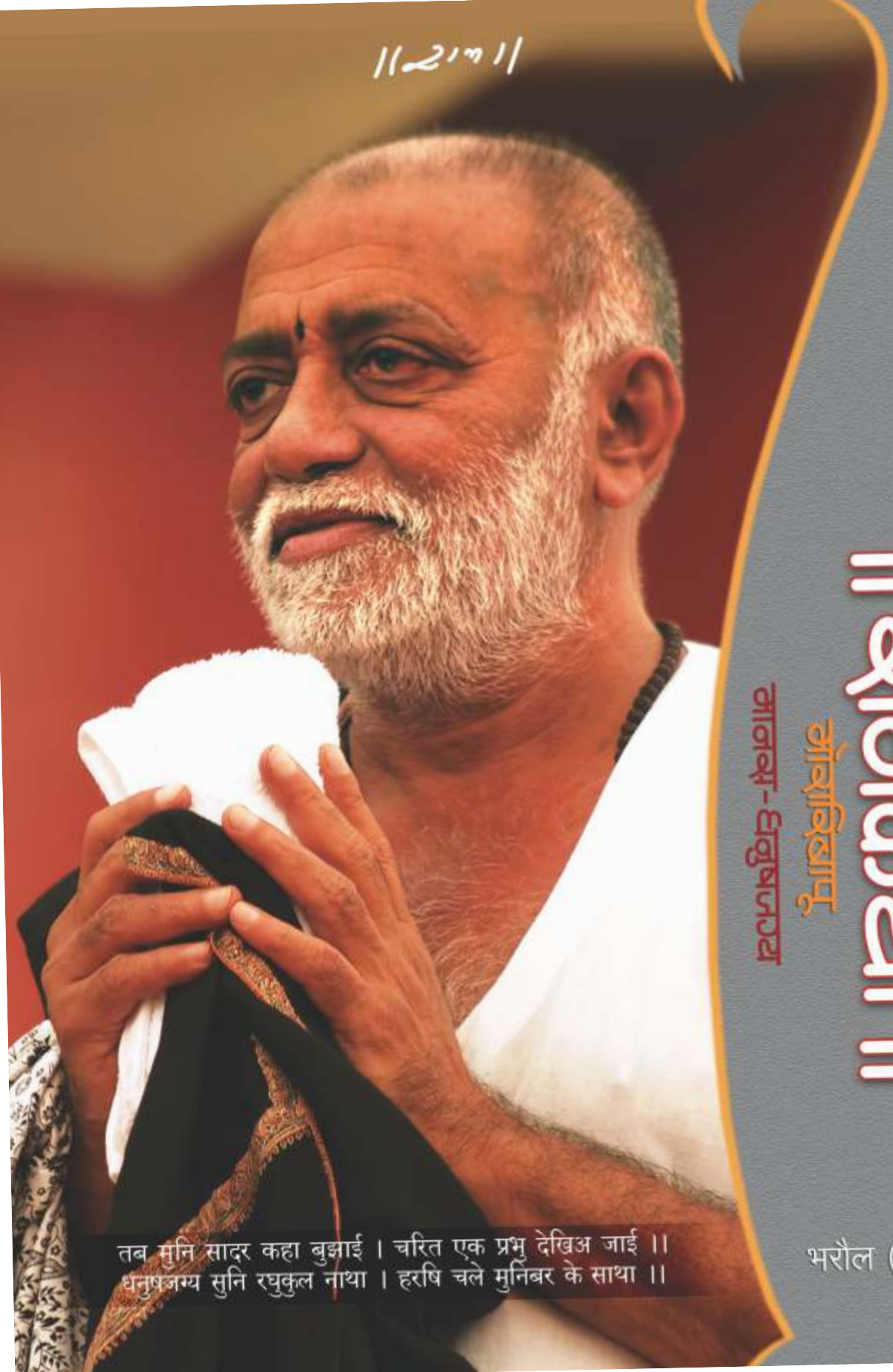

॥ रामकथा ॥

मोरारिबापू

मानस-धनुषजग्य

तब मुनि सादर कहा बुझाई । चरित एक प्रभु देखिअ जाई ॥
धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा । हरषि चले मुनिबर के साथा ॥

भरौल (बिहार)

१.	भगवान की कथा शीतल होती है, अपने आप में शीतलता प्रदान करती है।
२.	इतिहास एक होता है, कथा अनंत होती है।
३.	जीवन के हर मोड़ पर परमात्मा है।
४.	गुरु एक वर्ग का होता है, सद्गुरु समग्र विश्व का होता है।
५.	बुद्ध के शून्य और परमबुद्ध शंकराचार्य के पूर्ण का समन्वय है शिव।
६.	सत्संग करना ये चरित्र-निर्माण का प्रथम कदम है।
७.	भगवान को पाना कठिन नहीं है, भक्ति को पाना कठिन है।
८.	'रामचरित मानस' धर्म नहीं सिखाता, धर्मसार सिखाता है।
९.	हम प्रत्येक कार्य यज्ञभाव से करें।

|| रामकथा ||
मानस-धनुषजग्य

मोरारिबापू
भरौल (बिहार)
दिनांक : २३-०५-२०१५ से ३१-०५-२०१५
कथा-क्रमांक : ७७७

प्रकाशन :
जून, २०१६

प्रकाशक
श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट,
तलगाजरडा (गुजरात)
www.chitrakutdhamtalgajarda.org

कोपीराईट
© श्री चित्रकूटधाम ट्रस्ट

संपादक
नीतिन वडगामा
nitin.vadgama@yahoo.com

राम-कथा पुस्तक प्राप्ति
सम्पर्क-सूत्र :
ramkatha9@yahoo.com

ग्राफिक्स
स्वर अेनिम्स

प्रेम-पियाला

भरौल (बिहार) में मोरारिबापू ने दिनांक २३-५-२०१५ से ३१-५-२०१५ दरमियान रामकथा का गान किया। माँ जानकी की परमपावन भूमि में गायी गई बापू की इस रामकथा 'मानस-धनुषजग्य' पर केन्द्रित हुई। पुष्पवाटिका में हुआ जानकीजी और ठाकुर का मिलन, बाद में ब्याह और बीच में एक बहुत बड़ा यज्ञ संपन्न होता है, जिसका नाम गोस्वामीजी ने 'धनुषजग्य' दिया है। इस प्रसंग के परिप्रेक्ष्य में बापू ने भी 'मानस-धनुषजग्य' विषय पर अपना दर्शन प्रस्तुत किया।

'रामचरित मानस' का आरंभ यज्ञ से होता है, ऐसा सूत्रात्मक निवेदन करते हुए बापू ने यज्ञ की विशिष्ट व्याख्या-विभावना प्रस्तुत की और 'मानस' में निहित विभिन्न प्रकार के नौ यज्ञों का विशिष्ट परिचय भी दिया। एक, प्रभु राम के जन्म से जुड़ा हुआ पुत्रकामेष्टि जग्य; दूसरा, ताडका और सुबाहु को प्रभु ने निर्वाण दिया वह निर्वाण-जग्य; विश्वामित्र महाराज के अनुष्ठान का तीसरा यज्ञ; चौथा, अहल्या-उद्धार का धैर्य-जग्य या चैतन्य-जग्य; पांचवां, मिथिला में नगरदर्शन के समय हुआ सौन्दर्य-जग्य या रूप-जग्य; छठ्ठा, पुष्पवाटिका में हुआ प्रणय-जग्य; सातवां, जो मूल जग्य की बात इस कथा के केन्द्र में है यह धनुष-जग्य; आठवां, परशुराम महाराज का समर-जग्य और राम-सीता के विवाह का नववां यज्ञ-जैसे प्रत्येक यज्ञ को बापू ने निजी ढंग से उद्घाटित किया।

बिहार के एक छोटे-से गांव में हुई रामकथा निमित्त इस आंचल के भाई-बहनों को मिलने की खुशी बापू ने व्यक्त की एवम् देहातों के भाई-बहनों को इन शब्दों में आश्वस्त भी किया कि आप खेतों में बीज बोते हो वह यज्ञ है। आपको वेद-मंत्र से यज्ञ करने की जरूरत नहीं। मौसम आती हैं, आप हल जोतते हो और खेत में बीज बोते हो वह आपका कृषि-यज्ञ है। वो ऋषि-यज्ञ था, तो आप करते हैं वो कृषि-यज्ञ है। साथ ही बापू ने ब्राह्मण देवताओं को भी कहा कि कोई छोटा आदमी यदि अपने घर में छोटा-बड़ा यज्ञ करवाना चाहे तो सामग्री का लिस्ट थोड़ा छोटा देना!

प्रत्येक कार्य यज्ञभाव से करने की बापू ने जिक्र की और यज्ञभाव से किया कर्म मानी क्या? ऐसी जिज्ञासा के प्रत्युत्तर में बापू ने स्पष्ट किया कि यज्ञभाव से कर्म करना मतलब स्वाहा की वृत्ति से कर्म करना; जिनमें वाह-वाह की ख्वाहिश न हो, बल्कि बोलना, चलना, देखना, सोचना ये सब कुछ स्वाहा के हेतु हो। और निमित्त बनकर कर्म करना और नमित बनकर काम न करना; कायर बनकर काम न करना क्योंकि हम सबके हृदय में परमात्मा बैठा है।

'मानस-धनुषजग्य' रामकथा के माध्यम से श्रावक भाई-बहनों यूं यज्ञ के संदर्भ में मोरारिबापू के विशिष्टदर्शन से लाभान्वित हुए और समांतर रसप्रद कथा-प्रसंगों से प्लावित भी हो सके।

– नीतिन वडगामा

मानस-धनुषजग्य : १ :

भगवान की कथा शीतल होती है, अपने आप में शीतलता प्रदान करती है

मैं गुरु की सीधी-सादी व्याख्या करूं तो इतना ही कहूं, गुरु उसको समझना कि जिसकी आंखों में करुणा हो, जिसके हृदय में प्राणीमात्र के प्रति प्रेम हो और जिसकी जूबां पे सत्य हो। ये तीन वस्तु जहां-जहां अपने अनुभव में आये उसको बुद्धपुरुष समझने में देर नहीं करनी चाहिए। जूबां पे सत्य, दिल में प्यार और आंखों में करुणा ये बुद्धपुरुष की निशानी है।

तब मुनि सादर कहा बुझाई । चरित एक प्रभु देखिअ जाई ।।
धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा । हरषि चले मुनिबर के साथा ।।

बाप! माँ जानकी की असीम कृपा से इस मिथिलाधाम में फ़िर एक बार रामकथा लेकर आने का अवसर माँ ने दिया। सब से पहले मैं उसकी बहुत प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। ये मिथिलांचल माँ जानकीजी की भूमि साथ-साथ बिध-बिध क्षेत्रों में कई महामानव इस भूमि ने दिये हैं। उसकी बड़ी ये महिमावंत भूमि बुद्ध, महावीर, कितने-कितने विद्वान और विद्यापतिगण यहां प्रगट हुए, आए! संतगण, सामाजिक, राजकीय क्षेत्र के भी कितने दिग्गज महानुभाव संसार को इस भूमि ने दिये! मैं बिहार आया हूं इसलिए बिहार की प्रशंसा करूं ऐसी कोई बात नहीं क्योंकि मुझे तो बिहारी को कायम याद करना पड़ता है। उसके बिना तो हमारी गति ही नहीं होती।

द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी ।

बिहारी के नामस्मरण के बिना तो हम आगे ही नहीं बढ़ते हैं। तो कुछ अंतराल के बाद इस पावन भूमि पर रामकथा लेकर आने का अवसर प्राप्त हुआ। फ़िर एक बार मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं और इस आंचल के देहात से आए हुए छोटे से छोटे मीन्स जो देहातों में रहते हैं इस अर्थ में, बाकी कोई छोटे-बड़े की बात नहीं। वहीं से लेकर सभी पूज्यचरण तक सब को मैं व्यासपीठ से प्रणाम करता हूं। एक साल पहले ऐसे ही एक आंचल में हम थे। बिलकुल एक साल पहले। राजापुर की भूमि में (यु. पी.) में। बस, यही मय का महिना था। यहां आने का अवसर माँ ने दिया। वैसे मैं मेरी व्यासपीठ की कोई बात ऐसे करूं वो ठीक भी नहीं लेकिन पूरा संसार जानता है कि रामकथा कहीं भी तुरंत नहीं हो पाती। मेरी व्यस्तता के कारण जो वादा किया होता है, देश-विदेश में वचन दिये होते हैं वो सब पूरे करने होते हैं क्रमशः। लेकिन ये कथा कैसे आ गई मुझे भी समझ में नहीं आता! और बड़ी बात तो ये है कि इस कथा के लिए किसीकी सिफ़ारीश काम करती ही नहीं। कोई

इसमें वाया नहीं है, कोई बीचवाले नहीं हैं कि चलो, हम बापू से कथा दिलवायें। मैंने ये कथा दी केवल बिपिन की आंख में आंसू और उनके मौन के कारण। ये बिपिनभैया बिलकुल चुप बैठा रहता है। मैं पहचानता नहीं कौन है ये वो? लेकिन उनकी आंख में आंसू और उनका अर्थगंभीर मौन! तो, मैंने बहुत कम समय में शायद गोवा में संमति दे दी कि भैया, इतने दिनों में आप क्या कर लोगे? तो, चलो, ले जाओ कथा और उसने सहर्ष इस बात को कुबूल की।

लोग मुझे पूछ रहे हैं कि कौन गांव है? नव दिन में याद रखूंगा, कौन से गांव में मैं आया हूं? ये गांव का क्या नाम? भरौल; मुझे विशेष खुशी ये है कि इस आंचल के जिसके पास मैं कभी नहीं जा पाता और जो मेरे पास कभी नहीं आ पाते ऐसे मेरे भाई-बहनों को रामकथा के निमित्त मैं मिल पाउंगा। नगरों में, विदेशों में, जहां-जहां कथा होती है, कथा की अपनी महिमा होती है। लेकिन ऐसे आंचल में भगवान की कथा आए ये मेरी दृष्टि में आख़िरी व्यक्ति तक पहुंचने का महात्मा गांधीबापू का जो संकल्प था। अरे! गांधीबापू तो बाद में आए। मेरे ठाकुर रामभद्र का जो संकल्प था कि आख़िरी व्यक्ति तक व्यक्ति को पहुंचना चाहिए। यहां ये होगा इसकी मुझे खुशी है। कई लोग पूछते हैं कि कौन आएंगे सुनने के लिए? मैंने कहा कि जगदंबा जानकी तो है न? और ये उनकी माँ पृथ्वी है और तो फ़िर मुझे किसकी जरूरत है? ये धरती उनकी माता है। तो मैं राजी हूं कि मैं आ पाया। और लोग पूछते हैं, यहां के बिहार के लोग भी मुझे पूछने लगे कि बापू, इतनी गर्मी में आप कथा देते हैं वहां? मैंने कहा, आप बिहार में रहते हैं। आप तो गर्मी के आदती है न! तो फ़िर हम आदती हो जायेंगे। हमारी फ़िक्र छोड़ो ना! आप को तो ये आदत है गर्मी सहन करने की, तो हम कौन उपर से आए हैं? हम भी तो इस धरती की संतान है साहब! और इतनी कोई गर्मी जैसा कुछ लगता भी नहीं है। भगवान की कथा शीतल कथा होती है। अपने आप में शीतलता प्रदान करती है।

तो जनकसुता, जगत की जनेता और करुना निधान की अत्यंत प्रिया माँ जानकी की इस परम पावन भूमि पर आज से रामकथा का आरंभ हो रहा है। मैं सोच रहा था दोपहर को जब मैं पहुंचा बारह बजे के आसपास कि मैं यहां कौन-सा प्रसंग लूं? कौन मुद्दे पर आप से बातें करूं? तो फ़िर अकेला बैठा था और ये दो चित्र, पुष्पवाटिका में राम-जानकी का प्रथम मर्यादापूर्ण मिलन और ये दूसरा चारों भाईओं का विवाहमंडप में विवाह संपन्न होना। दो घटना यहां चित्रित है। मुझे लगा कि दोनों के बीच का प्रसंग उठाउं और इस कथा का पूरा प्रसंग लूंगा मैं। आप के साथ बातें करूंगा। उसकी थोड़ी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा तो हो ही जायेगी, लेकिन प्रसंग लूंगा। तो मैंने यहां आने से पहले तीन बजे के आसपास निर्णय लिया कि मैं इस रामकथा का वही सब्जेक्ट को केन्द्र में रखूं 'मानस-धनुषजग्य।' क्योंकि पुष्पवाटिका में ठाकुर का मिलन, फ़िर बाद में ब्याह, बीच में एक बहुत बड़ा यज्ञ संपन्न होता है और जिसका नाम मेरे गोस्वामीजी ने 'धनुषजग्य' दिया है। तो कथा का केन्द्रीय विचारबिंदु धनुषयज्ञ; तो इस कथा का मूल विषय रहेगा 'मानस-धनुषजग्य।' क्योंकि 'मानस' को भी मैं, रामकथा को भी मैं प्रेमयज्ञ कहता हूं। ये भी एक यज्ञ हैं। और 'रामचरित मानस' में कितने प्रकार के यज्ञ आए विध-विध जगह पर! रूपकों की दृष्टि में, सब संदर्भ में हम कोशिश करेंगे गुरुकृपा से जितनी समझ आए वो मैं आप के साथ विचार-विमर्श करूंगा, संवाद रचूंगा मिथिला की भूमि पर। मुझे ये भी आनंद है कि यहां बहुत अच्छे-अच्छे रामायणी हुए हैं इस भूमि पर। चाहे देहात में रहनेवाला कोई रामकथा का गायक हो, प्रसिद्ध न हो लेकिन कभी-कभी सुनता हूं तो इतने सुंदर भाव निकलते हैं तब लगता है कि इस भूमि में रामकथा कितनी पनप रही है!

तो 'मानस-धनुषजग्य'; विश्वामित्र के यज्ञ में भगवान राम आए। यज्ञ पूरा किया प्रभु ने और कुछ दिन यहां रहे भी बक्सर में, सिद्धाश्रम में। और मुझे कल मैं आ रहा था तो बताया गया कि यहां थोड़े दूर अहल्याजी का भी स्थान बताया जा रहा है। तो विश्वामित्र के यज्ञपूर्ति करके भगवान वहां कुछ दिन रहे हैं। फ़िर विश्वामित्रजी एक प्रस्ताव आदर के साथ बोले हैं। राम तो छोटे हैं। विश्वामित्र उनके शास्त्रगुरु हैं, शस्त्रविद्या के गुरु है। फ़िर

भी विश्वामित्रजी को पता लग गया है कि रामतत्त्व क्या है? वो पहचान चुके हैं। इसलिए बहुत आदर के साथ भगवान राम से निवेदन करते हैं कि राघव, मेरा काम तो पूरा हो गया है। मैं आप को अयोध्या वापिस छोड़ दूं। लेकिन यदि आप राजी हो तो एक चरित्र हम जाकर देख लें। ये प्रस्ताव आया। ठाकुर ने मन ही मन प्रश्न किया कि वो कौन-सा चरित्र जो देखने की आप बात करते हैं? तब गोस्वामीजी शब्दप्रयोग करते हैं-

धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा ।
हरषि चले मुनिबर के साथा ।।

धनुषजग्य की बात कही। एक चरित्र देखें मिथिला जाकर। सुनते ही आनंदीओं को भी आनंद देनेवाला परमात्मा आज बहुत हर्षित हुए और उसी क्षण चल पड़े कि चलो, हम जाए और वो धनुषजग्य का दर्शन करें। तो इस कथा का ये दो पंक्ति को आधार बनाया है। 'बालकांड' की दो पंक्ति है। इस पंक्तिओं के साथ हम धनुषजग्य का दर्शन करेंगे। यज्ञ के कितने-कितने विभाग होते हैं शास्त्रीय रूप से और लोकदृष्टि से उसकी गहन चर्चा करेंगे और तुलसी ने जहां-जहां यज्ञविधान की चर्चा की है, उसकी इस कथा में प्रधानरूप में बातें करेंगे क्योंकि ये बिपिनभैया और समग्र परिवार ने मिलकर अपनी पितृभूमि में ये 'मानस'प्रेमयज्ञ का आरंभ करवाया है। और इस प्रेमयज्ञ में हम सब कौन-सी आहुति ड़ाले क्योंकि यज्ञ के कई विभाग और बिंदु होते हैं। हम और आप उस महत्त्व के बिंदु पर कुछ विशेष बातें करेंगे। वैसे तो 'धनुषयज्ञ' कहना चाहिए लेकिन तुलसीदासजी पूरे 'रामचरित मानस' में अपभ्रंश शब्द का प्रयोग किये जा रहे हैं। वो 'जग्य' कर देते हैं। इसलिए तुलसी का ही शब्द मैं रखना चाहूंगा 'मानस-धनुषजग्य।'

तो, इस व्यासपीठ के पावन मंच पर जो दो चित्र हैं उसके बीच की ये घटना है धनुषभंग-घटना, धनुषजग्य घटना और साहित्यिक भाषा मैं तो क्या मैं बोलूं? तो साहित्यिक भाषा समझ लीजिए आप। तो ये कहे कि 'प्रणय' है और 'परिणय' है। यहां प्रणय शुरू हुआ है सीतारामजी का और यहां परिणय है। लेकिन इन दोनों के बीच में धनुष टूटना चाहिए; तो ही ये यात्रा संपन्न होती है। किसीका भी प्रणय परिणय में तभी परिवर्तित होता है जब व्यक्ति का अहंकार का धनुष टूट जाय, आदमी का अहंभाव टूट जाय। वर्ना प्रणय तो होता है लेकिन पूर्ण परिणय नहीं हो पाता। तो मेरे और आप के जीवन में भी परमात्मा के प्रति प्रीत तो है। भगवान किसको अच्छा नहीं लगता? लेकिन वो साक्षात्कार में परिवर्तित नहीं हो पा रहा है। बाधा है! मेरा और आप का कहीं न कहीं जड़, कठिन, पुराना अहंकार, शायद जनम-जनम की ये मूढ़ता टूटती नहीं इसलिए हम पूर्ण साक्षात्कार की ओर पहुंच नहीं पाते। आओ, गुरुकृपा से, हनुमानजी की कृपा से, माँ जानकी के आशीर्वाद से, हम नौ दिन ऐसी यात्रा करें की हमारा प्रणय, परिणय तक पूर्ण गति करें। लेकिन शर्त है अहंकार टूटे।

मैंने कहा वैसे 'रामचरित मानस' में यज्ञ के बारे में तुलसीदासजी ने बहुत बातें बिलग संदर्भ में रखी है, रूपकों में, कई दृष्टि से और यज्ञविधान की चर्चा की है। भारत यज्ञप्रधान देश है। हमारे देश का 'ऋग्वेद' का पहला मंत्र जब शुरू होता है तो अग्निकुंड के 'अग्नि' के शब्द से ही प्रसंग का आरंभ होता है। कोई उपदेश देने की बात नहीं। मैं सालों से बोले जा रहा हूं। उपदेश की कोई योग्यता नहीं और आदेश देने की भी कोई गुंजाईश नहीं। मैं केवल तुलसी का संदेश पहुंचाने के लिए निकला हूं और संदेश भी कोई अेड्रेस लेकर नहीं निकला हूं कि इसके नाम संदेश है। कोरा कागज़ है, जो ले ले उसका नाम वो खुद लिख ले। बाकी ऐसे ही बांटता निकला हूं एक मेसेज़ 'रामचरित मानस'का।

मुझफ़रपुर में पत्रकारों ने पूछा कि बापू, आप का उद्देश क्या है? मैंने कहा कि कोई उद्देश नहीं। हमारे गुजराती में बहुत बड़े साहित्यकार राजेन्द्र शाह, उसने एक कविता लिखी 'निरुद्देशे।' मेरा पृथ्वी का भ्रमण है, कवि कहता है, कोई उद्देश नहीं। और मुझे खुशी है कि मेरे यजमान परिवार का भी कोई उद्देश नहीं लगता। उसको करना है 'स्वान्तः सुखाय।' इसलिए कथा का श्रीगणेश हो रहा है तब पूरे आंचल की जनता को मैं मोरारिबापू आमंत्रित करता हूं और बिपिन मुझे कहे, आपने कम दिन दिए! हम जन-जन तक नहीं पहुंच पाए, त्रुटियां रह गई! अब छोड़ो, मैं पहुंच जाउंगा जन-जन

तक। अब मैं बैठा हूं, अब मैं पूरे आंचल को निमंत्रित करता हूं, कथा में आईए। यहां के आंचल को मेरा दिल का निमंत्रण है कि आईए। कथा सुनना है, सुनिए। लेकिन यहां आकर दोपहर को प्रसाद जरूर लीजिए, ये माँ जानकी का प्रसाद है। प्रसाद का अर्थ है प्रसन्नता। हम घर में खाते हैं वो रोटी है। कथा के बाद जो परोसा जाता है वो प्रसाद है। और प्रसाद का काम है प्रसन्नता में वृद्धि करनी। प्रसाद परमात्मा के घर से आया हुआ रसायन है। आयुर्वेदिक ग्रंथ में प्रसाद को रसायन कहा है।

रसायन तीन काम करते हैं। एक, आदमी की उम्र बढ़ाता है। बाकी रही उम्र में हर्ष बढ़ाता है। दूसरा, आदमी की पवित्रता में वृद्धि करता है। प्रसाद पाया उसकी एक पवित्रता दिल में शुरू हो जाती है। तीसरा, मन को तृप्त करता है। ये तीन परिभाषा है। तो आप जरूर प्रसाद लीजिए और मैं कोई भीड़ के लिए नहीं बुला रहा हूं। दुनिया में मैंने भीड़ बहुत देखी है कथाओं में। तो मेरे भाई-बहन, न मेरा कोई उद्देश है और न बिपिनभैया और उसके परिवार का उद्देश है। उसको तो ये करना है कि मेरी ये भूमि पर परमात्मा की दिव्य कथा का आयोजन हो और प्रभुकृपा से आज से मैंने प्रवेश किया तो कहा कि बड़ा दुर्गम काम आपने किया है। हम तो सीधे-सीधे आकर बैठ जाते हैं! लेकिन ये आयोजन करना सामान्य बात तो है नहीं। कोई उद्देश नहीं। प्रसन्नता बढ़े, बाकी रही जिंदगी में आनंद बढ़े और जीवन में आगे की यात्रा में विशेष पवित्रता बढ़े। इससे अतिरिक्त हमें क्या चाहिए? मुझे मुझफ़रपूर में रात को पूछा गया कि आप का उद्देश क्या है? मैंने कहा कि कोई लक्ष्य नहीं, उद्देश नहीं। मैंने कहा, उद्देश हो और सफल हो तो अभिमान आ जाए और सफल न हो तो निराशा आ जाए। तुलसीदासजी ने तीन उद्देश बताये 'मानस'में-

स्वान्तः सुखाय तुलसी रघुनाथ गाथा ।

तुलसीजी कहते हैं, मैं ये कथा मेरे अंतःकरण के सुख के लिए गाता हूं।

भाषाबद्ध करबि मैं सोई ।
मोरें मन प्रबोध जेहिं होई ।।

मैं उसको भाषा में ग्रथित करूं, क्यों? मेरा मन सुने। मेरा मन बोध ग्रहण करे।

निज गिरा पावनि करन कारन राम जसु तुलसीं कह्यो ।

मैं अपनी वाणी को पवित्र करने के लिए ये कथा गाने जा रहा हूं। भजन हो पंड़ाल में सुबह साड़े नौ से ड़ेढ़ बजे तक, बाद में भोजन हो। मैंने तो आदेश दे दिया था कि बिपिनभैया, कथा शुरू हो इससे पहले बिहार में जो भूकंप के झटके आए और उसमें जो दिवंगत आत्माएं चली गई उनके लिए पहले प्रसाद बांट लो। तो तुरंत मेरी बात सुनकर कथा शुरू होने से पंद्रह दिन पहले ये इस रूप में भी प्रसाद बांट दिया गया कि कल कोई ये न कहे कि कथा में इतना खर्चा हुआ और यहां लोग इतने दुःखी है! मैंने कहा कि वहां प्रसाद पहुंचाओ जहां इस दैवी आपदा का लोग भोग बने हैं। मेरे भाई-बहन, नव दिन तक भजन और भोजन का निरुद्देश ये प्रेमयज्ञ चलेगा। 'मानस-धनुषजग्य' को केन्द्र में रखकर भगवान की कथा को हम आगे बढ़ाएं।

पहले दिन की कथा में एक हमारी परंपरा है। परंपरा जड़ नहीं होनी चाहिए, प्रवाही होनी चाहिए। यहां भगवती गंगा बहती है। गंगा बहती है, तो हमारे कपड़े का मैल धो ड़ालती है क्योंकि प्रवाही परंपरा है। लेकिन वोही बहती गंगा का जल लेकर आप उसका बरफ कर दो, घन कर दो; फ़िर अपने कपड़ों पर घिसो तो फ़ाड देगा! तो, परंपरा जड़ बनती है तो आदमी को तोड़ डालती है। परंपरा सदैव प्रवाहमान होनी चाहिए। तो इस परंपरा का निर्वाह करने के लिए पहले दिन वक्ता को चाहिए कि 'मानस' जो सद्ग्रंथ है उसका माहात्म्य, महिमागान अथवा तो ग्रंथ-परिचय दिया जाय कि ये ग्रंथ क्या है? अब हिन्दुस्तान में 'रामचरित मानस' क्या है ये बताने की जरूरत नहीं है। और बिहार में बिलकुल जरूरत नहीं। भगवद्कृपा से पृथ्वी के गोले पर भी नहीं कहना पड़ेगा कि 'मानस' क्या है? महात्मा गांधीजी कहते हैं कि जिसको 'महाभारत' और 'रामायण' के बारे में जानकारी नहीं उसको हिन्दुस्तानी होने का अधिकार नहीं। ये आलोचना नहीं, पीड़ा थी! तो, क्या परिचय दूं इस शास्त्र का? तुलसीदास ने लिखा है-

पूँछेहु रघुपति कथा प्रसंगा।
सकल लोक जग पावनि गंगा।।

पवित्र गंगा का प्रवाह है। उसका क्या परिचय दूं? जितना हो सके हम पान करें गंगा का। तो मेरे भाई-बहन, 'रामचरित मानस' के सात सोपान है। 'बाल', 'अयोध्या', 'अरण्य', 'किष्किन्धा', 'सुन्दर', 'लंका' और 'उत्तर।' वाल्मीकिजी ने 'कांड' शब्दप्रयोग किया है और तुलसीदासजी ने 'सोपान' कहा है। सोपान मानी सीढ़ी। ये सात सीढ़ीओं का साधन है, जो हमें श्लोक से लोक तक ले जाता है। पहला सोपान 'बालकांड' है। उसके मंगलाचरण में गोस्वामीजी ने सात मंत्रों में मंगलाचरण किया है। गोस्वामीजी को सात का अंक, नव का अंक, ग्यारह का अंक अत्यंत प्रिय है। तो सात सोपान की रामकथा, जिनके आरंभ में सात मंत्र है। और 'उत्तरकांड' के अंत में सात प्रश्नों के उत्तर है।

गोस्वामीजी चाहते तो पूरा शास्त्र देवगिरा संस्कृत में रच सकते थे। लेकिन गोस्वामीजी को लगा, श्लोक को लोक तक पहुंचना चाहिए। सामान्य से सामान्य आदमी 'रामचरित मानस' को आत्मसात् कर सके इसलिए गोस्वामीजी लोकबोली में, ग्राम्य भाषा में उतर आये; जैसे भगवान बुद्ध ने भी यही काम किया। क्या गौरवशाली उनकी भाषा रही होगी! महावीर ने भी यही किया। समयांतर में कबीरसाहब ने भी साधुकडी बोली में लोगों तक पहुंचने के लिए उनकी बोली में शास्त्र उतारा। गोस्वामीजी ने पांच सोरठें में पंचदेवों की स्तुति की। पहले सोरठे में गणेशजी का स्मरण। दूसरे सोरठे में भगवान सूर्य का स्मरण। तीसरे सोरठे में भगवान विष्णु की स्मृति। चौथे सोरठे में शिव-पार्वती को याद किया। पांचवें और अंतिम सोरठे में तुलसीदासजी ने अपने गुरुदेव की वंदना की।

हम लोग अपने घरों में गणेश की पूजा करते हैं। किसान लोग खेतों में रहनेवाले वो तो सूर्य की निकट कायम है। अपने पसीने से सूर्य की पूजा करते हैं। गांव के लोग बहुत उदार होते हैं। तो विशालता दिल की ये विष्णुपूजा है। दूसरों के लिए शुभ सोचना ये शंकर का अभिषेक है और अपनी श्रद्धा को अकबंद रखना ये माँ दुर्गा की उपासना का संकेत है। तो पांच देवों की स्मृति की। उसके बाद तुलसीजी कथा का जब चौपाईओं में आरंभ करते हैं तब अपने गुरुदेव की वंदना की-

बंदऊँ गुरु पद पदुम परागा।
सुरुचि सुबास सरस अनुरागा।।
श्रीगुरु पद नख मनि गन जोती।
सुमिरत दिब्य दृष्टि हियँ होती।।

गुरु के चरणकमलों की वंदना करते हुए गोस्वामीजी ने कहा कि जिसके वचन सूरज की किरण के समान है, महामोह रूपी अंधकार को मिटा देता है, ऐसे मेरे गुरु को मैं प्रणाम करता हूं। जिसको मेरी व्यासपीठ 'मानस-गुरुगीता' मानती है। मैं तो इतना ही कहकर आगे बढ़ूं कि जीवन में कोई न कोई बुद्धपुरुष, सद्गुरु चरण का आश्रय करना। हां, कई पंथ ऐसे है कि कहते हैं कि गुरु की जरूरत नहीं है। हम सीधे चलते हैं। इवन बुद्ध भगवान भी ये परंपरा में नहीं हैं। वो कहते हैं, अपना दीया खुद जलाओ। बुद्ध-वचन है, अच्छी बात है। लेकिन हमारे जैसे लोगों को कोई गुरु चाहिए। हम अपने दीये के उजाले में यात्रा करें लेकिन हमारा दीया कोई जलायें इतना कोई मार्गदर्शक तत्त्व हमारे जीवन में आवश्यक है। गुरु परंपरा हमारे देश की बहुत प्यारी परंपरा रही।

प्रश्न ये है कि हम किसको गुरु समझें? गुरु के लक्षण क्या? तुलसीदासजी सांकेतिक भाषा में उसके लक्षण की ओर ईशारा किया है। 'बंदउँ गुरु पद कंज' कहकर एक ईशारा किया; यहां गुरु के चरण की वंदना की है। लेकिन कहा कि जैसे कमल पानी में रहते हुए भी पानी से असंग हे वैसे गुरु की पहली परिभाषा ये है कि जो हमारे बीच रहे, हमारे जैसी बातें करे, हमारे जैसा खाना खाए लेकिन फ़िर भी बहुत सूक्ष्म दृष्टि से देखने का प्रयत्न करे तो पता चले कि ये व्यक्ति हम सब से असंग है, कुछ उपर उठा हुआ है। सब के बीच में रहे फ़िर भी अलिप्त रहे, ये पहला लक्षण है। गुरुचरण रज को तुलसीजी ने 'अमिअ मूरिमय' कहा है। अमृत की जड़ीबुट्टी है, जिसका एक मात्र उपदेश हमारे जीवन को जाग्रत करता है। ज्यादातर आदमी मुख की ज्योति को देखता है, गुरु का चेहरा बाद में देखने जाता है। गुरु की चरण-नख ज्योति की वंदना अक्सर मानी गई है। मुख तो उपर है, नख नीचे है। यद्यपि 'ख' शब्द दोनों में समान रूप से उपयोग में आया है 'नख', 'मुख।' 'ख' का एक अर्थ है आकाश।

जिसका मूल जो है, प्रकाश से भरा हुआ है। नख की एक ज्योति है। न जले, न जलाए, केवल शीतल प्रकाश प्रदान करे। और जिसके चरण की रज, जिसका कोई छोटा-सा सूत्र हमारी दृष्टि बदल दे। हमारे जीवन में बहुत बड़ा यू-टर्न लाये। हमारी दृष्टि बिलग ढ़ंग की हो जाय। उसको अंजन के रूप में बताकर गुरुमहिमा का एक ईशारा यहां भी संतों को महसूस हुआ है।

तो मेरे भाई-बहन, मैं गुरु की सीधी-सादी व्याख्या करूं तो इतना ही कहूं, गुरु उसको समझना कि जिसकी आंखों में करुणा हो, जिसके हृदय में प्राणीमात्र के प्रति प्रेम हो और जिसकी जूबां पे सत्य हो। ये तीन वस्तु जहां-जहां अपने अनुभव में आये उसको बुद्धपुरुष समझने में देर नहीं करनी चाहिए। जूबां पे सत्य, दिल में प्यार और आंखों में करुणा ये बुद्धपुरुष की निशानी है। तुलसीदासजी अपने गुरु नरहरि महाराज की वंदना करते हैं। तुलसी कहते हैं, मेरे गुरु दूसरों के लिए मनुष्यरूप है, मेरे लिए तो ये हरिरूप है। तो निष्ठावान आश्रित के लिए गुरु हरि समान है; हरि से बढ़िया है। गुरु वो है जो परमात्मा को उजागर कर देता है। परमात्मा को प्रगट कर सकता है वो गुरु है, वो संत है, वो साधु है। 'रामचरित मानस' में लिखा है कि गुरुजन की पदवी बहुत बड़ी है। लेकिन एक गुरु होना चाहिए।

तुलसी ने गुरुवंदना की। दृष्टि बदली। पूरा जगत ब्रह्ममय है, ऐसा अनुभव होने लगा और क्रमशः सब की वंदना करते-करते तुलसीदासजी श्री हनुमानजी महाराज की वंदना करते हैं।

महाबीर बिनवउँ हनुमाना।
राम जासु जस आप बखाना।।

श्री हनुमानजी की वंदना गोस्वामीजी करते हैं। हनुमान प्राणतत्त्व है। किसी भी प्रकार की साधना करो, हनुमानजी का आश्रय करने से साधना में गति ओर बढ़ती है। ये केवल वाणी विलास नहीं है। कई साधुओं का अनुभव है। मेरे भाई-बहन, कोई गुरु आप की नज़र में ठीक न दिखाई दे तो हनुमानजी को गुरु मान लेना। और भाई, बहन, बेटियां कोई भी 'सुन्दरकांड' कर सकती है। शास्त्रवचन है। इसलिए बहन-बेटियों से खास मेरी प्रार्थना है, ये भ्रामक चीज़ें है। हां, हनुमानजी की कोई विशिष्ट पूजा-पद्धति हो, उसमें कोई नियम हो तो उसको कुबूल करना पड़े। हनुमानजी वायुपुत्र है। हनुमंत तत्त्व सब को छूता है। मैं बहुत जिम्मेवारी के साथ बोलता हूं कि आप 'हनुमानचालीसा' करीए। अद्‌भुत है 'हनुमानचालीसा।' दुनिया की सब से पहली 'चालीसा' 'हनुमानचालीसा' है। मुझे दया आती है तथाकथित महापुरुषों की वो आज उस पर लगे हैं, पीट रहे हैं कि 'हनुमानचालीसा' तुलसीजी ने नहीं की है! वो सिद्ध करने की निरर्थक कोशिश में है! 'गोसांई' शब्द, 'श्री गुरुचरन सरोज रज' ये दोहा 'अयोध्याकांड' के आरंभ में है और 'हनुमानचालीसा' के कितने प्रमाण है! लेकिन अभी वर्तमान में मैं 'रामायण' गाता हूं तो मैं सामना किसीका नहीं करता, हम तो हारनेवाले आदमी है। हम तो 'हनुमानचालीसा' पढ़ते-पढ़ते प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। तुम्हारी तुम जानो!

हनुमानजी का आश्रय खूब करो। कोई प्रतिबंध नहीं होने चाहिए। 'रामचरित मानस' में लिखा है कि जब सीताजी को ख़बर देने गए हनुमानजी रावण-मृत्यु के बाद तब सभी राक्षसियां दौड़कर लंका की आई और हनुमानजी की पूजा करने लगी। जब राक्षसियां भी हनुमानजी की पूजा कर सकती हैं तो मेरे देश की बहन-बेटियां क्यों नहीं? ये भ्रामकता है, उसको सविनय हटाओ और हनुमानजी का आश्रय करो। 'विनयपत्रिका' का सुमधुर पद गाकर हनुमानजी की वंदना करें-

मंगल-मूरति मारुत-नंदन।
सकल अमंगल मूल-निकंदन।।

हनुमानजी की वंदना के बाद सुग्रीव, बिभीषन आदि सखाओं की वंदना आती है और उसके बाद तुलसीजी ने इस क्रम में माँ जानकीजी की पहले वंदना की। उसके बाद राम की वंदना की है। जगत की कन्या, जगत की माता, करुणानिधान की अत्यंत प्रिय पात्र माँ, मैं तेरे दोनों चरणों की वंदना कर रहा हूं। तुम्हारी कृपा से मेरी बुद्धि निर्मल हो। और मेरी बुद्धि निर्मल होगी तो राम मुझे अपनाएंगे। सीता-रामजी की संयुक्त वंदना की और उसके बाद 'मानस' के क्रम में रामनाम की वंदना की। नाममहिमा और नामवंदना का बड़ा प्रकरण तुलसीजी लिखते हैं।

मानस-धनुषजग्य : २ :

इतिहास एक होता है, कथा अनंत होती है

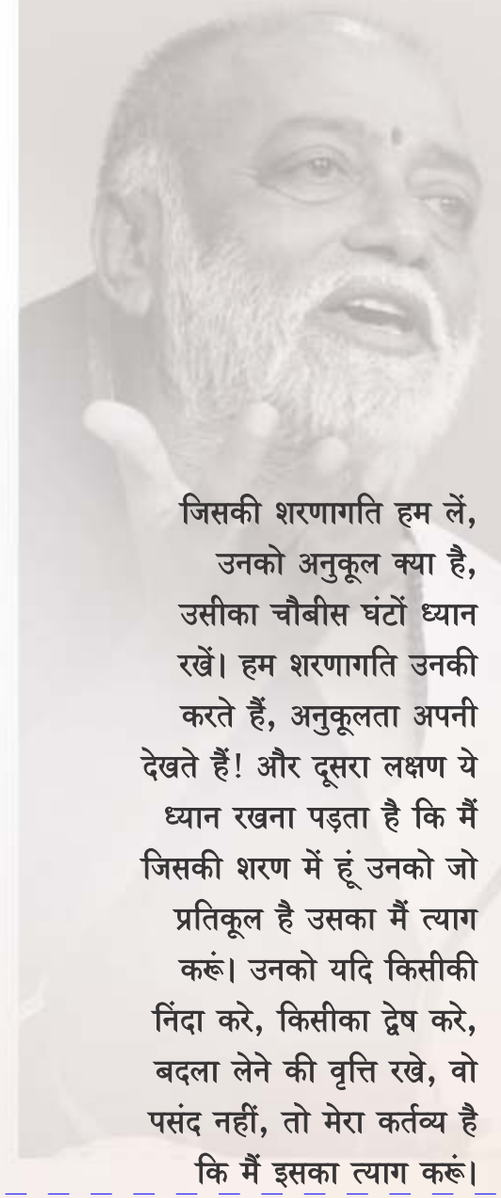

जिसकी शरणागति हम लें, उनको अनुकूल क्या है, उसीका चौबीस घंटों ध्यान रखें। हम शरणागति उनकी करते हैं, अनुकूलता अपनी देखते हैं! और दूसरा लक्षण ये ध्यान रखना पड़ता है कि मैं जिसकी शरण में हूं उनको जो प्रतिकूल है उसका मैं त्याग करूं। उनको यदि किसीकी निंदा करे, किसीका द्वेष करे, बदला लेने की वृत्ति रखे, वो पसंद नहीं, तो मेरा कर्तव्य है कि मैं इसका त्याग करूं।

नव दिवस की इस रामकथा में केन्द्रीय विचार जिस पर होगा वो विषय है 'मानस-धनुषजग्य। तो, प्रशांत और प्रसन्न चित्त से हम और आप संवाद के रूप में इस कथा को आगे बढ़ाएं। आज एक प्रश्न किसी छात्र ने पूछा है कि भगवान राम की लीला-चरित्र ये हकीकत में इतिहास है तो भगवान राम के बारे में पाश्चात्य विद्वान मानते हैं कि यह घटना घटी नहीं है। ये कवि का कल्पन है! छोड़ो! और बात इसलिए करते हैं कि राम अगर हुए ही है तो राम के बारे में इतनी 'रामायण' क्यों? सभी 'रामायण' में कुछ-न-कुछ बिलग-बिलग बातें लिखी है। वाल्मीकि कुछ ओर कहेंगे, तुलसी ओर कहेंगे। सब का अपना अभिप्राय है। इतिहास देश और सीमा में बंधा रहा है। इतिहास जिस देश में घटना घटी उस देश में आबद्ध होता है और उसका एक कार्यकाल होता है। लेकिन उस बनी घटना का भाष्य, व्याख्या, प्रत्येक व्यक्ति अपने ढ़ंग से कहने के कारण ये बिलग-बिलग बातें आती है।

आप 'मानस' में देखिए, उसमें आदि में, मध्य में, अंत में राम ही प्रतिपाद्य है। ओर तो कोई है नहीं। पर जब शंकर पार्वती के सामने कह रहे हैं तो उनका नज़रियां कुछ ओर है। एक ही राम के बारे में उनका विचार, उनका अनुभव, उनकी प्रस्तुति बिलग है। वोही कथा तीरथराज प्रयाग में याज्ञवल्क्य महाराज भरद्वाजजी के सामने कहते हैं, याज्ञवल्क्य अपने ढ़ंग से कथा गायेंगे। उसी कथा को बाबा कागभुशुंडिजी हिमालय में नीलगिरि पर्वत पर खगपति गरुड को और हंसों को सुनाते हैं तब भुशुंडि अपने ढ़ंग से उसका भाष्य करते हैं। फ़िर तुलसीदासजी वोही राम की कथा अपने मन को सुनाते हैं और तुलसीजी ने कई प्रसंगों में इधर-उधर किया है। इन चारों आचार्यों की छाया में बैठकर मेरी व्यासपीठ कथा कहती है तो मेरी प्रस्तुति, मेरा कहना भी कुछ बिलग हो सकता है। और उसका मुझे अधिकार है। आदिवासी 'रामायण' पढ़िये; देहातों में गाई गई, मिथिलांचलों में गाई गई रामकथायें; लोकगीतों में, फ़ोक

सोंग्स में गाई गई कथा वाल्मीकि के आधार पर नहीं चलती; तुलसी के आधार पर नहीं चलती। देहातों में बहन-बेटियां गाती है उनकी 'रामायण' अपनी है। हमारे गुजरात में डांग, पंचमहाल, ये आदिवासी विस्तार है। उनकी अपनी एक 'रामायण' है। उधर थाइलेन्ड जाओ, बेंगकोक जाओ, लंका जाओ, बौद्धों की 'रामायण' भिन्न है। जैनों की 'रामायण' भिन्न है। इतिहास देश और काल में आबद्ध है। लेकिन किसी व्यक्ति का इतिहास जब कथा बन जाता है तब वो देश और काल को अतिक्रमण कर जाता है। दिग्दिगंत में फैल जाता है। राम केवल इतिहास नहीं है, कथा है।

राम अनंत अनंत गुन अमित कथा बिस्तार ।

तुलसीजी कहते हैं, 'अमित कथा बिस्तार' है। भगवान शंकर वोही कथा कहेंगे तो ज्ञान की प्रधानता होगी। याज्ञवल्क्य कथा कहेंगे तो उसमें ज्ञान-कर्म-भक्ति तीनों की छांट होगी। बाबा भुशुंडिजी कथा कहेंगे तो उपासना की पद्धति से कथा कहेंगे। तुलसीजी कथा कहेंगे तो वह शरणागति के घाट पर से कथा कहेंगे। इसलिए कहा गया है, रामकथा कभी गंगा है, कभी जमुना है; रामकथा कभी मंदाकिनी है; रामकथा कभी सरजू है। क्या मतलब? जब शंकर कहेंगे तो ये गंगा है। उनके मस्तिक में से गंगा बह रही है। तो उनके मुख से जो कथा निकलेगी उसमें गंगा की प्रधानता रहेगी। मेरी जिम्मेवारी के साथ कहता हूं, याज्ञवल्क्य कहेंगे तो वह सरस्वती की तरह कहेंगे। प्रयाग में यद्यपि सरस्वती गुप्त है, क्योंकि याज्ञवल्क्य विवेक है। गुरुकृपा से जब याज्ञवल्क्य के सूत्रों को मैं यदि संपादित करूं 'मानस' में से तब मुझे वहां सरस्वती दिखती है। भुशुंडि के वक्तव्य को यदि चुन लिया जाय, तो मानो वहां कर्मप्रधानता है, उपासना है; इसलिए वहां यमुनाजी की सुगंध ज्यादा आती है। और गोस्वामीजी में केवल और केवल शरणागति है।

हमारे शास्त्रों में कहा गया कि आदमी कैसा भी हो, कुछ भी हो पर कभी वो एक तत्त्व का शरणागत हो जाता है फ़िर उसको विश्व में कुछ करने को बचता नहीं। वैसे शरणागति के छः लक्षण है। यद्यपि मैं दो की बात करूं। कोई शास्त्र के आप शरणागत है। कोई ईष्ट के शरणागत है। कुछ बुद्धपुरुष के शरणागत है। कोई मंत्र ऐसा मिला कि आप उसमें डूबे हैं। जिसकी शरणागति हम लें, उनको अनुकूल क्या है, उसीका चौबीस घंटों ध्यान रखें। हम शरणागति उनकी करते हैं, अनुकूलता अपनी देखते हैं! हम संसारी है और जब हम परमतत्त्व की शरणागति धारण करें, उनकी आधीनता कुबूल करे तब पहला ध्यान ये रखना कि उनकी अनुकूलता क्या है? बुद्धपुरुष वो है जो हरेक परिस्थिति को अनुकूल कर लेता है। और दूसरा लक्षण ये ध्यान रखना पड़ता है कि मैं जिसकी शरण में हूं उनको जो प्रतिकूल है उसका मैं त्याग करूं। मैं उस गुरु का शिष्य हूं और मेरे गुरु को ईर्ष्या करना अच्छा नहीं लगता तो मैं इर्ष्या का त्याग कर दूं। मैं जिस महापुरुष की शरण में हूं उसको यदि किसीकी निंदा करे, किसीका द्वेष करे, बदला लेने की वृत्ति रखे वो पसंद नहीं, तो मेरा कर्तव्य है कि शरणागति-धर्म को दृढ़ करने के लिए मैं इसका त्याग करूं। मेरी व्यासपीठ किसीको बाध्य नहीं करती कि आप ये करो, ये करो। मैं विचार देता हूं। निर्णय आप करो क्योंकि वैसे ही आदमी बंधा हुआ है! अपने बच्चों को-परिवारजनों को बांधो मत। प्यार से उनमें पड़ी शक्ति को प्रगट होने दो। धर्म के आचार में जबरदस्ती लादी गई, छोटे बच्चों तक! बच्चों से जबरदस्ती प्रणाम करवाते हैं!

मुझे घटना याद आती है। ओशो रजनीश जब आचार्य थे, घूमते थे। कोई जैन परिवार में उनकी पधरामणी हुई। ओशो भी मूल में जैन थे। यद्यपि उनको कोई बंधन नहीं थे। तो, जैन परिवार में ओशो गये। बच्चा पलने में सोता था। माँ-बाप बच्चे को बलात् जगाने लगे कि चलो, उठो, धर्म-लाभ लो, चरण छूओ! कई माँ-बापों को बच्चों को पुण्यात्मा बना देने की जल्दी है! कई धर्मात्मा भी, पूरे जगत को धर्मात्मा बनाने की होड़ लगी है! तो, उसी समय रजनीशजी खड़े हो गये और इतना ही कहते गये कि इस परिवार में एक चेतना स्वतंत्र थी उसको भी तुमने पराधीन कर दिया! मैं जा रहा हूं। हां, बच्चों को प्रेम से हमारी प्रवाही परंपरा सिखायें, लेकिन जबरदस्ती न करे। उसको तोड़े-मरोड़े ना! हमारे यहां कुछ शताब्दियों से ऐसी स्थिति आई कि मार-पिट करके धर्मात्मा बनाओ!

तो, मेरा कहना है, ऐतिहासिक राम काल-सीमा में आबद्ध हैं लेकिन उसकी कथा अनंत है। तुलसी

उसको शरणागति के घाट पर ये बात प्रस्तुत करेंगे। इन्हीं आचार्यों की छाया में बैठकर जब मैं इस माँ की भूमि में बैठकर देहाती आंचल में कथा कर रहा हूं तब वो ही राम की कथा मेरे गुरु ने जो बातें कही होगी उसके अनुकूल मैं प्रस्तुत करूंगा। क्योंकि इतिहास एक होता है लेकिन कथा तो अनंत होती है। तो जो छात्र ने मुझे प्रश्न पूछा है, मेरे हिसाब में यही जवाब है। तुलसी की पंक्ति बड़ी प्रसिद्ध है-

हरि अनंत हरि कथा अनंता।
कहहिं सुनहिं बहुबिधि सब संता ।।

मैं मेरी जिम्मेवारी से बातें कह रहा हूं, कोइ दबाव नहीं कि मानो ही! बहुत बड़ी मुश्किल हमारे देश में हो गई कि हमने धर्म को आदेश के रूप में थोप दिया! 'आदेश' शब्द अच्छा है, जरूर। हमारी उदासीन परंपरा में 'आदेश' शब्द माना जाता है। नाथ संप्रदाय में 'आदेश, आदेश।' पर वहां दिया कम जाता था, मांगा ज्यादा जाता था। अब क्या है? दिया ज्यादा जाता है, मांगने कि मानसिकता कम है! शिष्य जाता था तो कहता, 'हम को कोई सेवा दो, हुकम दो।' अब थोड़ा उल्टा हो गया है! चेला मांगे न मांगे, गुरु कहता है, 'आदेश।' 'आदेश' शब्द आश्रित की ओर से आना चाहिए। और ये नई पीढ़ी में आने लगा है उसका मैं स्वागत करता हूं। मैं इतनी सालों से घूम रहा हूं 'मानस' को लेकर। मैने नई पीढ़ी में देखा है, मेरे पास आने लगे कि बापू, कोई आदेश? हम कुछ करें? मैं किसीको आदेश करूं तो मान ही लेंगे। अवश्य मान लेंगे। कौन मना करेगा? व्यासपीठ प्रति लोगों की इतनी श्रद्धा हैं। लेकिन श्रद्धा का दुरुपयोग करने का मोरारिबापू को जरा भी अधिकार नहीं। किसी की भी श्रद्धा अमूल्य है, उसका दुरुपयोग न हो। धर्म से आदेश मांगे। हम धर्म के नाम पर आदेश देते जाते हैं! ये करो, ये करो! बहुत परिवर्तन करना पड़ेगा। इक्कीसवीं सदी में धर्म की मूल धारा की ओर जाना जरूरी लगता है।

तो, भगवान राम प्रगट होते हैं। फ़िर ब्याह करके अयोध्या में वापस लौटते हैं। इनके बीच नव यज्ञ की बात आती है। और बिलग-बिलग संदर्भ में उसकी यज्ञ-प्रक्रिया आप को कहना चाहता हूं। पहली बात, भगवान राम प्रगट हुए तब एक यज्ञ करवाना पड़ा जिसका नाम है पुत्र-कामेष्टि यज्ञ। मेरे राम की यात्रा का आरंभ ही यज्ञ से है। तो, दशरथजी का वारसदार कोई नहीं है। चिंतित हुए। गुरुद्वार जाते हैं। हमारे जीवन में कोई समस्या हो; आदमी जितना बड़ा उसकी इतनी ही समस्या बड़ी होती है, दिखती नहीं। याद रखना, जितनी ऊंचाई उतनी समस्या की ऊंचाई। उसी समय गुरुकृपा और हरिनाम की निष्ठा से टिके रहना। और एक वस्तु याद रखना, मनोवैज्ञानिक सिद्धांत है, जिस वस्तु पर आप ज्यादा ध्यान दोगे उस वस्तु ज्यादा वज़नदार हो जाती है। कृपया कुछ वस्तु पर ध्यान ही मत दो। ध्यान दिया उसको प्रोत्साहन मिल जायेगा। प्रत्येक व्यक्ति, प्रत्येक घटना अपनी ओर आकर्षित करती है। यह मनोविज्ञान है। समस्या किसके जीवन में नहीं होती? दशरथजी की मुश्किल में 'रामचरित मानस' में बहुत बड़ा मार्गदर्शन दिया। किसी के सामने आप अपनी पीड़ा, वेदना, समस्या न कह सको तब कभी कोई गुरु के पास पहुंचना। उसको अपने जीवन की बातें बताना। गुरु को राजा ने पूछा, 'मेरे भाग्य में पुत्रसुख नहीं है?' तब वसिष्ठजी ने कहा, राजन्! थोड़ा धैर्य धारण करो। आप को चार पुत्रों की प्राप्ति होगी। और सामान्य नहीं, त्रिभुवन में विख्यात, उजागर ऐसे चार पुत्र आप के यहां होगे। लेकिन तुलसीजी बहुत सावधानी से टुकड़ा जोड़ते हैं। दुनिया में प्रसिद्ध लोग तो कई होते हैं लेकिन दूसरों के भय हरनेवालें कम होते हैं। ये दादाजी का अर्थ है; त्रिभुवनदादा का अर्थ है कि बेटा, जगत में विदित होना एक बात है पर दूसरों के कष्ट और भयहरन करना दूसरी बात है। दशरथ, तुम्हारे चार पुत्र त्रिभुवन में विख्यात तो होंगे लेकिन दूसरों की पीड़ा हरे यह महत्त्व का है। लेकिन राजन्, एक यज्ञ करवाना पड़ेगा।

सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा ।
पुत्रकाम सुभ जग्य करावा ।।

यह पुत्रकाम यज्ञ है। 'रामचरित मानस' का आरंभ यज्ञ से होता है। कुछ आहुत करना है। कुछ देना है, किसीके लिए उपयोगी होना है। यज्ञ से आरंभित प्रभु राम का जन्म; पूरी जीवनी यज्ञमय राघव की। तो एक यज्ञ मूल में पड़ा है पुत्रकामेष्टि यज्ञ।

दूसरा यज्ञ मेरी जिम्मेवारी के साथ कहूंगा, रामजी का यज्ञ है निर्वाण-यज्ञ। यज्ञ की परिभाषा, यज्ञ

का अर्थ है सीधा-सादा कि जिसमें कुछ देना है। आज तक यज्ञ में घी डालना होता है। देहातों के भाई-बहन, आप खेतों में बीज बोते हो न, वह यज्ञ है। आप को वेद-मंत्र से यज्ञ करने की जरूरत नहीं। मौसम आती है, हल जोतते हो और समय पर अपने खेत में जो बीज़ बोते हो वो आप का कृषि-यज्ञ है। वो ऋषि-यज्ञ है कि जिसमें 'सृंगी रिषिहिं बसिष्ठ बोलावा।' हम देहाती कहां से ब्राह्मण बुलायेंगे, कहां से दक्षिणा लायेंगे, कहां से वेद-मंत्र लायेंगे? सामग्री का लंबा लिस्ट होता है! हमारी क्षमता नहीं कि ला पायें। मैं तो उपुरोहित वृंदों से कहूं कि कोई छोटा आदमी अपने घर में छोटा-बड़ा यज्ञ करवाना चाहे तो लिस्ट थोड़ा छोटा देना। देवताओं के आठ आसन के बदले एक आसन लगाओ तो हो जाय। एक हनुमान को बिठाओ तो सब देव आ जाय!

मैं दसवीं श्रेणी जब पढ़ता था तो मेरे हिन्दी सिलेक्सन में एक लेसन आता था। उसमें एक घर में एक बिल्ली थी, उसको लाठी मारी तो बिल्ली मर गई तो हाहाकार हो गया! पंडित को बुलाओ। धर्मज्ञ को बुलाओ, बिल्ली मर गई! कितना बड़ा पाप हो गया! प्रायश्चित्त कैसे करें? पंडित आए। बोले, अरे! ये बड़ा पाप हो गया! शास्त्र में इसका बहुत लंबा-चौड़ा प्रायश्चित्त है। जितने वजन की बिल्ली है उतने वजन की चांदी की बिल्ली बना करके आप मुझे दान करोगे तभी इस पाप से मुक्त हो जाओगे। वर्ना बिल्ली मरी ऐसे बच्चे मरने लगेंगे! कैसी भाषा, कैसा डराना? धर्म वो है जो अभय करे; भयभीत करे वो धर्म नहीं, धर्म का नाटक है! पूरा परिवार रोने लगा। बिल्ली तीन किलो की थी। पंडितजी ने संबंध की सोचके राहत करने को कहा। बोले, एक किलो की करो, बाकी का मैं मंत्र बोलकर पूरा कर दूंगा। परिवार ने असमर्थता दिखाई तब पंडित ने ओर कम किया। ऐसा करते कुछ प्रामाणिक बात पर बात आई। इतने में वो बिल्ली जागी, मरी नहीं थी!

छोटे-छोटे आदमीओं को धर्म-क्रिया करनी है तो कम साधन जोड़ने को कहो। फूल न मिले तो अक्षत से काम चलाना। लंबे-चौड़े लिस्ट नहीं देने चाहिए। लेकिन मेरे भाई-बहन, आप-मैं देहात में रहते हैं। मैं भी देहात में रहता हूं। आप जो कृषियज्ञ करते हैं उस कृषियज्ञ की महिमा आप को होनी चाहिए। आप बीज़ बोते हैं। मकाई

बोओ, जुवार बोओ, जो बोओ ये जग्य है। आप को चिंता करने की जरूरत नहीं है। आप को स्नान करना चाहिए। स्नान करके अच्छे कपड़ें पहने ये ठीक है। और वो भी न हो तो आप सूर्य की उपस्थिति में धूप में तपते हैं और शरीर में श्रम करते समय पसीना होता है वो आप का स्नान ही है, साहब! बाकी चिंता छोड़ो! व्यवहारु होना चाहिए। बाप अपनी बेटी को बिदा देता है। किसी वर के हाथ में कन्या दे ये उनका जग्य है। मैं यहां वाणी का जग्य करता हूं। इसलिए रामकथा को मैं प्रेमजग्य कहता हूं। ये जग्य है। आप कोई गरीब विद्यार्थी को स्कूल में उनकी फी भर दो कि बेटा, तू तेजस्वी है, जा पढ़। तो तुमने जग्य किया है। आप किसी भूखे चार-पांच व्यक्ति गरीब है उनके वाली बनकर पता ना लगे ऐसे उनके घर में चावल दे दो तो ये तुम्हारा जग्य है। बहुत घी जग्यकुंड में डालने की जरूरत नहीं है। भूखे के पेट में डालने की जरूरत है। मैं फ़िर एक बार प्रार्थना करूं कि हां, आप कथा सुनो, समझ में आये तो ठीक है। मैं जितना हो सके आप से सरलता से बातें करूंगा। लेकिन समझ में न आये तो भी चिंता नहीं। यहां दूसरा एक जग्य चल रहा है। भोजन का-प्रसाद का। वो आप जरूर ग्रहण करियेगा। प्रसाद लेना ये भी एक जग्य है। बस, यहां भोजन बनानेवाले थक जाय इतना भोजन करो! प्रसाद महत्त्व का है। हमारे पेट में अग्नि जल रहा है, उसमें एक भोजन की आहुति ये भी एक जग्य है।

तो, जहां कुछ देना है वो जग्य है। आप किसी हार गये आदमी को कंधे पे हाथ रखकर अच्छी सलाह दो वो भी एक जग्य है। एक मरीज़ को थोड़ी दुआ दो, थोड़ा ईलाज करवा दो वो भी जग्य है। ये सब जग्य प्रक्रिया है जिसमें देना हो, लेना कुछ नहीं। लेना है प्रसन्नता, तसल्ली। परमात्मा ने मुझे अवसर दिया और मैंने दिया। तो एक जग्य तो ये था पुत्र कामेष्टि जग्य। राम का प्रागट्य हुआ। दूसरा जग्य जिसको मैं निर्वाण-जग्य कहता हूं। ये मेरी अदा है। मेरी प्रस्तुति है। गुरुकृपा से मैं निमित्त बनकर ये बातें कहना चाहता हूं। निर्वाण-जग्य राम ने किया। जिसमें आहुति बाण की डाली गई क्योंकि तुलसीदासजी ने 'मानस' में बाण को आहुति का रूपक दिया है कि बाण आहुति है। परशुराम के प्रसंग में सर को आहुति माना गया है। ताड़का, सुबाहु और अरधा-परधा मारीच और अन्य राक्षसों को भगवान राम ने विश्वामित्र के संग सिद्धाश्रम की यात्रा शुरू करते हैं तभी निर्वाण दिया उसे मेरी व्यासपीठ निर्वाण-जग्य कहती है। जो मुक्ति का जग्य था। परमात्मा इस आसुरी शक्तिवालों को निज पद देने लगे। उसको भी मैं जग्य की संज्ञा देना चाहता हूं।

तीसरा जग्य विश्वामित्र का जो सफल करना था। विश्वामित्र महाराज जो अनुष्ठान करते थे और राक्षस लोग बाधा डालते थे उसमें। भगवान ने वो जग्य पूरा कर दिया। जग्यरक्षा के लिए राम गये हैं, ये तीसरा जग्य। इसके क्रम में चौथा जग्य, अहल्या का उद्धार भगवान राम ने जो किया वो भी जग्य है। तो अहल्या धीरज रखकर बैठ गई; ये भूल हो गई खुद से किसी कारणवश। फ़िर गौतम ऋषि ने शाप दिया कि तेरी बुद्धि जड़ हो गई। तू शीला हो जा, पथ्थर हो जा, जड़ हो जा। फ़िर अहल्या पथ्थर हो गई। उसको दो नाम देना चाहूंगा; एक, धैर्य-जग्य। मेरे भाई-बहन, कभी-कभी जीवन में धीरज रखते हैं हम वो भी एक जग्य बराबर है। हम संसारी है, जीव है, हम से भूल हो जाय। बड़े-बड़े ऋषि-मुनिओं ने भूल की है! लेकिन धैर्य रखकर बैठो। कोई स्वीकार करनेवाला आ जायेगा। अहल्या का प्रकरण बड़ा ढ़ाढ़स देता है। बड़ा धैर्य है उसको। दूसरा नाम देना चाहूं तो चैतन्य-जग्य। कोई हारे हुए व्यक्ति में पुन: चेतना प्रगट करे; बेहोश को होश में लाना; मूर्छित को पुन: जाग्रत करके समाज में स्थापित करना ये जग्य है। राघव ने अहल्या के जग्य को इस रूप में पूरा किया। गिरे हुए को संभालना। साहस तो चाहिए, हिंमत तो चाहिए। भगवान राम ने ये करके दिखाया। मैं आप से एक ओर बात कहूं इस प्रसंग पर कि गुरु सब कुछ नहीं देता। कुछ बातें शिष्य को गुरु के घर से चुराई जानी पड़ती है। गुरु सब कुछ नहीं देता। कुछ चुरा लो। और ऐसी चोरी जिसको आ जाय वो शिष्यों में बहुत आगे चला जाता है। इसका मतलब धोती-कुरता चोर लेना, उसकी माला-कंठी चोर लेना नहीं! ये फ़िर गलत मेसेज़ नहीं जाना चाहिए। लेकिन तुम्हारे में हिम्मत हो तो उसके धैर्य की चोरी करो। उसके विवेक की चोरी करो। उसके शील की चोरी करो। उसकी नजरों की चोरी करो

कि वो दुनिया को किस रूप से दिखता है। उसकी बोली की चोरी करो। उसकी हर अदाओं की चोरी करो। गुरु के कोने-कोने की चीज़ को एक बार देख लो और ले लो। आज अहल्या ने गौतम का धैर्य ले लिया। अहल्या के प्रकरण को दो नाम दूंगा, धैर्य-जग्य और एक ऐसा जग्य कि हारे हुए एक पतीत, जो सब आशा जिसकी खो गई थी उसको रामजी ने पुन: स्थापित किया। यही चौथा जग्य है।

पांचवां जग्य; भगवान राम मिथिला पहुंचे विश्वामित्र के संग। फ़िर सायंकाल जनकपुर के दर्शन के लिए अथवा दर्शन देने के लिए जनकपुर में निकलते हैं। वो मेरी दृष्टि में था सौंदर्य-जग्य। सौंदर्य की लूंट चली जैसे प्रभु की रूप माधुरी का ये जग्य। भगवान ने अपना रूप बांटा है। ये सौंदर्य-जग्य है। जनकपुर में छा गया राम का रूप पूरी मिथिला में, ये रूप-जग्य है। रूप माधुरी का ये जग्य, पांचवां जग्य। आगे बढ़ें एक जग्य के लिए। ये पुष्पवाटिका का जग्य। ये है प्रणय-जग्य। एक-दूसरे के मन को चोरा है। ये पुष्पवाटिका का जग्य है प्रेम-जग्य, प्रणय-जग्य। मैं रामकथा को प्रेम-जग्य कहता हूं। ये ज्ञान-जग्य नही। ज्ञान की अपनी औकात भी नहीं है। ज्ञान तो बड़े-बड़े ऋषि-मुनिओं कथन कर सकते हैं। ये हमारा प्रेम-जग्य है। एक-दूसरे को समर्पित होते हुए वक्ता श्रोता का हो जाय, श्रोता वक्ता का हो जाय ये प्रेम-जग्य है। न मैं आप से दूर रहूं, न आप मुझ से। ये है परस्पर एकता का जग्य। वक्ता श्रोता की मानसिकता पकड़ ले और श्रोता वक्ता की मनोदशा आत्मसात् कर ले नव दिवस में कि आदमी की मानसिकता क्या है? मेरी व्यासपीठ अपनी जिम्मेवारी के साथ कहना चाहेगी। पुष्पवाटिका का प्रसंग है प्रणय-जग्य और फ़िर जो मूल जग्य की बात है धनुष-जग्य। ये सातवां जग्य है। आठवां जग्य है परशुराम महाराज का समर-जग्य। और नववां जग्य ये विवाह का जग्य है। जिसमें वेदियां के चारों ओर दुल्हा-दुल्हन फ़ेरे लेते हैं।

तो बाप! 'मानस-धनुषजग्य', जिसकी कुछ विशेष रूप में सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा संवाद के रूप में हम करते हैं। कथा के क्रम में कल आप के सामने हनुमानजी की वंदना पर छोड़ा था। उसके बाद सीतारामजी की वंदना तुलसीदासजी ने की 'मानस' के क्रम में। उसके बाद नव दोहें में तुलसीदासजी ने भगवान के नाम की महिमा का गायन किया। परमात्मा के कई नाम हैं। परमात्मा के हजारों नाम है। लेकिन गोस्वामीजी हम सब को कहते हैं कि मैं इन सभी नामों में रामनाम की वंदना करता हूं। दूसरे नाम की निंदा नहीं करता हूं। पर मेरा मंत्र रामनाम है इसलिए मैं उसकी महिमा गाता हूं। बाकी सब नाम की महिमा है। और बात भी सही है बाप! रामनाम महामंत्र है।

मैं तो देहाती भाई-बहनों को यही कहूं कि हम लोग जग्य नहीं कर पायेंगे। हम लोग खेत मजूरी करते हैं। कहां पूजा-पाठ करेंगे? हम कहां योग साधना करें? कहां समाधि, ध्यान-धारणा ये हम कहां करेंगे? तुलसीदासजी ने सिखाया, कुछ करने की जरूरत नहीं। आप केवल हरिनाम लो अथवा तो आप के मन में जो नाम की रुचि हो, जिस नाम में श्रद्धा-प्रीति हो, परमात्मा का नाम लो। कलियुग में और विशेष कुछ करने की जरूरत नहीं, केवल नाम। तुलसीजी ने कहा, कलियुग में मात्र एक उपाय है हरिनाम। रामनाम, परमात्मा का नाम। मैं रामनाम कहूं तब केवल राम ही मेरे दिमाग में नहीं है। आप को जिस नाम में निष्ठा हो, आप वो नाम लें; आप को मुबारक।

मेरे भाई-बहन, मैं इतना कहकर आगे बढ़ूं, ओर साधना जटिल-कठिन है। परमात्मा के नाम की साधना तुलसीदासजी के मुताबित राजमार्ग है। इसमें कोई भीड़ नहीं है, ट्राफ़िक जाम नहीं होता। ये सिक्स लेन मार्ग है क्योंकि रामनाम छ शास्त्रों का सार है। तो मेरे भाई-बहन, हरिनाम का खूब आश्रय करो। कोई गुरु न मिले तो 'रामचरित मानस' के पास तुम्हें जो नाम पसंद हो वो एक चिठ्ठी में लिखकर फ़िर चिठ्ठी उठा लो, 'रामायण' सद्गुरु बनेगा। या तो हनुमान के पास रखकर मंत्र प्राप्त किया जा सकता है वर्तमान कोइ गुरु न दिखे तो। मंत्र में बहुत विधि होती है। नाम में विधि की जरूरत नहीं पड़ती, विश्वास की पड़ती है। प्रभु का नाम कलियुग की प्रधान साधना है।

उसके बाद गोस्वामीजी 'मानस' के परम पावन इतिहास की स्मृति कराते हैं कि 'रामचरित मानस' की सब से पहले शिवजी ने रचना की। वाल्मीकिजी ने 'वाल्मीकि रामायण' लिखा वो आदि कवि है। महादेव अनादि कवि है। यही कथा शिवजी ने कागभुशुंडि को दी और ये कथा कागभुशुंडि ने गरुड के सामने गाई। वोही कथा जमीन पर ऊंचाई से नीचे आई महाराज याज्ञवल्क्य के पास और याज्ञवल्क्यजी ने ये कथा भरद्वाजजी की जिज्ञासा पर तीरथराज प्रयाग में सुनाई। वो ही कथा तुलसीदास कहते हैं, मेरे कृपालु गुरुदेव ने मुझे बार बार ये कथा सुनाई तब मेरी बुद्धि में ये कथा बैठी और तब मैंने भाषाबद्ध करने की ठान ली और मेरे मन को बोध हो इसलिए भाषा में उतारा। रामकथा की रचना हुई। तुलसीदासजी ने एक रूपक बनाया। एक सरोवर के चार घाट होते हैं वैसे मानसरोवर के चार घाट बनाये। एक घाट का नाम ज्ञानघाट, जहां शिव पार्वती को कथा सुनाये। दूसरा घाट उपासनाघाट, जहां कागभुशुंडि गरुड को कथा सुनायें। तीसरा घाट कर्म का घाट, जहां याज्ञवल्क्यजी भरद्वाजजी को कथा सुनाये और चौथा घाट शरणागति का घाट, जहां तुलसीदासजी स्वयं अपने मन को कथा सुनाते हैं।

शरणागति के घाट से तुलसी ने कथा शुरू की फ़िर हमें ले चलते हैं कर्म के घाट पर। एक बार कुंभमेला लगा। महात्मा लोग बिदा होने लगे उसी समय परम विवेकी याज्ञवल्क्य ने बिदा मागी तब भरद्वाजजी ने चरण पकड़कर रोक लिया, मेरे मन में एक जिज्ञासा है कि रामतत्त्व है क्या? प्रश्न सुनकर याज्ञवल्क्य प्रसन्न हुए। याज्ञवल्क्यजी ने प्रयाग में अपनी कथा शुरू की शिवकथा से। तुलसीदासजी ये कहना चाहते हैं कि जिसको शिव की कथा में रुचि नहीं उसको रामकथा का अधिकार नहीं। पहले शिव के प्रति भाव जगे तभी रामकथा हो सकती है। शिव मानी विश्वास। विश्वास न हो तो रामकथा शुरू नहीं हो पाती।

तो, शिवकथा शुरू की। कुंभज ऋषि के आश्रम में शिव और सती आये। तो कुंभज खड़े होकर चरणों में प्रणाम करके पूजा करने लगे कि महाराज, धन्य भाग आप पधारें! जैसे कुंभज ऋषि पूजा करने लगे तब सती को एक प्रश्न उठा कि घड़े से जिसका जनम हुआ हो वो समुद्र जैसी कथा कैसे गायेगा? और शंकरजी ने इसी घटना का अच्छा अर्थ निकाला कि महात्मा कितने सरल है! सुंदर कथा का गायन कुंभज ऋषि ने किया। भगवान ने विश्वास से कथा सुनी। सती ने बुद्धि लेकर कथा सुनी। इसलिए वो कथा का रस प्राप्त नहीं कर पाई!

शिव और सती वापस लौट रहे थे। रास्ते में दंडकवन से पसार हुए। और वर्तमान त्रेतायुग में रामलीला चालु थी। मानवलीला करते हुए सीता के वियोग में राम रोते हुए निकले, लक्ष्मण उसको ढ़ाढ़स देते हैं। ऐसे रूप में शंकर ने राम का दर्शन किया। 'हे सच्चिदानंदन' कहके परमात्मा की लीला में कोई विघ्न न आये इसीलिए दूर से प्रभु को प्रणाम किया। सती ने भी देखा, मेरे भगवान उनको सच्चिदानंद कहकर प्रणाम करते हैं तो ये क्या ब्रह्म है? ये तो रो रहा है! सती अनिर्णित है। सती के मन की बात शिव जान गये और भगवान शिव सती से कहते हैं कि देवी, मेहरबानी करके ब्रह्म पर संदेह मत करो। ये ब्रह्म है। भगवान शंकर ने इतने विश्वास रूप से समझाया लेकिन सती को उपदेश नहीं हुआ! शिवजी सती से कहते हैं देवी, आप का तर्क ठीक नहीं फ़िर भी राम ब्रह्म हैं कि मनुष्य, आप पक्का करना चाहती हैं तो परीक्षा करें। सती तैयार हो गई। मैं समाज को करबद्ध कहता हूं, जहां तक हो, मन में संदेह पैदा मत होने देना क्योंकि संदेह पैदा हो जाता तो संदेह का परिणाम मृत्यु के सिवा कुछ नहीं आता। सती राम की परीक्षा लेने के लिए जाती है। सती ने सीता का रूप लिया। पकड़ी जाती है। पछताई। भगवान ने ऐश्वर्य दिखाया। चारों ओर राम ही राम थे! सती लौट आती है। सती झूठ बोली कि मैंने कोई परीक्षा नहीं की। आदमी एक भूल करता है तो दूसरी छुपाने के लिए कई भूल कर देता है! भगवान शंकर ने ध्यान धरकर पूरी घटना देखी, 'सती ने सीता का रूप लिया! सीता तो मेरी माँ है। तो आज से सती भी मेरी माँ मानी जायेगी।' शिवजी अपनी प्रतिज्ञा को ध्यान में रखते भवन में न गये और बाहर आसन डालकर बैठे। शिवजी समाधि में बैठ गये। सत्तासी हजार साल बीते जाते हैं। फ़िर शिवचरित्र का प्रसंग आगे बढ़ता है।

जीवन के हर मोड़ पर परमात्मा है

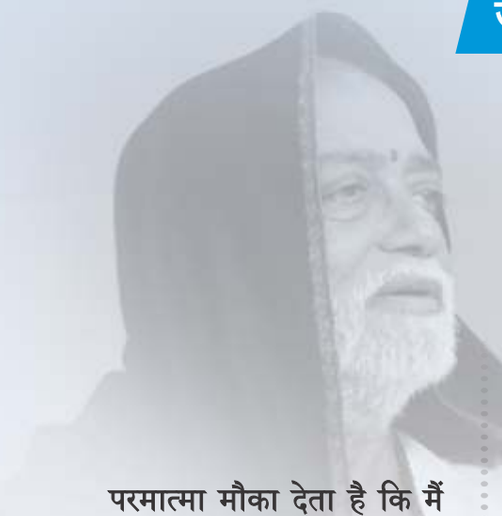

परमात्मा मौका देता है कि मैं हर मोड़ पर खड़ा हूं, चुकना मत। मैं कभी कोई गरीब के आंसू लेकर खड़ा हूं; कभी भूखा पेट लेकर खड़ा हूं; कभी नाचता हुआ खड़ा हूं। कई मरीज़ के रूप में खड़ा हूं। हर मोड़ पे ठाकुर मौजूद है। सत्संग यही काम करता हैं, रामकथा यही काम करती हैं कि इस प्रकार की विवेक दृष्टि आ जाए। मेरी समझ में नहीं आ रहा कि ईन्सान जीवंत परमात्माओं को धक्का क्यों दे रहा है?

'मानस-धनुषजग्य', जिसको हम केन्द्र में रखते हुए उसकी कुछ विशेष तात्त्विक-सात्त्विक चर्चा संवाद के रूप में कर रहे हैं। भगवान राम लक्ष्मण को लेकर विश्वामित्रजी की यज्ञ रक्षा के लिए अपने आश्रम में आए। यज्ञ पूरा हुआ। उसके बाद धनुषयज्ञ देखने की बात जब विश्वामित्रजी ने कही तब भगवान राम विश्वामित्र के संग हर्षित होकर जनकपुर की यात्रा के लिए चल पड़ते हैं। मैंने शायद पहले दिन भी कहा कि विश्वामित्रजी को पता लग गया हैं कि जिस तत्त्व को प्राप्त करने के लिए आदमी जप, तप, साधना, यज्ञ, ध्यान, धारणा, समाधि, दुनिया के जितने भी साधन हो परम को पाने के ये सब करने के बाद जो परमतत्त्व प्राप्त होता है वो परमतत्त्व राम मुझे प्राप्त हो चुके हैं। फ़िर भी राम के आग्रह के कारण वो यज्ञ का आरंभ करते हैं और भगवान यज्ञ पूरा कर देते हैं। इसीलिए रामजी को विश्वामित्रजी बहुत आदर के साथ संबोधन करते हैं। सादर का अर्थ होता हें श्रद्धा समेत। विश्वामित्र महाराज गुरु होते हुए राम को सादर कह रहे हैं; श्रद्धा समेत कह रहे हैं। ये प्रमाण है कि विश्वामित्रजी पूर्ण रूप में जान चुके हैं कि राम परमात्मा है। परम ब्रह्म है।

तीन शब्दों पे ध्यान देना। ये दो पंक्तिओं में एक तो 'सादर' शब्द आया। दूसरा शब्द विश्वामित्रजी रामजी को 'प्रभु' कहते हैं। और राम को 'नाथ' कहते हैं। प्रभु समर्थ को कहा जाता हैं। प्रभु का सीधा-सादा अर्थ, शब्दकोशीय अर्थ है, जो समर्थ है। कोई काम करना है वो करके दिखा दे, उसका नाम समर्थ हैं। जो नहीं करना हैं वो न करके दिखाते हैं, उसका नाम समर्थ है। 'कर्तुम्, अकर्तुम्, अन्यथा कर्तुम्', उसको समर्थ की परिभाषा में हमारे शास्त्रों ने डाला। प्रभु मानी समर्थ। विश्वामित्रजी रामजी को समर्थ कहते हैं। विश्वामित्रजी ने अपनी नजरों के सामने देखा कि एक ही बाण की आहुति से ताड़का का प्राण प्रभु में विलीन हो चुका। ये प्रभु हैं, ये पता लग गया। खुशामत से किसीको 'प्रभु',

'प्रभु' मत कहो। ठीक है, विनोद में कह दो, बात ओर है। जैसे बनारस में आप जाओ तो कोई भी किसी को 'गुरु' कहता हैं, 'गुरु, कैसे हो?' 'गुरु, क्या चल रहा है?' 'गुरु, धंधा कैसा चल रहा है?' गुरु और धंधा! मेरी समझ में नहीं आता! गुरु होगा वहां धंधा नहीं होगा। धंधा होगा वहां गुरुपद नहीं होगा। गुरु तो साक्षात् धर्मविग्रह होता है। गुरु मानी साक्षात् धर्म। और धर्म मानी सत्य, प्रेम और करुणा। मैं उसी को धर्म मानता हूं जहां सत्य है; जहां प्रेम है; जहां करुणा है।

आज मेरे पास एक प्रश्न है कि आप के साथ कायम कौन रहता है? मेरे साथ कायम मैं ही होता हूं, दूसरा कोई नहीं होता। कोई नहीं साहब, कोई भ्रांति में न रहे। मेरे कोई निकट नहीं हैं, मैं किसीसे दूर नहीं हूं। ये मेरा विश्व के चौखट में डीम-डीम घोष है। कोई अपना परिचय ऐसे दे दे कि मैं बापू से बहुत क्लोझ हूं तो उनका प्रपंच है! और याद रखना, प्रेम करनेवाला कभी प्रपंच नहीं कर सकता। प्रपंच करनेवाला कभी प्रेमी हो ही नहीं सकता। इम्पोसिबल। टोटली इम्पोसिबल। मेरे साथ कायम कोई नहीं है। आते हैं, गाते हैं; कोई कायमी नहीं है। कब किसीका रास्ता मुड़ जाय, कब कौन कहां जाय, क्या जाने! मेरे साथ मैं ही हूं। और मेरी 'रामचरित मानस' की पोथी है। मेरे साथ रहने में आप के सामने प्रलोभन बहुत आयेंगे। उस प्रलोभन से बचना। गुजराती में पंक्ति है-

प्रलोभन आवशे झाझां तमारी संत यात्रामां।

रावत भगत का गीत है। प्रलोभन बहुत आयेंगे। आप के फ्रेन्ड्झ बहुत बन जायेंगे। आप किसीके फ्रेन्ड्झ बन जायेंगे। व्होट्स एप पर, फेईस बूक पर, ईधर के फोटो ईधर! दुनियाभर के रिश्ते-संबंध आप बना लोगे। फ़िर ऐसे-ऐसे आप विस्तार करोगे। प्रलोभन बहुत आयेंगे और जो भक्ति, जो समर्पण लोभ और भय से होता हैं वो मरने में देर नहीं होती।

मुझे आज अच्छा प्रश्न पूछा है, 'बापू, बोध होने की पहचान क्या है?' समझकर बुद्धु हो जाना। इससे अतिरिक्त कोई बात नहीं। समझकर छले जाना। कोई छले, मुस्कुराते हुए छले जाना। कोई तुम्हारे सामने पाखंड करे, तुम्हारी ईर्ष्या करे। तुम जानते हो, तुम सत्य हो, फ़िर भी मुस्कुराते हुए छले जाना। निवेदन कठोर है मेरा, बुद्धु हो जाना। जो बुद्धपुरुष हो जाते हैं, ये बुद्धु की तरह जीते हैं। कोई पथ्थर मारे, मुस्कुराए। बुद्ध के पास एक आदमी गया, बहुत थूका! बुद्ध ने पोंछा तक नहीं!

मैं कल कहता था कि परमात्मा मौका देता है कि मैं हर मोड़ पर खड़ा हूं, चुकना मत। मैं कभी कोई गरीब के आंसू लेकर खड़ा हूं; कभी भूखा पेट लेकर खड़ा हूं; कभी नाचता हुआ खड़ा हूं। कई मरीज़ के रूप में खड़ा हूं। हर मोड़ पे ठाकुर मौजूद है। सत्संग यही काम करता हैं, रामकथा यही काम करती हैं कि इस प्रकार की विवेक दृष्टि आ जाए। आप एक छोटा-सा पथ्थर कहीं रास्ते में रख दो। फ़िर किसीने सिंदूर लगा दिया; हनुमान बना दिया, माताजी बना दिया तो आप उसको ठुकराओगे नहीं। स्वाभाविक है तुम्हारी आस्था। मेरी समझ में नहीं आ रहा कि ईन्सान जीवंत परमात्माओं को धक्का क्यों दे रहा है? बिहार को मैं इस रूप में मैं देखता हूं। पूरे मुलक, पूरे विश्व को मैं इस रूप में देखना चाहता हूं। कभी गांधीजी ने कहा था, कभी रमण महर्षि ने कहा था कि अभागा मानव मेरा ईश्वर हैं। कौन ईश्वर? राम तो है ही। कृष्ण तो है ही। शिव तो है ही। बिलग-बिलग अध्यात्म परंपरा के लोगों के अपने-अपने बिलग ईश्वर होंगे। मैं बहुत आदर के साथ कह रहा हूं। और आदमी इतना गिरा हुआ रह जायेगा, उसमें हम परमात्मा का दर्शन नहीं करेंगे तो फ़िर उसकी मज़बूरी उसको व्यसनी बना दे! उसकी मज़बूरी उसको चोरी करना सीखा दे!

जीवन के हर मोड़ पर परमात्मा हैं। आप को यहां भोजन परोसा जा रहा हैं प्रसाद के रूप में माँ जानकी का। ये आप के पास भोजन की व्यवस्था नहीं इसीलिए नहीं, आप को परमात्मा समझकर आप को भोजन परोसा जा रहा हैं।

तो, परमात्मा मौका देता हैं, हर मोड़ पर मैं खड़ा हूं। तो एक पथ्थर पर सिंदूर लग गया तो हम ठुकराते नहीं, जीवंत परमात्माओं को क्यों ठुकराया जा रहा है? समाज के ओर क्षेत्र ठुकराए, उनका नसीब! कम से कम धर्म जगत न ठुकराए। सब को गले लगाओ। मैं तीन सूत्र कहता हूं। सत्य अपना व्यक्तिगत रखो। दूसरा

सत्य बोले न बोले गीला मत करो। मैं बोल रहा हूं कि नहीं, मैं दूसरे का सत्य कुबूल करता हूं कि नहीं, मुझे सत्य प्रिय लगता हैं कि नहीं? सत्य व्यक्तिगत हो। और प्रेम परस्पर हो। हम एक-दूसरे से प्यार करे। और करुणा सब से हो। बस यही है जीवन। स्प्रेड लव बिकोझ लव इझ लाईफ। डोन्ट स्प्रेड हेइट बिकोझ हेइट इझ डेथ। नफरत, घृणा, तिरस्कार, उपेक्षा ये मौत है। मृत्यु क्या है? 'रामचरित मानस' में लिखा हैं-

कौल कामबस कृपिन बिमूढ़ा ।
अति दरिद्र अजसी अति बूढ़ा ।।
सदा रोगबस संतत क्रोधी ।
बिष्नु बिमुख श्रुति संत बिरोधी ।।

चौदह लोग जीए तो भी मरे हुए हैं। फाइव स्टार-सेवन स्टार होटेल में जीए तो भी मरे हुए हैं, मुर्दे दैं, शब हैं। 'कौल'; वाम मार्गी। पूरी दूनिया से विपरीत चलनेवाला आदमी जीवित नहीं है, मरा हुआ हैं। 'कामबस'; अत्यंत भोगी, निरंतर भोग के सिवा जिसकी आंख में कुछ नहीं, वो जीवित नहीं है; मरा है, मुर्दा है। 'कृपिन'; अत्यंत लोभी, कंजूस मरा हुआ है। 'मूढ़'; मूरख, नासमझ, बेहोश, जिसको मरा हुआ कहा है। 'अति दरिद्र'; अत्यंत गरीब। इवन वाणी का भी गरीब। शुभ बोले भी ना, अच्छा बोले भी ना! 'अजसी'; जिसको जगत में बदनामी मिली, मरा हुआ है। अत्यंत बूढ़ा, अत्यंत वृद्ध, मरा हुआ है। 'सदा रोगबस'; गोस्वामीजी कहते हैं, सदा-सदा जो रोग और ब्याधि से पीड़ित हैं वो जीवित नहीं हैं। उसका अपमान न हो, उसको धक्का न दे। वो बेचारा ओलरेडी मरा हुआ है। 'संतत क्रोधी'; चौबीस घंटे जो क्रोध करता है, हर बात में क्रोध, हर बात में क्रोध! अपनी ऊर्जा को गंवाता है; मरा हुआ है। और 'बिष्नु बिमुख'; भगवान नारायण का विरोधी अथवा तो विष्णु मानी विशालता, जिसका दिल विशाल है, जिसकी दृष्टि विशाल है, जिसके विचार विशाल है, अपने पास कुछ न हो लेकिन जिसका अंत:करण बहुत विशाल है, ऐसी व्यक्ति का विरोध करनेवाला 'मानस'कार कहते हैं, मरा हुआ हैं। 'श्रुति'; श्रुति मानी वेद। वेद का जो विरोध करे। जो कल्याणकारी सद्ग्रंथ हैं। जो हर एक युग में प्रेक्टिकल है, ऐसे बुद्धपुरुषों के वचनों का संग्रह, उसका विरोध न हो। 'संत बिरोधी'; 'रामायण' में लिखा हैं, जो संत का विरोधी है, ओलरेडी मरा हुआ हैं। संत के पैर छूने की इच्छा न हो तो मत छूना लेकिन संत का विरोध मत करना, बिना सोचे, बिना जाने। परमात्मा से मांगना मेरे भाई-बहन कि हम साधु को पहचान न सके तो कोई चिंता नहीं लेकिन कोई साधु को हमारे कारण ठेस न लग जाय।

'तनु पोषक'; केवल अपने शरीर का ही खयाल करे। बस, मुझे रोटी मिल जाय, मुझे ये मिल जाय, मेरा काम बन गया! औरों की जरा भी चिंता न करे। 'निंदक'; दूसरों की निंदा करनेवाला मरा हुआ हैं। कोई तुम्हारे पास आकर दूसरे की निंदा करे, तो समझना मुर्दा है, शब है! उसके पास ज्यादा बैठने से दुर्गंध आयेगी! वहीं से हटो। 'तनु पोषक निंदक अघ खानी।' पाप का केन्द्र, पाप का खान, मरा हुआ। 'जीवत सव सम चौदह प्रानी।' तो ये जीवित परमात्मा चारों और हमें अवसर दे रहा हैं। उसकी पूजा करने की जरूरत नहीं। कम से कम उसको प्रेम करो। सब में वो ही क्षमता है, सब में वो ही तेज पड़ा है। और मैं बोलूं और आप सुन लें इतना पर्याप्त नहीं। जो अभावग्रस्त है उसको तो मैं प्रेम कर रहा हूं लेकिन संपन्न लोगों को अपील कर रहा हूं कि आप के अगल-बगल में अभावग्रस्त हो उसको बैठा करे। कोई शिक्षा से रह गया, उसको शिक्षा दिलवाने की कोशिश करे। कोई छपड़ा बिना हैं, उसको छपड़ा बना दे।

दादाजी की एक बात कहूं? एक बार मेरे दादा को, मेरे गुरु को, मेरे सद्गुरु भगवान को, मेरे ग्रान्ड फाधर को, जो मेरे गुरु है, उनको मैंने पूछा कि 'दादा, तुलसीदासजी ने रजक का प्रसंग क्यों नहीं लिखा?' धोबी का प्रसंग नहीं लिखा है। इतना संकेत किया-

सिय निंदक अघ ओघ नसाए।
लोक बिसोक बनाइ बसाए।।

और तुलसीदासजी को जो वर्णवादी, ज्ञातिवादी कहते हैं ना, वो कम से कम ये पंक्ति तो पढ़े! प्लीज़, आइ इन्वाइट। ये पंक्ति तो पढ़े! तुलसीदासजी ने 'धोबी' शब्द भी नहीं लिखा। 'सिय निंदक' कर दिया। जातिवाद तोड़ डाला इस साधु ने। तो मेरा एक प्रश्न था उस समय कि

क्यों नहीं लिखा? ये दादा का जवाब है कि 'बेटा, हद से ज्यादा संस्कार अच्छे नहीं।' कल्पना तो करो साहब! आज ऐसी बातें, पिटीपिटाई बातें जो हमारे दिमाग में शताब्दीओं से डाली गई ना, इसलिए ये जरा आक्रमक लगती है। बाकी सही ये हैं। सोलह संस्कार होना चाहिए, सम्यक् होना चाहिए। बत्तीस नहीं होने चाहिए; चौसठ नहीं होने चाहिए; एक सौ अठ्ठाइस नहीं होने चाहिए। क्यों दुनिया पर बोझ डाले हुए हो? धोबी बहुत अच्छा पात्र है। जो कपड़े का संस्कार करता है, शुद्धिकरण करता हैं। लेकिन कोई धोबी कपड़ें धोता-धोता ये समझे, दूसरे का कपड़ा ओलरेडी शुद्ध हैं फ़िर भी वो ये कहने लगे, संस्कार इतना ओवर टेईक कर ले कि नहीं, नहीं, उसका कपड़ा तो गंदा हैं! वो धोबी को हटाने से ही रामराज्य होगा। इससे पहले राम राज्य नहीं आएगा। जानकी तो आत्मा है। सीता के आत्मारूपी वस्त्र पर ये आदमी ने दाग निकाला! अपने आप को इतना बड़ा धोबी समझ लिया! इल्जाम लगाने लगा ये धोबी कि जानकी कलंकिनी है! और वसिष्ठजी क्या है? अति संस्कार है। भरतजी ने नाम लेकर कहा, 'गुरुदेव, ये गूह है, उनका नाम गूह है, उनकी जाति निषाद है।' वशिष्ठजी नहीं समझते थे कि सब में परमात्मा है? कहां गया उसका परमात्मा आज? वशिष्ठजी ने दूर से आशीर्वाद दिया, संस्कारों ने रोका! वो पुरोहित हो सकते हैं, बुद्धपुरुष होना बहुत कठिन है। आलोचना नहीं है। अति संस्कार! मैं महात्मा, मैं कैसे छूउं? समय आया हैं, इक्कीसवीं सदी में निषादों को गले लगाओ। अत्यंत पतित, दलित, उपेक्षित, वंचित, उसके प्रति प्रेम करो।

मैं 'मानस' कहता हूं तो मेरी अंधी दौट नहीं है कि 'मानस' में जो भी लिखा है मैं उसको पकड लूं क्योंकि मैं त्रिभुवनदासदादा का चेला हूं, जिसने सालों पहले मुझे ये सिखाया कि 'बेटा, अति संस्कार ठीक नहीं। ये तुम्हें धर्म के नाम पर अहंकारी बना देगा!' आज याद करता हूं तो आंखें भर आती है कि क्या बूढ़े का चिंतन तो देखो साहब! एक गोबर लिपित ओटले पर बैठा हुआ साधु! हाथ में बैरखा और न किसीसे बोलना, किसीसे कुछ लेना-देना। ये मैं आप को करीब साठ साल पहले-पचपन साल पहले का मेरा अनुभव कह रहा हूं, 'अति संस्कार अच्छा नहीं, बेटा।' यही सीख मुझे अछूत से अछूत के घर में लिए चलती है। कई धार्मिक लोग मेरे से छूट जाते हैं। मुझे एक देवीपूजक ने घर में रोटी का निमंत्रण दिया। मैंने कहा, मैं खाने आउंगा। एक महात्मा मेरे साथ थे। मैंने कहा, 'महात्माजी, चलोगे?' बोले, 'हां बापू, जायेंगे, जायेंगे।' रोटी खाने की बात आई तो बोले, 'आज मेरी तबियत ठीक नहीं, मैं कैसे आऊं?' अति संस्कार! मैं भी पीछे रह गया, महात्मा भी पीछे रह गए, दलित की झौंपडी से उसकी पत्नी ने हम को मना कर दिया कि हम तुम्हारे जैसे पवित्र लोगों को हमारी रोटी नहीं खिलायेंगे क्योंकि हम पापी है; ओर पाप नहीं करना चाहते! कौन आगे बढ़ गया? ये झोंपड़ेवालें आगे निकल गए! और हम मार खा गए! तुम नहाओ, तुम तिलक करो इसका मतलब ये नहीं कि जो तिलक नहीं करता है वो पापी है। ये मोहर लगाने का हमें कतइ अधिकार नहीं हैं। तुम चोटी रखो, तुम जनोई रखो, सनातन धर्म की देन है। लेकिन कोई न रखे तो गालियां मत दो। वशिष्ठजी नहीं गए। लेकिन वशिष्ठजी भी आगे जाते-जाते, चित्रकूट पहुंचते-पहुंचते जब भरतजी ने कहा, 'गुरुदेव, ये तो रामसखा है, राम का मित्र गूह है, निषाद है।' और तुलसीदासजी लिखते हैं, वशिष्ठजी दौड़े और गूहराज दंडवत् कर रहा था। उस वशिष्ठजी ने गूह को गले लगाकर प्रायश्चित्त किया। गंगा के तट पर प्रायश्चित्त नहीं हुआ, मंदाकिनी के तट पर प्रायश्चित्त हुआ।

किसीने पूछा था विनोद में कि नगर और गांव में फर्क क्या? तो एक आदमी ने जवाब दिया कि गांवों में कुत्ते आवारा घूमते हैं और गाय पाली जाती हैं। और नगर में गायें आवारा घूमती है और कुत्ते पालित हैं! इसका अर्थ कुत्ते न पालो ऐसा मुझे नहीं कहना। कुत्ते में भी परमात्मा हैं। कुत्ता तो हमारे यहां गुरुदत्त का एक बहुत वो है। धर्मराज के साथ स्वर्गारोहण तक एक कुत्ते का एक सदस्य गया है। तो यहां गाय पाली जा रही हैं, बड़ी अच्छी बात है। मैं बहुत राजी हूं। इस बिहार की गो सेवा को मेरा प्रणाम है। और संपन्न लोगों को गाय पालनी चाहिए; दत्तक लेनी चाहिए। गो सदनों में उसकी सेवा होनी चाहिए। हम बैठे थे और एक युवक आया, लव मेरेज करके आया था। बोले, तीन धाम की यात्रा करके आया

हूं। मैंने कहा, अब चौथा धाम बाकी है, तेरे माँ-बाप के पैर छू। मेरे पास क्यों आया? वो लड़का कह रहा था, गाय को राष्ट्रीय प्राणी घोषित करना चाहिए। तो मायाभाई ने बहुत अच्छा कहा कि तू कहता है, राष्ट्रीय प्राणी गाय को माँ के रूप में घोषित किया जाय, तो अच्छा है लेकिन फ़िर माँ को भटकने नहीं देनी चाहिए। माँ बाज़ार में भटके तो माँ नहीं।

मैंने तो महामहिम राष्ट्रपतिजी से भी गत कथा में कहा और पहले भी ज़ाहिर में अपील की थी। मैं बहुत आदर करता हूं महामहिम प्रणवदा का। भारत के नागरिक के रूप में हम निवेदन तो कर सकते हैं। और भारत के राष्ट्रपति राजेन्द्रबाबु यहां के थे बिहार के, उसके समय में मैंने ये अपील की होती तो शायद मान भी जाते। स्वीकार भी हो जाता। स्वीकार हो न हो लेकिन गाय के प्रति सब का आदर हो। मेरा कहने का मतलब ये है कि बिहार के देहात में गाय से प्रेम किया जा रहा है। गाय पालित की जाती है। हमारा दायित्व है। हम सब मिलकर कुछ विशेष रूप में करते चले, करते चले, करते चले।

'रामचरित मानस' हम को ये विवेक देती है कि वशिष्ठजी ने सब छूताछूत छोड़कर गूह को गले लगा लिया। हमारा ये दायित्व है, यदि 'रामायण' गाते हैं, 'रामायण' सुनते हैं। संस्कार इतने ओवर न हो कि हमें घमंडी बना दे और जीवंत परमात्मा को हम ठुकरा दे! हर मोड़ पर हरि खड़ा है। कोई मोड़ ऐसा नहीं कि जहां परम का दर्शन न हो। और वो विवेक देती है रामकथा।

तो, मुझे पूछा गया कि 'आप को बेगूसराय अकेला छोड़ दिया जाय?' क्यों? गुनाह क्या है कि मुझे आप अकेले छोड़ दो? और अकेला रहना चाहता हूं क्योंकि मैं अकेला नहीं हूं। मेरे साथ मोरारिबापू है। तुम्हारा मोरारिबापू है कोई, वैसे मेरा भी अंदर एक मोरारिबापू है; जो मेरे साथ-साथ चलता है, मेरे साथ-साथ रहता है। हम अकेले थोड़े हैं? लेकिन बात भी तो सही है कि ये कथा के लिए तो हर जगह, हर गली पर, हर मोड़ पर लोग खड़े हैं। अकेला आता तो कौन पूछता कि कौन मोरारिबापू? हम अलंकृत है रामकथा के कारण। हम मौज कर रहे हैं रामकथा के कारण।

'बापू, आप दो पहियां या चार पहियां वाहन चला सकते हैं?' बोलो! चार पहियावाला नहीं चला सकता, साइकल चला सकता हूं। लेकिन सालों से नहीं चलाई तो अब वो भूल गया शायद! चला भी सकता हूं लेकिन अब धोती-बोती कहीं व्हील में फंस जाय! लेकिन मुझे साइकल आती है। मैं नौकरी करता था स्कूल में, तो साइकल में जाता था। पैदल ही जाता था, फ़िर साइकल का जब योग बना। लोन लेकर हफ़ते से बड़ी मुश्किल से खरीदी। तब मैं साइकल पर जाता था। तो साइकल होती थी तो पंप नहीं होता था! कमी ही कमी रहती थी! पंक्चर पड़े तो हवा भरने का पंप नहीं! कुछ न कुछ कमी रह जाती थी! तो कई लोग तो मेरे पास साइकल का उदघाटन कराने आते हैं कि बापू, नई साइकल ली, आप उद्घाटन कर दो! तो, मुझे साइकल चलाना आता है। बाकी फोर व्हील नहीं आता।

'बापू, तुलसी क्या मनोचिकित्सक है?' बिलकुल है। तुलसी का 'रामचरित मानस' मनोविज्ञान से भरा शास्त्र हैं। मैं बहुत जिम्मेवारी के साथ कहना चाहूंगा। मानसिक रोग के इलाज के लिए, मनोरोग के इलाज के लिए इतना लंबा किस ग्रंथ में प्रकरण आया, मुझे बताओ जो तुलसी लाए। ये पूरा मनोविज्ञान है। पूरा मनोचिकित्सक है तुलसी। 'मानस' का एक अर्थ हृदय भी होता है। 'मानस' का एक अर्थ मानुष भी होता है। 'मानस' का एक अर्थ मानवी का मन भी होता है। ये पूरा मनोवैज्ञानिक ग्रंथ है। इसमें कोई संदेह नहीं।

देखो, रामकथा जहां होती है ऐसी एक श्रद्धा जगत की धारणा है ओर मैं पक्का मानता हूं कि वहां हनुमानजी होते हैं, ये निश्चित्त है। और हम रामकथा के कथाकारों का ये प्रवाही परंपरा सी है कि हम कथा का आरंभ करते हैं तो सबसे पहले हनुमानजी का आह्वान करते हैं, 'आइए हनुमंत बिराजिए।' तो इसका मतलब श्रद्धा जगत कहता है कि जहां रामकथा होती है, वहां हनुमानजी किसी ना किस रूप में होते हैं। अब आप मुझे कहेंगे कि आप प्रमाण दो, तो प्रमाण मेरे पास नहीं है। आप मानो, ना मानो लेकिन कोई तत्त्व होता है। आप कल्पना करो, आप लाख व्यवस्था करो तो भी इतना विशाल आयोजन कोई दैवीशक्ति के बिना असंभव है।

कोई है, जो मंच पर बैठकर निगरानी करता है। जो हमें प्रेरित करता है। हमारे दिल के भाव और श्रद्धा को सफल करने के लिए पता न चले ऐसा कोई परमतत्त्व हमें बहुत पुश करता है।

तो, विश्वामित्र राम-लक्ष्मण को लेकर के अहल्या के आश्रम में आए। कल हमने थोड़ी चर्चा उसकी भी की कि अहल्या का ये धैर्य-यज्ञ था, प्रतीक्षा का यज्ञ था अथवा तो जो मौन रहकर चूपचाप बैठी थी उसमें पुन: चैतन्य प्रकटाने का ये यज्ञ था। उसको भी राघव ने पूरा किया। उसके बाद राम यात्र करते करते चले। गंगा के तट पर गए। भगवान ने गंगा में स्नान किया। उसके बाद भगवान की यात्रा आगे बढ़ी और जनकपुर पहुंचे। एक आम्रकुंज में विश्वामित्र, मुनिगण और राम-लक्ष्मण जनकपुर में आए, ठहरे। राम-लक्ष्मण आंबावाडी देखने के लिए गए हैं। विश्वामित्रजी के पास नहीं है, कहीं घूमने गए हैं और जनकजी आ गए। यहां बैठकर सब बात कर रहे हैं आम्रकुंज में, उसी समय राम आए और जैसे राम आए ही, राम को देखके ही सब खड़े हो गए! प्रतिभा उधार नहीं आती, प्रतिभा आदमी के अंदर से प्रकट होती है। कहां जनक, कहां सोलह साल का मेरा अवध का राजकुमार! लेकिन जनक खड़े हो गए! रावण की सभा में जब अंगद गए राजदूत के रूप में तो पूरी सभा अंगद को देखकर खड़ी हो गई। रावण की सभा में प्रोटोकोल भंग हुआ। रावण आए तभी खड़े हो! और हमारे देश में आज भी अंग्रेज शासन के कल के कुछ प्रोटोकोल चल रहे हैं! उसको हटाना चाहिए। मेरा केवल संकेत है। कुछ प्रोटोकोल से देश मुक्त हो। परमात्मा करे। ये अंग्रेजों की देन है और जो बिनजरूरी है ऐसे प्रोटोकोल हटाने चाहिए। ठीक है, जब तक प्रोटोकोल हो तब तक ठीक, उसी नियम के अनुसार चले? छोड़ो, मैं उसमें न जाऊं। लेकिन कुछ बातें हटे तो अच्छा हैं। छोड़ो! अंगद को देखकर पूरी रावण की सभा खड़ी हो गई। जनकजी ने राम के दर्शन के बाद, लक्ष्मण के दर्शन के बाद विश्वामित्रजी से जिज्ञासा की कि महाराज, ये सुंदर बालक कौन है? ये मुनियों के कुल के तिलक है कि राजपरिवार के पालक है? ये कौन है? जिसको देखकर मेरा वैरागी मन अनुराग में डूबा जा रहा हैं! विश्वामित्रजी ने गर्भित परिचय दिया कि राजन्, जनक महाराज, ये आपको प्रिय हो, मुझे प्रिय हो इतना ही नहीं, दुनिया को, जड़-चेतन सृष्टि में प्राणीमात्र को ये प्रिय हैं। और जनकराज को सांसारिक परिचय प्रदान किया कि महाराज दशरथजी के ये पुत्र हैं। विश्वामित्र को प्रणाम करते हुए जनकजी ने कहा, भगवन्, मेरा कर्तव्य है कि अयोध्या का जो स्थान हैं उसके अनुकूल मुझे राजकुमारों को निवास देना चाहिए। इसलिए कृपया, मेरे नगर में एक 'सुंदर-सदन' हैं, वहां आप निवास करे। 'सुंदर-सदन' में राम को ठहराया।

'मानस-धनुषजग्य' की ये यात्रा; कल तक रामनाम की महिमा की चर्चा हुई। याज्ञवल्क्यजी ने भरद्वाज के सामने शिवकथा प्रारंभ की। सती का संदेह। शिव ने सती का त्याग किया। शिव की समाधि सत्ताशी हजार साल। रामनाम सुमिरन करते-करते शिव जागे। सती अब सन्मुख है। महादेव कथा सुनाने लगे। दक्ष प्रजापति सती के पिता ने यज्ञ का आयोजन किया,बदला लेने के लिए, बलिदान के लिए नहीं। शिव ने मना किया, लेकिन सती मानी नहीं। सती पिता के घर आई। सबने अपमान किया। माँ प्रेम से मिली। सती ने यज्ञमंडप के मध्य में जाकर उग्र भाषा में शाप दिया और जल गई! सती का दूसरा जनम हिमालय और मैना के घर भवानी के रूप में हुआ। कन्या का जन्म हो तो उसका उत्सव मनाओ। नारद आए; नाम रखे - उमा, अंबिका, भवानी। और कहा, तुम्हारी बेटी को ऐसा पति मिलेगा जो अमानी, अगुन, उदासीन होगा; जोगी, निष्काम होगा; नग्न, दिगंबर रहेगा। माता-पिता रोने लगे! पार्वती खुशी से भर गई। क्योंकि वो महादेव ही है। पार्वती तप करती है। पार्वती को आकाशवाणी हुई। विष्णुजी ने शंकर से वचन मांगा कि आप पार्वती का स्वीकार करो। शंकर हां कर देते हैं। शादी की तैयारी। जटा का मुकुट बनाया। भूत-प्रेतों की बारात। भगवान की सवारी निकलती है। मैना द्वार पर स्वागत करते बेहोश हो गई! नारद ने भेद खोला। सब पार्वती को प्रणाम करने लगे। फिर दुल्हे की सवारी। आठ सखियों के संग पार्वती आई। लोकरीति, वेदरीति से ब्याह संपन्न। बिदा की बेला। हिमालय ने बेटी को बिदा की। कैलास पहुंचे।

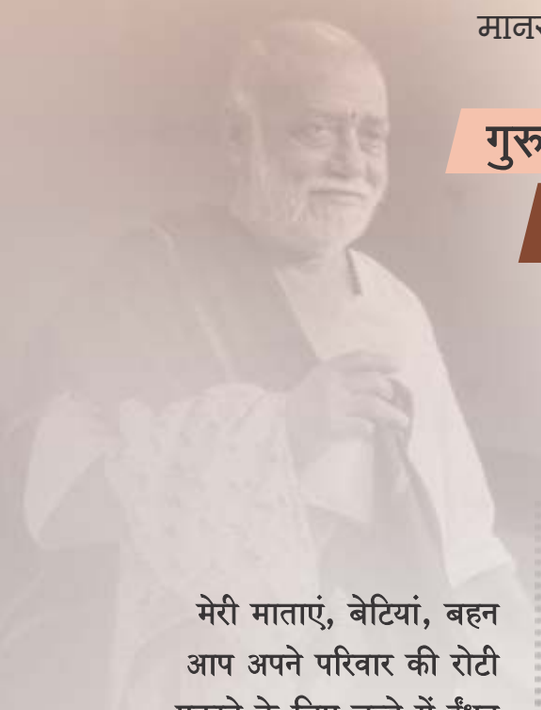

गुरु एक वर्ग का होता है, सद्गुरु समग्र विश्व का होता है

मेरी माताएं, बेटियां, बहन आप अपने परिवार की रोटी पकाने के लिए चुल्हे में ईंधन डालते हैं, ये समिध है और चुल्हे में अग्नि प्रज्वलित करके आप रोटी पकाते हैं, ये आप का रोज का होम है। आप को दूसरा यज्ञ करने की जरूरत नहीं है। जिन तथाकथित धार्मिक लोगों ने ऐसा कह दिया है कि बहनों को यज्ञ का अधिकार नहीं है, ये मुझे रास नहीं आता। ये कोई संविधान हो तो भी मैं सविनय उसको हाथ जोड़कर ओवटेक कर लूंगा।

'मानस-धनुषजग्य', जो इस कथा का प्रधान संवादी सूत्र है। 'रामचरित मानस' में यज्ञ के लिए चार शब्दों का उपयोग हुआ है। यद्यपि इन चारों का एक ही अर्थ है, लेकिन ग्रंथ में जब कोई एक ही बात के लिए, एक ही घटना के लिए बिलग-बिलग शब्द का प्रयोग पात्रों और प्रसंग के आधारित बिलग-बिलग संदर्भ में होता है तब उसका विचार होना स्वाभाविक है। एक तो 'रामचरित मानस' में 'जग्य' शब्द है, जो धनुषजग्य के रूप में हमने इस कथा का केन्द्रबिन्दु बनाया है। जग्य मानी यज्ञ; मूल संस्कृत में यज्ञ; देहाती भाषा में, ग्राम्य गिरा में, लोकबोली में तुलसीदासजी उसको जग्य कहते हैं। तो, एक तो यज्ञ के लिए 'जग्य' शब्द है 'मानस' में। दूसरा एक शब्द है 'जाग', जाग मानी यज्ञ। 'जाग' शब्द भी यज्ञपरक है। 'भरत चरित जप जाग।' तीसरा शब्द यज्ञ के लिए है 'मख'; मख मानी यज्ञ। 'मुनि मख राखन गयउ कुमारा।' और चौथा शब्द है 'होम।' 'होम करन लागे मुनि झारी।' अब कविता का प्रास मिलाने के लिए कहीं- कहीं 'जाग' का 'जागा' भी किया है; कविता के प्रास के लिए, कविता का जो संविधान-बंधारण होता है उसके अनुसार। कुल मिलाकर चार शब्द है यज्ञ के लिए जग्य, जाग, मख और होम। जहां तक मेरे पास गिनती आई है, इन शब्दों की संख्या 'रामचरित मानस' में छैसठ है। इतनी बार ये शब्दप्रयोग 'मानस' में चारों का है। अब प्रश्न ये उठेगा कि गोस्वामीजी ने 'रामचरित मानस' में एक ही क्रिया के लिए, एक ही साधन के लिए ये चार शब्द का प्रयोग क्यों किया? अब भाष्य में इसका जवाब नहीं मिलेगा। गुरुमुख से या किसीके अंत:करण की प्रवृत्ति से या भगवद् प्रेरणा से उसके जवाब मिल सकते हैं। 'रामचरित मानस' में 'धनुषजग्य' केवल दो बार है। एक तो जो हमने पंक्ति ली है वो सुन लीजिए फ़िर-

धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा ।
हरषि चले मुनिबर के साथा ।।

ये मिथिला में ही दोनों शब्द का प्रयोग हुआ है। ये दोनों मैथिली आंचल के लिए शब्द का प्रयोग हुआ है। अब दूसरा प्रयोग-

तात जनकतनया यह सोई ।
धनुषजग्य जेहि कारन होई ।।

वहां तो विश्वामित्रजी ने कहा कि चरित्र देखे, धनुषजग्य और राम हर्षित होकर चल दिए। और जो गुरु शब्दप्रयोग कर रहे हैं, वोही शब्द का प्रयोग राम कर रहे हैं। क्या मतलब? कोई भी गुरु का शब्द एझ इट इझ पकड़ो। यथार्थ पकड़ो। इसमें इधर-उधर करने की बौद्धिक कसरत न करो। गुरु अपभ्रंश बोल दे तो वो गुरु जो बोले। इसलिए 'मानस' की पंक्ति है-

सद्गुर बैद बचन बिस्वासा।
संजम यह न बिषय के आसा।।

गोस्वामीजी कहते हैं, सद्गुरु के बचन में जैसा वो बोला है उसी शब्द, उसी बचन में विश्वास आश्रितों को रखना चाहिए। सद्गुरु के वोही वचन पकड़ रखे। उसमें इधर-उधर न करे। मैंने देखा है जीवन में कई लोग थोड़ा पढ़ लेते हैं, उसके बाद गुरुजनों के सामने भी अपने द्वारा सुधार व्यक्त करने लगते हैं। ये गुरुनिष्ठा का अपराध है। जो मानसिक रोग काम, क्रोध, ईर्ष्या, फलां जो हम इस बीमारी से ग्रस्त है। 'रामायण' में तो लिखा है कि इस बीमारी से मुक्त होने के लिए आठ औषध है। वैसे कई है लेकिन प्रधान आठ औषधि है। जप है, तप है, यज्ञ है, आचार है, धर्म है, नेम है। कागभुशुंडि कहते हैं, कई उपाय है लेकिन रोग जाता नहीं। याद रखना, यज्ञ करने से भी मानसिक बीमारी का नाश नहीं होगा। जप करने से भी मानसिक बीमारी का नाश नहीं होगा। बहुत आचारशुद्धि, पांच-पांच बार स्नान करना ऐसे आचार से भी मनोरोग का नाश नहीं बताया। बहुत नियम ले लिए, उपवास करना है, ये करना है, वो करना है, उससे भी नाश नहीं होगा। कई व्रत धारण करने से भी मनोबीमारी का नाश नहीं होगा। ऐसा कागभुशुंडिजी कहते हैं, एक बुद्धपुरुष कहते हैं। योग-साधना से भी शारीरिक बीमारी का नाश होगा प्राथमिक रूप में, मनोबीमारी का नाश बहुत मुश्किल है। इसका मतलब ये न करे ऐसी बात नहीं है ध्यान देना, कोई गलत मेसेज न जाए। अब होता है क्या कि रोग होता है, एक औषधि हम लेते हैं तो रोग मिटता नहीं है, दब जाता है।

जप और भजन में अंतर है। जप साधन है, भजन साधु का स्वभाव है। किसी व्यक्ति में बहुत लोभ है। तो उस लोभरूपी रोग को मिटाने की औषधि है दान। आप दान करने लगो तो आप दान कर रहे हैं इसका मतलब आप का थोड़ा लोभ छूटा ही है। रोग मिटा नहीं है। क्योंकि हम सब जानते हैं कई औषधि ऐसी होती है कि एक रोग को शायद नष्ट भी कर दे लेकिन औषधि ही ऐसी होती है कि उसकी एक दूसरी इफेक्ट शुरू होती है। एक दूसरा रोग पैदा कर देती है। लोभरूपी रोग का नाश दान से होगा लेकिन दान के बाद अहंकार का डमरुआ पैदा हो जाता है कि मैंने दान किया। लोभ तो दबा, मिटा नहीं। जप करनेवाला थोड़ा शांत होने लगता हो। उसकी अशांति की बीमारी थोड़ी दब जाती है, लेकिन जप करनेवाले फ़िर ये कहे कि मैं शांत हूं, दूसरे जप नहीं करते इसलिए अशांत है, तो उसको कोई साईड इफेक्ट शुरू होगी! एक रिएक्शन गलत पैदा हो गया। मुझे बहुत अच्छा लगता है। गरुड से कह दिया, रोग नहीं मिटता, नहीं मिटेगा। एक ही उपाय, एक मात्र औषधि है। ये अष्ट औषधि फेंक दे। इससे रोग दबेगा, मिटेगा नहीं। एक ही उपाय है और वो उपाय ये है, 'सद्गुर बैद बचन बिस्वासा।' तुम्हारे सद्गुरु के वचन में तू पक्का भरोसा कर। उसने 'मरा' कहा तो 'मरा' पकड़ रख, 'राम' कहा तो 'राम' पकड़ रख। 'कृष्ण' कहा तो 'कृष्ण' पकड़ रख, 'क्रिष्णा' कहा तो 'क्रिष्णा' पकड़ रख। गुरु के पास साक्षर होने की जरूरत नहीं। जितने बहुत साक्षर हो गये हैं, मैंने अपनी आंखों से देखा, आख़िरी समय में सब संतुलन गवां बैठे है! विस्मृत हो जाते है! कुछ का कुछ बोलते हैं! शास्त्र ने उसको डिस्टर्ब कर डाला! भजन स्वभाव बन जाए। जप साधन है। भजन स्वभाव है, भजन साधन नहीं है। जप करने से काम दब जाता है, मिटता नहीं। भजन के बिना काम नहीं मिटेगा। राम ने सुना, मेरा गुरु बोला, 'धनुषजग्य।' राम पढ़े-लिखे हैं। अल्पकाल में समस्त विद्या राम ने वशिष्ठजी से प्राप्त की

है। वो कह सकते हैं बाबा, 'धनुषजग्य' कि 'धनुषयज्ञ?' 'यज्ञ' कि 'जग्य?' राम ने नहीं किया। राम ने तो सुना वो ही पकड़ डाला। 'हे लक्ष्मण, देख, पुष्पवाटिका में ये जनक की कन्या जानकी है।' फ़िर गुरु के शब्द-

तात जनकतनया यह सोई ।
धनुषजग्य जेहि कारन होई ।।

मैंने मेरा अनुभव कई बार कहा है कि मैं जब दादा के पास 'रामायण' पढ़ता था, सीखता था तब वो पुराना संस्करण 'रामायण' का था। आज के 'गीता प्रेस' के 'रामचरित मानस' में और पुराने संस्करण में बहुत पाठभेद है। बहुत-सी चौपाई है, बहुत-सी नहीं है। पाठांतर बहुत है। लेकिन मैं जब सीखता था तब जब जो पाठ मेरे सामने आया। वो पाठ मैं वोही का वोही रखता हूं। आज पढ़नेवाले को शायद ये भी लगे कि बापू यहां ये शब्द के बदले ये शब्द क्यों? मेरा गुरुमुख बचन है ये। मुझे कोई पंडित नहीं होना है, मुझे कई शास्त्री नहीं होना है। गुरु के बोल को पकड़ रखो, जैसा है। समस्त मनोबीमारी का एक मात्र उपाय। बाकी सब साधन है। मेरी ऐसी श्रद्धा है इसलिए कहता हूं, बाकी तो आप सब की मान्यता। गुरु और यहां भी शब्द है 'सद्गुरु।' गुरु और सद्गुरु में फ़र्क है। गुरु एक वर्ग का होता है, सद्गुरु सब का होता है। गुरु एक वर्ग का कि ये रामानुज संप्रदाय के गुरु है; ये जैनगुरु है; बौद्धगुरु है; सूफ़ी गुरु है; ये इसाइ गुरु है; ये शीख गुरु है। गुरु है एक वर्ग का, यद्यपि गुरु विशाल है। फ़िर भी 'गुरु' शब्द का बहुधा उपयोग जिसको वो कवर कर रहा है वो उनको गुरु मानते हैं। सद्गुरु ग्रूप का नहीं होता, सद्गुरु समग्र विश्व का होता है।

तो, मैं आप से निवेदन कर रहा था कि 'धनुषजग्य' शब्द 'मानस' में दो बार आया है और मैथिलि आंचल में ही उसका प्रयोग हुआ है। बाकी 'जग्य' शब्द कई बार है। कुल मिलाकर मैंने कहा, छैसठ है। भूलचूक हो सकती है। तो क्या फ़र्क है बाप जग्य, जाग, मख और होम में? कुछ तो फ़र्क होगा। उसके कुछ भेद हमारी आंतरिक शुद्धि के लिए हम समझने की कोशिश करें। धनुषजग्य परिपूर्ण तभी है जनकपुर का जब राम ने धनुष तोड़ दिया और जनकराज ने अपनी जानकी राम को समर्पित कर दी। क्या मतलब? यहां हो जाती है धनुषजग्य की व्याख्या। बेटी मानी बाप की ममता और धनुष मानी हमारी अहंता। जिसके द्वारा साधक की अहंता और ममता मिट जाए उसको यज्ञ कहते हैं। और जब तक हमारी अहंता और ममता न मिटे तब तक यज्ञ चालु रखना चाहिए। और धनुषजग्य निरंतर चल रहा है। ये राम-लक्ष्मण आए उसी दिन ही नहीं हुआ। इससे आगे से चल रहा है निरंतर। धनुषजग्य समापन तो तभी हुआ है जब अहंता टूट गई। टूट गया धनुष-अहंकार और जनक ने जानकी दे दी। ये ममता है। बाप के लिए बेटी के समान कौन ममता है? मेरी समझ में ऐसा आ रहा है बाप कि धनुषजग्य का अर्थ है, अहंकार और ममता न टूटे तब तक ये प्रक्रिया चालु रहे ये जग्य है।

फ़िर जाग; जाग भी यज्ञ समझ लीजिए लेकिन जाग तब तक हम करते रहे जब तक पूर्ण रूप से हम जाग न जाए। हमारी पूर्ण रूप से जागृति न हो तब तक जाग चालु रहना चाहिए। पूर्णरूपेण जागृति। क्योंकि जागने के बाद फ़िर कुछ करने की जरूरत नहीं। मख का अर्थ मेरी व्यासपीठ करती है 'म' का अर्थ है मतलब; 'ख' का अर्थ है खतम। जब तक मतलब खतम नहीं होता तब तक लोग मख करते हैं। मतलब खतम, मख पूरा। उसको अनुष्ठान के रूप में लिया जाता है। उसको मख कहते हैं कि हमने गायत्री अनुष्ठान किया है। हमने इतने मंत्रों का हवन करना है, यज्ञ करना है, उसकी शास्त्रीय संज्ञा है मख। कोई आठ दिन का यज्ञ, कोई लक्षचंडी यज्ञ, कोई सतचंडी यज्ञ, कोई पौराणिक यज्ञ, कोई वैदिक यज्ञ; उसके साथ 'मख' शब्द लागू है। शास्त्रीय रूप में ये आनुष्ठानिक शब्द है। एक प्रकार का अनुष्ठान; जैसे कोई नवरात्रि में यज्ञ करे ये अनुष्ठान है। कोई सावन मास में यज्ञ करे, कोई चातुर्मास में यज्ञ करे।

चौथा यज्ञ के लिए जो पर्यायवाची शब्द है वो है होम। हम देहातों में रहनेवाले भाई-बहन यज्ञ नहीं कर पाते हैं, मख नहीं कर पाते हैं, जाग नहीं कर पाते हैं, बाकी होम तो रोज करते हैं। हम को पता नहीं ऐसे हम होम करते हैं। मेरी माताएं, बेटियां, बहन आप अपने परिवार की रोटी पकाने के लिए चुल्हे में ईंधन डालते हैं, ये समिध है और चुल्हे में अग्नि प्रज्वलित करके आप रोटी पकाते हैं, ये आप का रोज का होम है। आप को दूसरा यज्ञ करने की जरूरत नहीं है। जिन तथाकथित धार्मिक लोगों ने ऐसा कह दिया है कि बहनों को यज्ञ का अधिकार नहीं है, ये मुझे रास नहीं आता। ये कोई संविधान हो तो भी मैं सविनय उसको हाथ जोड़कर ओवटेक कर लूंगा। मेरे देश की बहन-बेटी को यज्ञ करने का अधिकार नहीं ऐसी बात नहीं; उसकी जरूरत नहीं है। माताओं तो चुल्हे में ईंधन डालकर रोटी पकाए वो यज्ञ है, ये होम है। वो अपने बच्चों को दूध पीलाए, उनका होम है। ये उनकी आहुति है। होम किया जाता है अग्नि में। बच्चा भूखा हुआ है, बच्चे के पेट में भूख की अग्नि प्रज्वलित हुई है और माँ उसको दूधपान कराए वो उनका होम है।

तुम्हारे घर जो अतिथि आए उसको आप क्षमता के अनुसार जो आप के घर में दाल-रोटी है, उसकी थाली में परोसते हैं वो आप का होम है। मैंने दूसरे दिन शायद कहा कि आप खेत में बीज बोते हैं वो आप का कृषियज्ञ है। आप का होम है। सभी कृषिकार का महामंडलेश्वर है जनक राजा। दुनियाभर के किसानों का जो कोई आचार्य है तो ये जनक है। उसने भूमि खोदी और जगत में एक ऐसी फ़सल पकी माँ जानकी कि पूरा जगत जानकी से कृतकृत्य हो गया। पूरी दुनिया सीता से धन्य-धन्य हो गई। ऐसी एक फ़सल, ऐसी एक देवी प्रगट हुई है, लता प्रगट हुई है। तो बाप, मैं दूसरी बार दोहरा रहा हूं कि आप खेती करते हैं, मकाई बोते हैं, गेहूं बोते हैं, ये आप का रोज का होम है। आप होम कर रहे हैं। पशु को चारा देते हैं आप वो आप का होम है। आप को मंत्र लेकर घी लेकर अग्नि जलाकर होम करने की जरूरत नहीं। तुम्हारा निरंतर होम है। साहब, मुझे कहने दो प्रामाणिकता से जीवन जीनेवाला जो श्वास लेता है वो उनका होम है। आप माला लेकर जप करे तो यज्ञ कर रहे हैं। और कुछ करने की जरूरत नहीं है। आप माला कर रहे हैं ये यज्ञ है। आप जप नहीं कर रहे हैं लेकिन आप जीवन जीने में जाग्रत है कि मैं दुकान पर बैठा हूं, बेईमानी नहीं करूंगा। मैं धंधा करता हूं, बेईमानी नहीं करूंगा। मैं पैसा कमाता हूं, किसीका शोषण नहीं करूंगा। स्वर्ग पुण्य के बिना नहीं मिलता, ऐसा शास्त्र कहता है। और पुण्य पैसों के बिना नहीं होता। और पैसा दूसरों के शोषण के बिना नहीं होता। दूसरों का शोषण थोड़ा होता ही है। थोड़ी बेईमानी आती है तभी पैसा ईकठ्ठा होता है। इसके बिना पैसा इकठ्ठा नहीं होता। कोई कुलवान है, खानदान है, बापदादा के सुक्रित है और परिपूर्ण ईमानदारी से ऐश्वर्य प्राप्त करता हो तो ये जगत का अपवाद है। बाकी बिना शोषण पैसा थोड़ा मिल सकता है? पांच साल पहले कुछ होते हैं और पांच साल में कुछ के कुछ हो जाते हैं राज्य में और राष्ट्र में! ये शोषण बिना नहीं होता। हां, अपवाद हो सकता है। तो, हम और आप थोड़ा जागृति से जीए; सावधानी से जीए वो है जाग। मख किसी भी सत्कर्म का कोई मतलब नहीं, कोई हेतु नहीं। 'हेतु रहित अनुराग।' एक शे'र है। चार पंक्तिमैं सुनाउं आप को-

लिपटता हूं मैं जब उससे जुदा कुछ और होता है।
मैं उससे गले लग जाता हूं, उसको लिपट जाता हूं तो मेरे जैसे कुछ बिलग हो जाता है।

मनाता हूं मैं जब उसको, खफ़ा कुछ और होता है।
जैसे आप राम भजन से लिपट जाओ तो काम जुदा हो जाता है, विकार भागने लगते हैं।

न मतलब अज़ानों से, न पाबंदी नमाज़ों की।

महोब्बत करनेवालों का खुदा कुछ और होता है।
हमारे गुजरात के अब तो निवृत्त हुए हैं, बहुत बड़े ओफिसर हर्ष ब्रह्मभट्टसाहब की ये चार पंक्तियां है।

एक प्रश्न है कि 'बापू, आप के गुरु ने आप को मंत्र दीक्षा दी है क्या?' मेरे गुरु ने मुझे सब कुछ दे दिया है। कुछ विभाग करने की मुझे जरूरत नहीं है। मेरे गुरु ने मुझे सब दे दिया है। मैं कोई विभाग करना नहीं चाहता। कुछ बचा ही नहीं। 'बापू, प्रेम का निकटतम मित्र कौन है? और प्रेम का शत्रु कौन है?' मेरा छोटा-सा जवाब है मेरे श्रावक भाई, प्रेम का कोई मित्र नहीं होता, प्रेम का कोई दुश्मन नहीं होता। प्रेम निर्द्वन्द्व होता है। प्रेम को कोई मित्र होता है तो राग शुरू हो जाएगा। प्रेम का कोई दुश्मन होगा तो द्वेष शुरू हो जाएगा। प्रेम उसको कहते हैं, जो राग-द्वेष से टोटली मुक्त हो। प्रेम का कोई मित्र

नहीं हो सकता। प्रेम सार्वभौम है। मित्र और दुश्मनवाला द्वैत प्रेम के अगल-बगल में नहीं हो सकते, ऐसा मैं दृढ़ मानता हूं, बस।

'मोक्ष और मुक्ति का अंतर विस्तार से बताईए।' मैं आप से कहूं, न मोक्ष की आप चिंता न करो, न मुक्ति की चिंता करो। कथा सुनो और आम रस पीओ। मोक्ष की जल्दी क्या है यार! मोक्ष कहते हैं, जीवन पूरा हो जाने के बाद मिलता है और जीवन चालु है और मिल जाए उसको मुक्ति कहते हैं। उसको जीवनमुक्ति कहते हैं। मोक्ष और मुक्ति की बात छोड़ो। जल्दी भी क्या है? इतने बोर क्यों होते हो जीवन से? इतना प्यारा जीवन मिला है। आप सब कुछ छोड़कर यहां बैठे है वो मुक्ति नहीं तो क्या है? ये मुक्ति है। 'रामायण' सद्गुरु है पर ऐसे सद्गुरु के पास नव दिन मैं और आप जीएं उसके समान जीवन में मुक्ति कौन है? कोई परमतत्त्व के अगल-बगल में जीना मुक्ति है। बस, और क्या मुक्ति? तो ये बहुत कठिन शब्द है। मेरी रुचि भी नहीं है।

तो, धनुषजग्य की चर्चा हम कर रहे थे मेरे भाई-बहन। कल तक मैंने ये चर्चा की कि भगवान राम जनकपुर में मिथिला में सुंदर-सदन में ठहरे हैं। भगवान राम ने देखा तो जिस भवन में राम ठहरे थे उसके नीचे द्वार पर मिथिला के दस-पंद्रह-सोलह सालों वाले कई युवक लडकें देखने की कोशिश कर रहे हैं कि दो राजकुमार आए हैं वो कौन हैं? राजकीय सन्मान के साथ राम को ठहराया गया है इसलिए वो बालक अंदर तो नहीं आ पाएंगे तो ठाकुर ने सोचा कि मैं तो बाहर जा सकता हूं। और राम ने योजना बनाई। परमात्मा विध-विध क्षेत्र में जिसको महत्ता दे इन लोगों को ये संकल्प करना चाहिए कि आख़िरी लोग जो ताक रहे हैं, जो हमारे पास तो नहीं आ पाएंगे लेकिन कम से कम हम तो स्वतंत्र है। हम उनके पास जाए। ये राम का मंत्र है। समझदार आदमी को योजना करके समाज के अंतिम व्यक्ति के पास पहुंचना चाहिए। मुझे ख़बर नहीं कि मैं कब भरौल आता? मैं यहां कब आता आंचल की बस्तीओं में? और मुझे आया तब से प्रसन्नता है कि मेरी व्यासपीठ आई उसकी मुझे सार्थकता लग रही है। तो मेरे पास न आ पाते उसके पास तलगाजरडा आया। तो, भगवान राम ने योजना बनाई। भगवान राम विश्वामित्रजी से कहते हैं, हे नाथ, लक्ष्मण नगर देखना चाहता है। तो विश्वामित्रजी ने कहा कि लक्ष्मण की इच्छा है तो लक्ष्मण हो जाए। रामजी ने कहा, भगवन्, वो अकेला जाएगा तो इतनी बड़ी नगरी में कहीं भूल जाएगा रास्ता, तो मैं जाऊं और दिखाकर ले आऊं नगर। तो, भगवान की ये भी करुणा कि जीव अपनी आंखों से संसार देखेगा तो कभी चूक नहीं करेगा। ये संसार देखने योग्य है, ये मिथिला देखने योग्य है। लेकिन राम की आंखों से देखा जाए; तो ये जगत सुंदर है लेकिन कोई बुद्धपुरुष की आंखों से देखा जाए तो। और बुद्धपुरुष का एक लक्षण है, सद्गुरु का लक्षण है, वो दृष्टि देता है कि ऐसे देखो।

स्वामी रामतीर्थ बैठे थे और एक अंधा आदमी वहीं से निकला। उसने कहा, बाबा, मुझे रास्ता बताओ; मुझे रेलवे स्टेशन जाना है। स्वामीजी ने देखा ही नहीं, अनदेखा कर दिया। दूसरी बार पूछा, मैं अंधा हूं, मुझे रेलवे स्टेशन पहुंचना है; रास्ता दिखाओ। स्वामीजी कुछ नहीं बोले। एक शरारती युवान निकला। उसने कहा, महात्मा होकर जगत की रोटी खाते हो, इतना भी काम नहीं करते हो? ये बेचारा अंधा कह रहा है, मुझे रास्ता दिखाओ और आप रास्ता नहीं दिखाते? साधु का तो काम मार्गदर्शन करना है। स्वामीजी ने कहा, मैं रास्ता नहीं दिखाता, मैं दृष्टि देता हूं कि जिंदगी में दुबारा उसको पूछना ही ना पड़े; वो अपनी आंखों से रास्ता खोज ले। गुरु-सद्गुरु का काम है दृष्टि दे देना, एक आंख दे देना।

लक्ष्मणजी को लेकर रामजी सायंकाल नगरदर्शन के लिए मिथिला के मार्ग पर आए। संतों से मैंने सुना है कि जनकपुर में राम को देखने के लिए तीन प्रकार के दर्शक लोग निकले। एक, जो सब बड़े लोग जनकपुर के जो ज्ञानी, धर्म जाननेवाले शास्त्रज्ञ है, वो रास्ते के किनारे पर खड़े-खड़े राम को देख रहे हैं। दूसरा बालकवृंद अपनी रुचि के अनुसार राम को मोड़ते हैं। और तीसरा वर्ग मिथिला की स्त्रियां, मिथिला की महिलाएं जो अपने झरोखे से राम-लक्ष्मण का दर्शन कर रही है। संतों से मैंने

सुना कि जो पुरुष वर्ग रास्ते के किनारे खड़े राम को देखते थे वो सब ज्ञानी लोग थे। पढ़े-लिखे शास्त्रज्ञ और जो अपने आप को बहुत ज्ञानी मानते हैं वो निकट नहीं आ पाते। ज्ञानी लोग होते हैं वो ब्रह्म के बारे में बहुत जानते हैं, ब्रह्म को नहीं जानते! निर्दोष बालक स्वभाव ये सब राम को अपनी इच्छा के अनुसार मोड़ रहे हैं। और रही भक्तिमति माताएं मिथिला की स्त्रियां, वो राम का दर्शन करते-करते राम का परिचय प्राप्त कर लेती है कि ये कौन है? माताएं भक्ति है। और भक्ति परमात्मा की पहचान प्राप्त कर लेती है। ज्ञान ये भगवान के बारे में सोचता रहता है। निर्दोष चित्त परमात्मा के साथ क्रीड़ा करता है, चल सकता है। लक्ष्मणजी को लेकर भगवान राम फ़िर 'सुंदर-सदन' आए।

कल तक हमने कथा में गाया-सुना शिव और पार्वती का विवाह हुआ। शंकर है विश्वास और पार्वती है श्रद्धा। श्रद्धा और विश्वास जब एक हो जाए तब ही एक परम पुरुषार्थ का जन्म होता है। कार्तिकेय का जनम हुआ शिव और पार्वती के कारण। जब आदमी में श्रद्धा और विश्वास दोनों मिल जाए तो आदमी अच्छा पुरुषार्थ करने लगता है। कार्तिकेय मानी पुरुषार्थ। शिव और पार्वती के ब्याह के बाद कैलास पर उनका वार्तालाप होता है; उसमें से एक दूसरा जनम होनेवाला है; उसका नाम पुरुषार्थ नहीं है, परमार्थ है। परमार्थरूपी राम प्रगट होंगे। राम कौन हैं?

राम ब्रह्म परमारथ रूपा ।
अबिगत अलख अनादि अनूपा ।।

मैं उसको जोड़ना चाहूंगा। परमात्मा ने संसार में जिसके पुरुषार्थ को सफल किया हो उसका जीवन में कर्तव्य है अब जीवन में परमार्थ को प्रगट करे। आप उद्योग के पुरुषार्थ में सफल हो जाओ तो अब थोड़ा परमार्थ भी करो। विद्या के क्षेत्र में सफल हो जाओ तो परमार्थ करो। परमार्थरूपी राम को प्रगटाना है। क्योंकि राम केवल आधिभौतिक नहीं है, आध्यात्मिक है। ये जानकी की भूमि है ना इसलिए कहा कि सीता तीन प्रकार की माँ है। आधिभौतिक माँ, आधिदैविक माँ और आध्यात्मिक माँ। जो हमें अन्न देती है वो आधिभौतिक माँ; बच्चा पैदा होता है तो उसकी आधिभौतिक माँ, सांसारिक माँ उसको अन्न प्राशन कराती है, दूध पिलाती है, उसका पेट भरती है, बच्चे को बड़ा करती है। आधिदैविक माँ बच्चे को अन्न तो देती है लेकिन बड़े होनेवाले बच्चे के मति और मन को पुष्ट करती है। तीसरी आध्यात्मिक माता आत्मा देती है।

तो मेरे भाई-बहन, राम परमार्थ है, ब्रह्म है। उसको प्रगट करने की कथा शुरू होती है। एक बार शिवजी अपने हाथ से आसन बिछाकर कैलास के वेदविदित वटवृक्ष की छाया में बैठे हैं। योग्य अवसर समझकर पार्वती शिव के पास जाती है। शिवजी वाम भाग में आसन देते हैं। और पार्वती शिवजी से कहती है, अब आप रामतत्त्व क्या है उसकी पूरी कथा मुझे सुनाईए ताकि भविष्य में कभी राम के बारे में मेरे मन में कोई संदेह न उठे। शिवजी पार्वती की जिज्ञासा सुनते ही धन्यवाद देते हैं, हे देवी, आप को बहुत-बहुत धन्यवाद है। आपने ऐसी कथा की जिज्ञासा की जो सकल लोक को पवित्र करनेवाली गंगा है। आप के समान जगत में कोई उपकारी नहीं। शिवजी कहते हैं, देवी, निराकार ब्रह्म नराकार होता है। व्यापक ब्रह्म करुणा करके व्यक्ति होता है। भगवान का अवतार धरती पर क्यों हुआ, इनके कई कारण है और कोई कारण इदमित्थ नहीं है। क्योंकि भगवान को कार्य-कारण सिद्धांत लागू नहीं होता। मैं तुम्हें रामजनम के कारण बताउं। एक तो जय-विजय सनतकुमारों के श्राप से रावण-कुंभकर्ण बने एक अवतार में। दूसरा कारण सती वृंदा ने विष्णु भगवान को श्राप दिया इसलिए भगवान को मानव होना पड़ा। तीसरा कारण देवर्षि नारद ने विष्णु को श्राप दिया और परमात्मा को मनुष्यलीला करनी पड़ी। चौथा कारण मनु-शतरूपा ने कठिन तपस्या की। परमात्मा को प्रगट किए और मांगा कि अगले जनम में हमारे घर आप के समान पुत्र का जनम हो। पांचवां कारण राजा प्रतापभानु और वो कपटमुनि उसने प्रतापभानु को छला। ब्राह्मणों ने श्राप दिया। और प्रतापभानु दूसरे जनम में राक्षसकुल में अवतरित होता है उसके उद्धार के लिए परमात्मा को राम होना पड़ा।

रामकथा में राम के जनम की कथा से पहले रावण के अवतार की कथा लिखी। सूर्य उदित होता है इससे पहले रात्रि होती है इसलिए निशिचरवंश की कथा पहले, सूर्यवंश की कथा बाद में आयी। रावण, कुंभकर्ण और विभीषण ने बहुत तप किया। दुर्गम वरदान प्राप्त किए। वरदानों का दुरुपयोग हुआ। रावण और राक्षसों के इस भ्रष्टाचार से पूरी धरती अकुला उठी। गाय का रूप लेकर धरती ऋषि-मुनिओं के पास गई। सब देवताओं के पास गए। फ़िर सब मिलकर ब्रह्मा के पास आए। समग्र पृथ्वी, देवता, मुनिगण, पूरे अस्तित्व ने प्रभु को पुकारा। आकाशवाणी हुई, 'धैर्य धारण करो; रघुकुल में मैं प्रगट होउंगा मेरे अंशो के साथ।'

अब गोस्वामी हम सब को अयोध्या लिए चलते हैं, जहां भगवान का प्रागट्य होने वाला है। अयोध्या का राज्य। रघुकुल का शासन। सूर्यवंश का राजाधिराज महाराज दशरथजी जिसका नाम है; धर्म धुरंधर है, गुणनिधि है, ज्ञानी है, भक्त भी है। कौशल्यादि प्रिय रानियां पवित्र आचरण में जी रही है। मेरी व्यासपीठ ने कायम कहा है कि राम तो किसीके घर में भी प्रगट होने के लिए तैयार है। हमारा दांपत्य ऐसा यदि हो तो आज भी राम विश्राम के रूप में, आराम के रूप में हमारे घर आ सकते हैं। छोटी-सी फोर्म्यूला। महाराज दशरथजी अपनी रानीओं को प्यार करते हैं। और रानियां दशरथजी को आदर देती है। जिस घर में पति पत्नी से प्यार देगा और पत्नी पति को आदर देगी उसके घर में सुख स्वरूप रघुवंशमणि किसी ना किसी रूप में आएगा। और ख़बर नहीं क्या हो गया कि ये दो चीज़ नहीं हो पाती है और न हमारे घर में आराम है, न विराम है, न विश्राम है! जहां देखो वहां हराम है! किसी की नींद हराम है! किसी का धंधा हराम है! देहातों में बहुत अच्छा है। ये पढ़े-लिखे लोग जो नागरी बन गए हैं वो नगर के दांपत्य जीवन बीगड़े जा रहे हैं। एक दिन राजा को ग्लानि हुई कि मुझे पुत्र नहीं है; मेरे राज्य का कोई वारिस नहीं; मेरे से रघुकुल समाप्त हो जाएगा? अपनी पीड़ा मैं किससे कहूं?

राजा वशिष्ठजी के द्वार गए, अपने गुरु के पास गए। अपना सुख-दुःख सुनाया कि बाबा, मेरे नसीब में पुत्रसुख नहीं हैं? वशिष्ठजी ने कहा, थोड़ा धैर्य धारण करो। चार पुत्र की प्राप्ति होगी। और चारों पुत्र त्रिभुवन को उजागर करेंगे। त्रिभुवन में विदित होंगे। एक पुत्र कामेष्टि यज्ञ करना होगा। और यज्ञ की प्रक्रिया का आरंभ होता है। महर्षि शृंगी को बुलाया और पुत्र कामेष्टि यज्ञ में भक्ति सहित आहुतियां दी गई। आख़िरी आहुति के साथ अग्निदेव यज्ञपुरुष हाथ में प्रसाद की खीर लेकर यज्ञ मंडप से बाहर आए। वशिष्ठजी को यज्ञ की खीर दी। तीनों रानीओं ने यज्ञ-प्रसाद पाया और तीनों सगर्भा स्थिति का अनुभव करने लगी। भगवान कौशल्या के गर्भ में पधारें हैं। पूरे जगत में सुख-समृद्धि छा गई है। चर-अचर हर्ष का अनुभव कर रहे हैं क्योंकि राम का जन्म सुख की जड़ है। परमात्मा के प्रगट होने का समय निकट आया। त्रेतायुग, चैत्र मास, मधु मास, शुकल पक्ष, नौमी तिथि, भौम वार, मध्याह्न का समय। मंद सुगंध शीतल वायु बहने लगे। नदियों के पानी की जगह अमृत बहने लगा। जंगल-वन पुष्पित होने लगे। मणिओं की खानें निकलने लगी। जगनिवास परमात्मा अख़िल लोक विश्राम माँ कौशल्या के भवन में चतुर्भुज रूप में प्रगट हुए। प्रकाश होने लगा। गोस्वामीजी लिखते हैं-

भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्‌भुत रूप बिचारी।।

भगवान प्रगट हुए। माँ कह रही है प्रभु, आप ने हम को वचन दिया था कि मैं मनुष्यरूप में और पुत्र बन के आउंगा। आज मनुष्यरूप में नहीं, नारायणरूप में और बाप बनके आए हैं! आप मनुष्य होइए। भगवान राम ने दो हाथ कर लिए। माँ ने कहा, और छोटे हो जाओ। बालक की तरह प्रभु हो गए। माँ के अंक में बालरूप में भगवान रोने लगे। बालक के रोने की आवाज़ सुनकर और रानियां भ्रम के साथ दौड़ आई। महाराज के पास दासियां आई। राजा को कहने लगी, महाराजा, बधाई हो बधाई हो। पूरे विश्व में बधाई गुंजने उठी है। परमानंद में डूबे राजा ने कहा, बाजेवालों को बुलाइए, गुरुदेव को बुलाइए और अयोध्या में राम प्रागट्य का उत्सव आरंभ होता है। आप सभी को भी रामजनम की बधाई हो, बधाई हो।

बुद्ध के शून्य और परमबुद्ध शंकराचार्य के पूर्ण का समन्वय है शिव

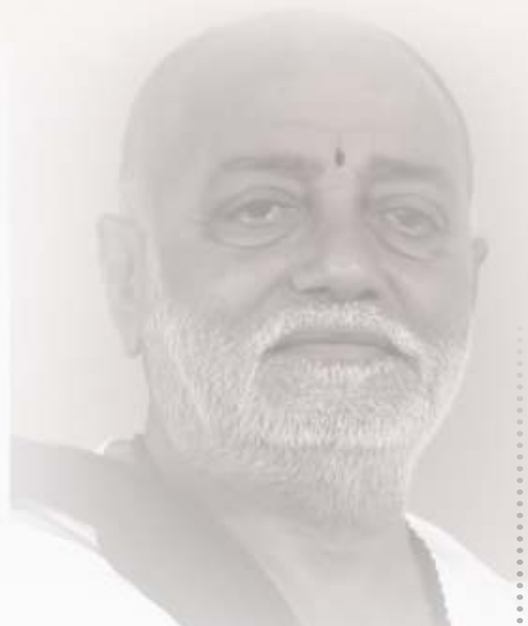

शिवलिंग तत्त्वतः शून्य का प्रतीक है। शून्य का अर्थ है पूर्ण रिक्त, जो बुद्ध का सिद्धांत है। शिवलिंग ब्रह्मांडी आकार है। बुद्ध का शून्य और परमबुद्ध शंकराचार्य जो पूर्ण की बात करते हैं; दोनों का समन्वय शिव है। राम को मानो, कृष्ण को मानो पर शिव की आलोचना मत करो। शिव है सबका समन्वय।

'मानस-धनुषजग्य' का मूल विचारबिंदु है 'मानस' के आधार पर अन्य संदर्भो को लेकर संवाद। 'बालकांड' अंतर्गत व्यासपीठ के मतानुसार नौ यज्ञ की सूचि है। १. पुत्रकामेष्टि-यज्ञ; जिसके कारण भगवान श्रीराम का प्राकट्य हुआ। २. ताडका-निर्वाण यज्ञ; विश्वामित्र के संग यज्ञरक्षा के लिए किया गया। ३. विश्वामित्र का अनुष्ठान-यज्ञ; विश्वामित्र के सिद्धाश्रम में विश्वामित्र अनुष्ठान चल रहा था उसकी पुष्टि भगवान राम ने की। ४. अहल्या का धैर्य-यज्ञ; अहल्या का धैर्य अथवा चेतना स्वीकार का यज्ञ। ५. रूप-यज्ञ अथवा सौंदर्य-यज्ञ; जनकपुर का दर्शन, मिथिला को दर्शन देकर कृतकृत्य करना। ६. प्रणय-यज्ञ; पुष्पवाटिका में सीता-राम का मिलन। प्रिय-प्रियतमा का मिलन। ७. धनुष-यज्ञ; भगवान राम धनुषभंग करके सीतामाता को प्राप्त करत हैं। धनुष-यज्ञ केन्द्रस्थ यज्ञ है। ८. समर-यज्ञ; परशुराम ने रूपक बनाया जिसका नाम समर-यज्ञ। ९. विवाह अथवा प्रणय-यज्ञ; सीता-राम और चारों भाई का विवाह।

धनुष-यज्ञ केन्द्र यज्ञ है। धनुष-यज्ञ क्या है? अध्यात्म अर्थ ये है कि ये शिव का यानी अहंकार का प्रतीक है। संसार के भय का प्रतीक माना है। ये संसार के भय को, संसाररूपी धनुष को नाम के प्रताप से तोड़ा जाता है। भगवान राम ने धनुष तोड़ा पर उनके नाम ने संसाररूपी भव-भय का भंजन किया। गोस्वामीजी का शब्द है, धनुषभंग, धनुषजग्य।

विश्वामित्र आदि मुनिगण के साथ राम-लक्ष्मण बैलगाडी में जनकपुर आए। जनकजी से मिले। जनकजी एक महात्मा, पुण्यात्मा, धर्मात्मा, एक राजर्षि महात्मा है। जनकजी स्वागत करते हैं। विश्वविदित पराक्रमी सोलह साल के दो कुमार धनुषयज्ञ की जानकारी प्राप्त करने आए हैं। अवध के राजकुमार को धनुष का दर्शन कराया जाय, ऐसा विश्वामित्र बोले। जनकजी ने कहा, धनुष दर्शन के पहले आपको उसका इतिहास बताऊं, जिससे धनुष-राज़

समझ में आए। मेरे पूर्वज सम्राट निमि के ज्येष्ठ पुत्र देवरात को ये धनुष धरोहर में सोंपा गया। विश्वामित्र ने कहा, यज्ञ का समापन कब होगा? जनक ने कहा, मैंने जो निर्णय किया है वो पूरा होते ही यज्ञ समापन होगा। तुलसी ने लिखा है, महाराज दक्ष के यज्ञ में सती ने देहत्याग, बलिदान किया तब भगवान शंकर बहुत कोपित हुए। स्थल है, महाराज जनक का पूजाकक्ष, जहां सत्संग होता है। भगवान शंकर ये धनुष से देवताओं के सिर काटने उद्युक्त हुए। देवता रो पड़े कि महादेव, आप क्यों हमारे सिर काटने आये? दक्ष ने यज्ञ में हमारा भाग नहीं रखा। तुलसीदास अपने ढंग से गाते हैं। शांडिल्य भगवान का 'भक्तिसूत्र' में एक सूत्र है, 'यहां पर जो कुछ कहा जाता है, पूर्व में कहा गया हुआ है।' पौराणिक कथाएं सब है। शास्त्र के नाम बदल जाते हैं। पंथ बदल जाते हैं। बोलनेवाला बदल जाता है। बोलनेवाले कि प्रस्तुति बदल जाती है। भाषा बदल जाती है, पर जिन्होंने जो जाना है वो पहले भी किसीने जाना है। यहां शांडिल्य कहते हैं, 'वर्तमान में वही किसी ने जाना है, भविष्य में वही लोग जानेंगे।' जो मूलतत्त्व है वो बदलता नहीं।

ये बड़ी पूर्व कथा है। आज बहुत कथाकार कथा सुनाते हैं। देश में हजारों की संख्या में कथावाचक है। मैं उनका स्वागत करता हूं। मेरा कायम का निवेदन है, मेरा कोई भी कथाकार छोटा-बड़ा नहीं होता। मेरा खास निवेदन है कि कोई प्रसिद्ध हो गया है और कोई प्रसिद्ध हो नहीं पाया, इतना ही फ़र्क है। सबकी अदाएं भिन्न है। हां, कोई शुभ वस्तु को स्वीकारकर नकल कर ले ये अलग है! बिहार का कोई कथाकार कथा करेगा तो उसमें मैथिलि भाषा, बिहारी भाषा, भोजपुरी का टच आएगा ही आएगा। मैं लाख हिन्दी बोलूं तो भी मेरी काठियावाडी बोली का टच आ ही जाएगा। अपनी भाषा, अपने शब्द बिलग-बिलग है, पर कहा तो वही जाता है जो पूर्वउक्त है। सबकी भाषा, सबकी प्रस्तुति, सबके शब्द बिलग, सबकी बोलने की बिधा बिलग है। बाकी सब पूर्वउक्त है, एसा शांडिल्य का 'भक्तिसूत्र' में एक सूत्र है।

यहां जनक कहते हैं, एक घटी घटना मैं आपसे कहूं। भगवान शिव बोले, मैं तुम्हारे महत्त्व के अंग मस्तिष्क को काट दूंगा। शिवजी इतना क्रोध करे? पर उनके लिए 'मानस' में लिखा है -

करालं महाकाल कालं कृपालं।
गुणागार संसारपारं नतोऽहं।।

भगवान शिव ने धनुष तैयार किया। सब देवता के सिर काटने के लिए निर्णय किया। सब देवता घबरा गये कि अब तो गये बस! अब विष्णु की शरण जाएं? ब्रह्मा के पास जाएं? बूढ़े बाबा कह देंगे, ये आदमी ही संहार का है! वो तो मना कर देंगे। नारद के पास जाएं? सनत कुमारों के पास जाएं? जाएं तो कहां जाएं? तब इन्द्र ने फैसला किया कि जिसने बांधा है वही छोड़ेगा। हम सब शिव की शरण में जाएं। समस्त देवकुल गये। सभी देव शिव की शरण में आये। जनक कहते हैं, पांच मिनट पहले सबके सिर काटने की उद्घोषणा और जैसे ही शरण आये हैं तो, तुरंत शब्द आया 'कृपालं', द्रवित हुए। यज्ञ में दक्ष आपका भाग न रखे तो हमें भी इस सभा में उपस्थित न रहना चाहिए। हम फिर भी हमारे स्वार्थ के खातर यज्ञ में चूककर आ गए है! भोलेनाथ, हमें क्षमा करे।

बिलकुल थोड़े में राजी हो जाय ऐसा इस त्रिभुवन में ईश्वर है तो केवल महादेव। महादेव धर्मनिरपेक्ष है, वर्णनिरपेक्ष है, भाषानिरपेक्ष है, कालनिरपेक्ष है, वयनिरपेक्ष है, स्थाननिरपेक्ष है, युगनिरपेक्ष है। एक मात्र देवाधिदेव है। शरण आये देवताओं को महादेव ने माफ कर दिया। बिलकुल थोडे में राजी होवे तो वो है महादेव। उसी समय उसी देवता के इस मस्तिष्क को काटने शिव ने उद्घोषणा की थी, वो ही धनुष भगवान शिव ने देवता को दे दिया। और देवताओं ने यह धनुष हमारे कुलपूर्वज देवरात को धरोहर के रूप में दिया। तबसे हमारी मिथिला में यह धनुष की पूजा होती है। यह धनुष बहुत भारी है। कई किन्नर देवता, यक्ष इसके दर्शन के लिए आते हैं। नित्य उसकी षोडोपचार पूजा होती है।

मुझे कल किसीने पूछा था, 'बापू, ये बिहार बहार कब होगा?' बिहार को बहार बनाने के लिए सिर्फ ह्रस्व इ निकालनी है। जैसे 'बिहार-बहार।' बिहार बहार ही है, जो ह्रस्व निकल जाये। मैं पहले टीचर था। अभी

भी टीचर ही हूं। फर्क बस इतना है कि उस समय चालीस छात्र थे और आज चालीस हजार बैठे हैं! मेरा क्लासरूम बढ़ता ही जाता है। पंडाल बढ़ाना पड़ता है। ये पुष्पक विमान जैसा मेरा कथामंडप है! पुष्पक विमान ऐसा था कि चार लोग बैठे तो छोटा, आठ बैठे तो बड़ा और हजार बैठे तो ओर बड़ा! बढ़ता ही जाता है। मेरा पंडाल भी ऐसा है। तो ये बिहार को बहार बनाने के लिए कोई दूसरा शब्द लाने की या कुछ ओर लिखने की जरूरत नहीं है। ये सब आंटी-घुटियां निकल जाए तो बहार ही बहार है। यहां तो सदाबहार होनी चाहिए। और आपको ये पता है, जनक की पुष्पवाटिका मैं कभी वर्षाऋतु नहीं आती थी! कभी पानखर, शिशिर, शरद, ग्रीष्म नहीं आती थी! बिहार में बारे मास वसंतऋतु ही रहे। इसलिए जब प्रणययज्ञ करते हैं तो गाते हैं-

तेहि अवसर सीता तहँ आई ।
गिरिजा पूजन जननी पठाई ।।

यहां बुद्ध की याद आती है। जानकी तो जीवन है। जानकी के बिना जान किं? यदि जान ही नहीं तो इन्सान की क्या किंमत? जान है तो ही जान की कोई पूछ है। बाकी तो सब शब है। ये माँ की भूमि है। महादेव को याद करो। जहां मंदिर ना हो वहां मंदिर बनाने के लिए कोई मुझे पूछे तो मैं कहूं, महादेव का बनाओ। महादेव में सब आ जाएगा।

इस शून्य में समस्त देव और पूर्ण से कोई बाहर रह नहीं सकता है। ये शिवलिंग तत्त्वत: शून्य का प्रतीक है। शून्य का अर्थ है पूर्ण रिक्त, जो बुद्ध का सिद्धांत है। शिवलिंग ब्रह्मांडी आकार है। बुद्ध का शून्य और परमबुद्ध शंकराचार्य जो पूर्ण की बात करते हैं; दोनों का समन्वय शिव है। राम को मानो, कृष्ण को मानो पर शिव की आलोचना मत करो। शिव है सबका समन्वय। देवता की स्तुति से बाबा प्रसन्न हो गए। जनकजी ने कहा, मैं हल जोतकर किसानी कर रहा था, तब मेरे यहां कन्या प्राप्त हुई। जिनका नाम हमने सीता रखा। अब प्रश्न ये हुआ कि ये कन्या मैं किसको दूं? इस कन्या के लायक इस विश्व में कौन होगा? तभी से इस धनुष की पूजा करते हुए ये धनुषजग्य का प्रारंभ कर दिया। और इस यज्ञ की पूर्णाहुति मैं तब करूंगा जब पृथ्वी का कोई वीर धनुष तोड़ सकेगा। उसे मैं अपनी बेटी दूंगा। ये बात सुनकर मेरे नगर में कई राजा-महाराजा, देवता, किन्नर, यक्ष आते रहे। कोई धनुष को चढ़ा नहीं पाया।

एक बार बहुत राजा आए पर हार गए। मैंने सब राजा को विनय से कहा, अब आप चले आओ। तब सब राजा जनकपुर पर घेरा लगाकर एक साल तक लड़ते रहे। जनक की सैन्य शक्ति कमजोर हो गई। भक्ति जहां जाएगी उसे थोड़ा सहन करना आएगा ही। फिर वो जनक हो कि हनुमान हो। जिसने भक्ति को आत्मसात् किया उसको घेरा जाएगा। आसुरीवृत्ति के राजाओं ने जनकपुरी को घेरा था। जनक ने कथा आगे बढ़ाई और कहा, तब मैंने देवता की साधना की। देवतागण प्रसन्न हुए और अपनी सेना मेरी सहाय के लिए भेजी। तब सब राजा लोग भागे और ये बात पूरी दुनिया में फैल गई।

विश्वामित्र ने कहा, मेरे ये दो राजकुमार मेरे कहने पर आपके धनुष का दर्शन करना चाहते हैं। जनक ने अपने दो सचिव को बुलाया और आज्ञा दी कि धनुष ले आओ और धनुष लाया गया। धनुष को लोहे के संदूक में रखा गया है। उसके आठ पहिए हैं, आठ चक्र है। पांच हजार ताजे और मोटे मल्ल जैसे वीर लोगों ने संदूक को धकेलने का प्रयास किया है। अष्टचक्रा गाड़ी में धनुष को उस पूजास्थान से लाया गया और कहा राजकुमार को कि आप देख सकते हो धनुष को। तुलसी संदर्भ बदलते हैं -

उठहु राम भंजहु भवचापा।

संदर्भ वही का वही, प्रस्तुति बदल जाती है। राम के शील ने तो मार दिया दुनिया को! शील तो कोई राम से सीखे। चित्रकूट में भरत और राम इतने गले मिले कि तब राम भरत में इतने डूब गए और कौन-कौन साथ में आया ये भी भूल गए! चित्रकूट में देखिए राम-भरत मिलन की घटना!

वशिष्ठजी जिस निषाद को दूर से मिलते थे अति संस्कार के कारण कि वो अधम है। आशीर्वाद दूर से देते हैं। उसी निषाद ने कहा, प्रभु, गुरुवर आए हैं। कभी-कभी आखिरी व्यक्ति ही गुरुजनों के संकेत करती है। जो गुरु न कर पाये वो आज निषाद ने कर दिया! कभी किसी

को छोटा मत समझो! गुरु का स्मरण आज निषाद ने करवाया। पहला निवेदन गुरु का चित्रकूट में है -

सीलसिंधु सुनि गुर आगवनू।
सिय समीप राखे रिपुदवनू।।

आहा! शब्द तो कोई तुलसी से सीखे! कोई बुद्धपुरुष की प्रथम शील उसकी आंख है। कोई भी बुद्धपुरुष उसकी वाणी से नहीं, शील से पहचाना जाता है। उसकी आंख से ही पता चलता है कि यह पुरुष शीलवान है कि बलवान है? धीर है कि अधीर है? शिकारी है कि पूजारी है कि वासना में डूबी आंख है? अध्यात्मजगत में आंख की बड़ी महिमा है।

मैं छोटा था तब मेरी पूजा के लिए अगल-बगल की वाडी में गुलाब-डोलर के फूल लेने सुबह तीन-साड़े तीन बजे जाता था। मेरा कौतुक और आनंद था। कलि जब तक फूल न बन जाए तब तक बैठता था। मेरा देवता वो था उस समय। मैं टकटकी लगाए देखता था। एकाग्र होने के लिए कितना सूक्ष्म निरीक्षण करना पड़ता है! सूक्ष्म परिवर्तन होता है क्षण-क्षण। उसे देखने के लिए बहुत एकाग्र होना पड़ता है। जब पंखुडियां धीरे-धीरे खूलती तब मैं भान में आता था। मुझे लगता है, ध्यान सीखना है तो फूलों से सीखो। दिमाग खाली रखकर बैठ जाओ और कलि से फूल बनने दो। रवीन्द्रनाथ टागोर ने कहा, कमल की सभी पंखुडियां खुल जाए उसीका नाम मोक्ष है, उसीका नाम निर्वाण है। न संप्रदाय, न धर्म कुछ बीचमें आता है। यह एकाग्रता में सभी चित्तवृत्तियों खतम हो जाती थी। यह ध्यान था, साहब! उसका प्रमाणपत्र है शायर से मिला -

नजारा देखिए कलि के फूल होने का।
यही वक्त है दुआएं कुबूल होने का।

- राहत इन्दौरी

यहां वो ध्यान है जिस पर परम के हस्ताक्षर होते हैं। अब ये फूल तोड़ने का मन नहीं होता, क्योंकि अब ये फूल मैं किसको चढ़ाऊं? मैंने तो अपना मन चढ़ा दिया।

संत शील से पहचाना जाता है। शील महिमावंत है। तो, मैं बिहार की ज्यादा बातें कर रहा हूं। ये बुद्ध की भूमि है। एक दिन बुद्ध बैठे हैं। उनके हाथ में रूमाल है और सब शिष्य को दिखाते हैं, 'ये क्या है?' 'रूमाल है।' 'सत्य है?' 'हां, सत्य है।' फिर रूमाल में पांच-छ गांठ बांध देते हैं और कहते हैं, अब रूमाल ही है कि कुछ ओर हो गया? एक शिष्य ने कहा, ये रूमाल ही है। पर अब रूमाल है भी, नहीं भी। रूमाल का मूल रूप नहीं रहा गांठ लगने से। बुद्ध ने फिर सभी गांठें छोड़ दी। अब रूमाल हो गया? कहा, हां, अब सब रूमाल है।

बुद्ध ने कहा, रूमाल ही था। रूमाल कहीं नहीं गया। बस, वैसे ही संप्रदाय, छोटे-छोटे पंथ, छोटी-छोटी अक्कडता, छोटी-छोटी धार्मिक संकीर्णता की गांठों ने परमात्मा को थोड़ा विकृत कर दिया! कौन माने, कौन समझाएं, कौन मेहनत करेगा? योग आएगा तो सत्य निकलेगा, बाकी कौन इसको पढ़े?

जनकजी कथा कहते हैं, जब मैं भूमिशोधन कर रहा था यज्ञ के लिए। मुझे अयोनिजा पुत्री मिली। राजकुमार, आप देखो, ये ही धनुष है। और लोहे की संदूक का दरवाजा खोला गया। चंदन का लेप था धनुष पर, ताजें फूलों से उसकी पूजा की गई थी। राघव मुस्कुराकर यही शील से कहते हैं, 'बाबा, मिथिलेश से पूछ लेना, मैं इस धनुष को पकड़कर ऊपर ले सकता हूं?' सोलह साल का लड़का पूछता है, मैं जरा ऊठाउं इसको? जनक ने कहा, मेरे लिए तो ये अद्‌भुत बात है! आपका राजकुमार शीलवान है। मेरा सौभाग्य है। मिथिला की शान बढ़ेगी अगर ये घटना घट जाए तो। मिथिला की कीर्ति बढ़ेगी, क्योंकि मेरा संकल्प है। और मेरे राघव ने धनुष उठाया। बीचवाला भाग पकड़ा। बांये हाथ से पणछ खींची। कहीं बल दिखाने की कोई चेष्टा नहीं की। जैसे कलि खील रही है धीरे-धीरे।

यहां मेरे राघव ने धनुष उठाया और दोरी खींची और सोचा कि मैं टंकार करूं? पर जरा जोर से खींची और ब्रह्मांड को विदित कर दे ऐसे कड़ाके के साथ धनुष टूटा! धनुष टूटता है और जनक की आंखें डबडबा गई! भगवान, मैं क्या देखता हूं? जनकजी भाव से भर गये। मेरी मिथिला की कीर्ति बढ़ाने आया है ये युवक। मेरे धनुष-यज्ञ को पूर्णाहुति का समय आ गया। पर इससे पहले मैं मेरे सचिवों को बुलाउं। आप जरा उसे संदेश दो

कि अवधपति को संदेश देकर यहां ले आए। सचिव अवध जाते हैं। महाराज दशरथ बारात लेकर जाते हैं। ब्याह होता है। बिदाई हो गई। धनुष-यज्ञ का क्या? जनक शतानंद को कहते हैं, आज मेरे धनुषजग्य की पूर्णाहुति हो गई। सीयाजू सोंप दी। बलिदान में मैंने मेरी ममता दे दी। ये घटना वाल्मीकि आधार से मैंने संक्षिप्त रूप में आपसे कही।

तो, नव यज्ञ 'बालकांड' के अंतर्गत, मेरी व्यासपीठ के मतानुसार मेरी जिम्मेवारी के साथ। भगवान का जन्म पुत्रकाम-यज्ञ। ताडका का निर्वाण, निर्वाण-यज्ञ। विश्वामित्र का आनुष्ठानिक यज्ञ। अहल्या का धैर्य-यज्ञ। मिथिला में प्रभु का सौंदर्य-यज्ञ, छठ्ठा यज्ञ अब प्रणय-यज्ञ। पुष्पवाटिका में प्रिया-प्रियतम का जो प्रेमपूर्ण मिलन हो रहा है उसको मेरी व्यासपीठ प्रणय-यज्ञ कहती है, उसकी ओर आगे बढ़ें।

'आपके कथावाचन का उद्देश्य क्या?' निरुद्देश। गंगा को पूछो, तू क्यों बहती है? क्या जवाब देगी? बस, मैं दौड़ती हूं, मेरा कोई उद्देश नहीं है। मीरां को पूछा गया कि आप कृष्ण के पाने के लिए दौड़ रही है, कृष्ण को पांच हजार साल हो गई है! जवाब दिया, आपने किसी ने गलत समाचार दिया। मैं कृष्ण को पाने के लिए नहीं दौड़ती। कृष्ण मिले न मिले, ये निर्णय उनका है। मुझे उसे पाने के लिए दौड़ने में जो आनंद आता है, इसीलिए मैं दौड़ती हूं। हां, कथा के उद्देश तुलसीजी ने बताये और मैं भी बोलता हूं कि कथा का उद्देश, 'स्वान्तः सुखाय', 'निजगिरा पावनि', 'मोरे मन प्रबोध।' पर अब यह सब मेरे उद्देश भी करीब-करीब छूटते जा रहे हैं। कोई हेतु नहीं, बस! गाना है, आपको सुनाना है।

'बापू, आप ज्योतिषशास्त्र के बारे में कहे। क्या ये 'मानस' संमत है?' हां, ज्योतिष शास्त्र है, अवश्य। मैं मानता हूं। वो एक शास्त्र है, पर मेरी उसमें कोई रुचि नहीं है। क्योंकि मुझे कोई मंगल परेशान नहीं करता क्योंकि मैं गाता हूं 'मंगल भवन' को। और ये 'मानस' संमत भी है। 'आप 'मानस' के ग्रंथ को खुद क्यों बांधते है?' क्योंकि उसने मुझे बांधा है। और कुछ सेवा खुद को ही करनी होती है। 'आप का सफेद कुर्ता वैराग का प्रतीक है तो काली शाल किसका प्रतीक है?' प्रेम का।

'आप शनिवार को ही क्यों कथा कहते हैं? शनि की तकलीफ़ है?' इस व्यस्त दुनिया को शनिवार शाम और रविवार सुबह करके हफ़ते में कुल चार दिन कथा में आने की सुविधा रहे इसीलिए। ये प्रेक्टिकल निर्णय है। नवरात्रि में तिथि के अनुकूल चलना पड़ता है तो कोई भी दिन से शुरू करता हूं। हमारे कथा की ऐसी विधि होती थी कि कथा एक पक्ष से दूसरे पक्ष में या एक महिने से दूसरे में न पूरा हो; या साल भी बीच में बदलनी नहीं चाहिए, ऐसी पुरानी विधि थी। लेकिन मेरी कथा में सब बदल सकता है। 'रामायण' की कथा के लिए कोई विधि की जरूरत नहीं, विश्वास की जरूरत है। शनि का ड़र-बर कुछ नहीं! जो मंत्र, जो कथा, जो विधि तुम्हें भयभीत करे, कृपया मोरारिबापू हाथ जोड़कर कह रहा है, इससे दूर रहो। एक हनुमंत का आश्रय करो, बाकी छोड़ो यार! आदर सब को दो, निष्ठा एक में रखो, परमतत्त्व में। मूल तत्त्व को पकड़ो। मूल तुम्हारा कोई भी हो। आप की जहां निष्ठा हो।

आप 'रामायण' का 'अरण्यकांड' पढ़िये। वहां सुतीक्ष्ण की कथा है। उन्होंने अपने दर्शन से भगवान को पाने के कुछ सिद्धांत प्रगट किये। और जब राम आ रहे हैं ऐसा सुना सुतीक्ष्ण ने तो वो अपनी ओर दृष्टि करके सोचते हैं तो उसको लगा, मैंने सिद्धांत तो सोचे लेकिन इनमें से कोई मुझ में नहीं! वहां तुलसी ने लिस्ट दिया कि दृढ़ भरोसा हो तो हरि मिले। सुतीक्ष्णजी सोचते हैं, मुझ में भरोसा दृढ़ नहीं, भक्ति भी नहीं, वैराग्य और ज्ञान भी नहीं।

नहीं सतसंग जोग जप जागा ।
नहीं दृढ़ चरन कमल अनुरागा ।।

आगे कहते हैं, मुझमें सत्संग नहीं है; योग, जप, याग और चरनकमल में दृढ़ अनुराग भी नहीं है। तब किसीने सुतीक्ष्णजी को पूछा कि तो फ़िर भगवान आप को किस मुद्दे पर मिलेंगे? तब बोले-

एक बानि करुनानिधान की ।
सो प्रिय जाकें गति न आन की ।।

'मानस-धनुषजग्य' को केन्द्र में रखते हुए आईये, एक ओर यज्ञ की यात्रा करें; प्रयण-यज्ञ। कल की कथा में हमने देखा-सुना कि राम-लक्ष्मण दोनों भाई ने पूरी जनकपुरी को अपने रूप में डूबोकर मोह ली। दूसरे दिन सुबह गुरु के लिए पूजा के फूल लेने के लिए दोनों भाई जनकराजा की पुष्पवाटिका में जाते हैं। प्रसंग बड़ा अद्‌भुत है। यज्ञ को लक्ष में रखा है और यह प्रणय-यज्ञ है। 'मानस' में दो वाटिका है। दोनों वाटिका के केन्द्र में जानकीजी हैं। एक जनक की विदेहनगर की पुष्पवाटिका। दूसरी रावण की देहनगर की वाटिका अशोक-वाटिका। पुष्पवाटिका में जानकीजी को वरदान-आशीर्वाद प्राप्त हुआ वह भगवान के द्वारा प्राप्त हुआ। अशोकवाटिका में जानकीजी की पीड़ा हरने के लिए गौरी-भवानी नहीं गई पर जिसको हम शंकर का अवतार मानते हैं, वो 'वानराकार विग्रह पुरारि' गौरीशंकर मदद में आया। पुष्पवाटिका में लक्ष्मणजी जरा जल्दी करते हैं। रामजी ने कहा, मालीगण को पूछे बिना प्रवेश करना ठीक नहीं। माली को रामजी शील से पूछते हैं। अनुमति दी गई। सहायक हुए।

गुरु के पूजा के पुष्प रामजी खुद चुन रहे हैं। रामजी घूम रहे हैं और उसी समय जानकीजी यहां से प्रवेश करती है। अष्ट सखिओं का वृंद है, किशोरीजी केन्द्र में है। माँ सुनयना ने गौरी-पूजा के लिए अपनी बेटी को सखिओं के संग भेजी। सब सखियां सुंदर है। सुंदर होना परमात्मा की कृपा है। लेकिन तुलसीदासजी एक शब्द जोड़ते हैं। सुंदर भी है; सयानी भी है; समझदार है; विवेकी है। अगर समझदारी न हो तो भक्ति के साथ यात्रा नहीं हो सकती। सुंदरता के साथ सयानप जरूरी है। रजोगुणी रूप पतन की यात्रा कर देता है। सीता और सखिओं ने निर्मल सरोवर में स्नान किया। बाग में प्रवेश। फ़िर गौर-पूजा। एक सयानी सखी बाग देखने के लिए पीछे रह गई। मंदिर के देव से उसको ये बाग की रोनक ज्यादा आकृष्ट कर गई। बाग के वैभव का रस ले रही सखी ने बाग में फूल चुनते हुए दोनों भाईओं को देख लिया। राम को देखते ही भाव में डूब जाती है। दौड़कर गौरी के मंदिर में से सीयाजू को कहती है, सीया! जो राजकुमार ने सब को मोहित कर डाला था गत संध्या को, वो आये हैं।

देखो! यज्ञ में बहुत-सी वस्तुएं होती है। मुझे सात वस्तु रखनी है। एक तो यज्ञ-भूमि होती है। यज्ञ-कुंड होता है। अंदर अग्नि होता है। आहुति देनेवाला होता होता है यजमान। आचार्य होता है। आहुति का द्रव्य होता है। मंत्र होता है। यह प्रणय-यज्ञ में अग्नि कौन-सी? द्रव्य क्या? मंत्र कौन? आचार्य कौन? अग्निकुंड क्या है? ये सब कहना है। तुलसी अद्‌भुत है! तुलसी पृथ्वी पर आया हुआ अकस्मात नहीं है, अस्तित्व की व्यवस्था है। तुलसी नहीं होते तो दुनिया का क्या होता? दुनिया क्या? मेरा क्या होता? तुलसी तुलसी है, एक व्यवस्था है। परमात्मा के अंतरंग संत में से एक को भेजा गया था धरती पर कि त्रेतायुग को एक ब्रह्म देकर आओ 'रामचरित मानस' के रूप में। वेद बहुत बड़ा है, लोग पढ़ नहीं पायें।

मुझे आप को सलाह नहीं देनी है मेरे बिहारी भाई-बहन, 'रामायण' के पाठ करो तो पाय लागूं। याद करो तो कहना ही क्या? लेकिन ये कुछ न कर सको तो भी कम से कम अपने घर में एक 'रामचरित मानस' रखना ताकि एक तसल्ली होगी, हमारे घर में ब्रह्म बैठा है। हमारे घर में परमात्मा बैठा है। 'मानस' की बड़ी महिमा है। और मेरी इस अपील पर देश-विदेश के युवान भाई-बहन कहीं भी जाते हैं। पढ़े ना पढ़े, 'मानस' अपनी झोली में रखते हैं। 'मानस' ही उसका पासपोर्ट बन गया; परिचय पत्र हो गया। प्रश्न होगा कि झोली में पड़ा 'मानस' क्या करेगा? आप की जेब में हज़ार की नोट हो, आप एक भी पैसा न खर्चो तो भी मस्ती कितनी रहती है? रीक्षा नहीं मिलेगी तो टेक्षी कर लेंगे, हजार रूपये जो है। हजार की नोट इतनी तसल्ली देती है, जिसकी झोली में 'रामचरित मानस' हो वो तो भव सागर पार हो जाता है। 'मानस' की महिमा अद्‌भुत है।

अब देखो, सखी ने राम को देखा तो राम बाग देख नहीं रहे थे, फूल चुन रहे थे। लेकिन सखी ने कहा,'देखन' ये झुठ बोली? नहीं तो। सखी है वो मार्गदर्शक है, वो सद्‌गुरु है और सद्‌गुरु जानकी को ब्रह्म का परिचय देने के लिए आया है। और सद्‌गुरु का दायित्व

है, जिसको दर्शन कराना है उसकी दृष्टि में परमात्मा का अवमूल्यन न हो। अगर कहे कि राजकुमार फूल चुन रहे हैं तो शायद सीताजी को इतना आदर न भी रहे। इसलिए बाग देखने की बात कही। अब जानकीजी को विरहाग्नि हुआ है। यह प्रणय-यज्ञ का अग्नि है एक तड़प। अग्नि स्थापन हो रहा है। चारों ओर जानकी देख रही है। यही अग्नि देवता। यज्ञ-भूमि पुष्पवाटिका। यज्ञकुंड है कुंज-लता। अग्नि का स्थापन है चकित चित्त। तरस के बिना तृप्ति का कोई मूल्य नहीं। भगवान करे, सब के जीवन में तरस और तृप्ति समान रूप में स्थापित हो। सीयाजू बेताब है, सखी से पूछती है, जल्दी बता, कैसे लगते हैं? सखी ने कहा, सीया! तू खुद देख ले। उसका कथन नहीं हो सकता। ब्रह्म के बारे में बोला नहीं जा सकता। वेद 'नेति' कहते हैं। जानकी, तू स्वयं देख ले, आ! सद्‌गुरु वो है जो केवल शास्त्र की व्याख्या ही न करे, अवसर आने पर साधक को ब्रह्म के रूबरू करा दे। ब्रह्म का साक्षात्कार करा दे। वो सखी आगे चली। संतों से मैंने सुना, राम को देखके आयी है, वो ही दिखा सकेगी इसलिए वह आगे चली। और जानकीजी जब चल रही है तो पैर के नूपुर, कटि भाग की किंकिनी और हाथ के कंगन; तीन आभूषण की मधुर धुनी सुनाई दी। भक्ति के तीन आभूषण है - नूपुर, कटि की किंकिनी और हाथ के कंगन। मेरी व्यासपीठ सदा कहती रही, पैर के नूपुर ये आचरण के प्रतीक है। कटि भाग की किंकिनी संयम का प्रतीक है। और हाथ का कंगन ये समर्पण और त्याग का प्रतीक है। भक्त का आचरण, भक्त का संयम और भक्त का समर्पण ये खुद में ऐसी एक मधुर आवाज़ है, परमात्मा को भक्ति की ओर देखने को मज़बूर करे। भगवान ये तीन प्रकार की आवाज़ सुनकर ये देखने के लिए बेताब हुए कि कौन आ रहा है? इतने में सखीओं के संग जानकीजी दिखाई दी दूर से। और भगवान ने देखते ही लखन का हाथ पकड़ा और कहा, 'लखन! देख, यह वही जनक की पुत्री जानकी है जिनके लिए धनुषयज्ञ हो रहा है।'

सीयाजू वहां आई। दोनों भाई लताभवन से बाहर आये, सीयाजू ने राम की छबि देखी। गुरु भूमिका में जो सखी थी वो बीच से हट गई। इसका मतलब संतों से मैंने सुना, गुरु की भूमिका इतनी कि जीव को प्रभु के साक्षात्कार कराके फिर बीच में से हट जाय। दर्शन करके सीयाजू ने अपने नेत्रों के दरवाजें से प्रियतम की छबी हृदय के कमरे में लाकर मर्यादा से नेत्र बंद कर दिए। भाव में डूबी जानकी ध्यानस्थ हुई है। जानकी को परवश देखकर सखी बोली, अब हम जायें, देर हो गई है। जानकीजी बार-बार पीछे मुड़कर देख लेती है, मर्यादा के साथ। सीयाजू झरने को देखने के बहाने, हिरण को देखने के बहाने, फूल, पौधें देखने के बहाने मुड़कर राजकुमार को देख लेती है। मेरे भाई-बहन, ईश्वर मंदिर में तो है। मंदिर की महिमा है, होनी चाहिए। लेकिन परमात्मा को देखने के ओर कई तरीके हैं। बहता झरना, खिलता फूल, पक्षी की आवाज़ भी, शीत पवन की लहर भी हमें परमात्मा की खुशखबर देती है। जानकीजी प्रकृति के सभी अंगों के द्वारा परमेश्वर की ओर संकेत करती है।

फिर से भवानी के मंदिर में सखी के संग आई। अब पार्वती की स्तुति की। मेरे राष्ट्र की कुंआरी बेटियों को ये स्तुति सीख लेनी चाहिए। जिसको राम जैसा पति मिले ऐसी भावना हो, उसको ये स्तुति बहुत याद रखने जैसी है। इतनी विनय से जानकी ने गौरी की स्तुति की तो जानकी की स्तुति सुनकर भाव में आई। पार्वती बोली; प्रसादी की माला गिरकर जानकीजी के हाथ में आई। मूरति मुस्कुराई और बोली। प्रेम का ये सामर्थ्य है कि कुछ भी हो सकता है। मुझे तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं हैं। हमारे लिए असंभव-सा है, क्योंकि हमारे साथ तो पडौशी भी नहीं बोलता! घर में नहीं बोलते! विनय और प्रेम हो तो देव उसके वश होकर बोलते जरूर है। मुस्कुरा सकते हैं, प्रसाद दे सकते हैं। गौरी क्या बोली? 'हे जानकी, तुम्हारे मन में जो सांवरा बस गया है, शीलवान-सुजान, वो तुम्हें मिलेगा।' जानकीजी आनंद से भर गई। आशीर्वाद लेकर जानकीजी निजभवन जाके माँ को सब बात बता दी। माता को संतोष हुआ। और इस तरफ सीताजी की सुंदरता को हृदय से बखानते हुए राम-लखन विश्वामित्र के पास पुष्प लेकर आए। आज धनुषयज्ञ का दिन है, जिस प्रसंग के आधार पर कथा चल रही है वो दिन आया। जनकजी के द्वारा निमंत्रित विश्वामित्र, राम और लक्ष्मण धनुषयज्ञ में पधारें।

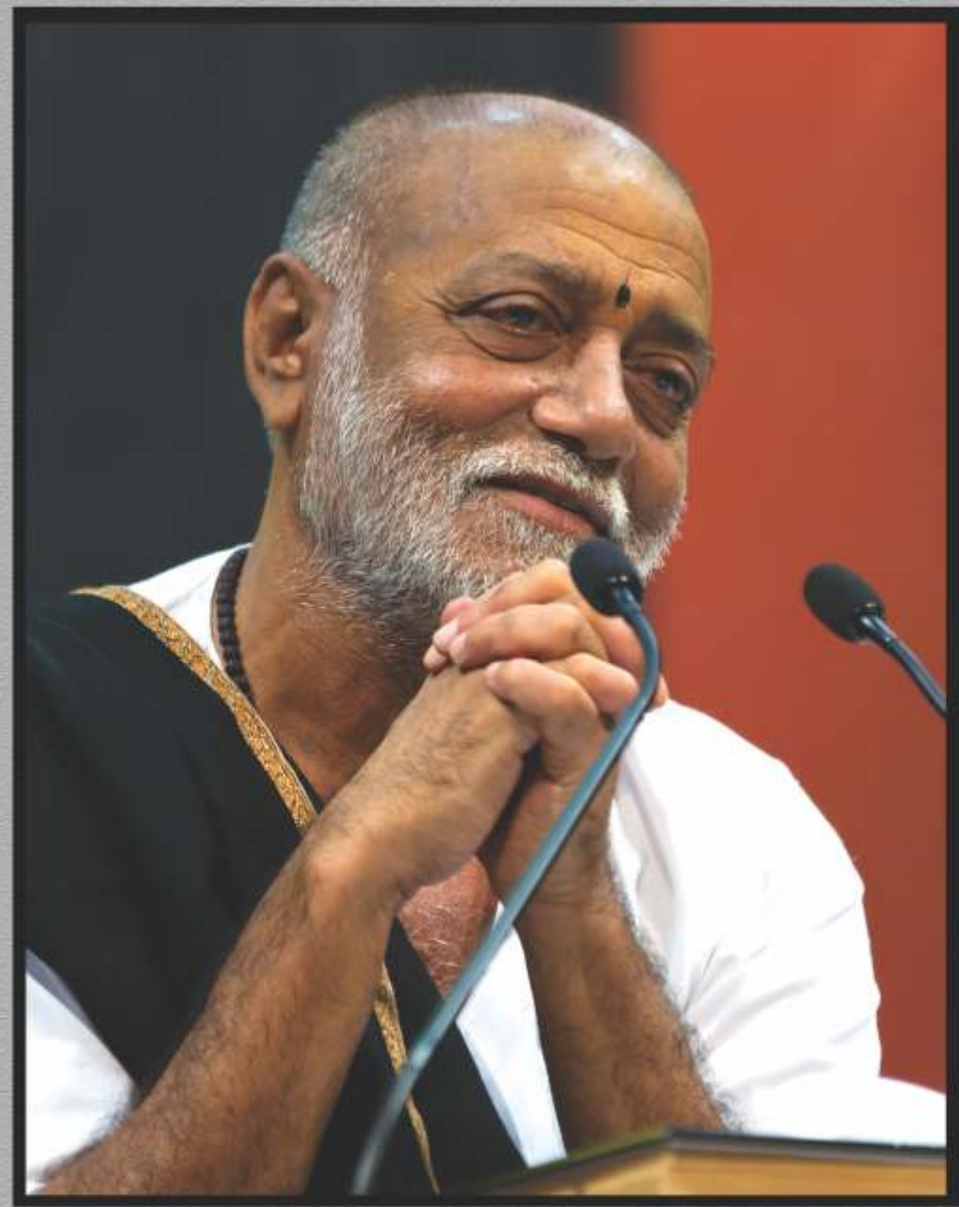

कथा-दर्शन

- 'रामायण' की कथा के लिए कोई विधि की जरूरत नहीं, विश्वास की जरूरत है।
- 'रामचरित मानस' मनोविज्ञान से भरा शास्त्र हैं।
- तुलसी पृथ्वी पर आया हुआ अकस्मात नहीं है, अस्तित्व की व्यवस्था है।
- जिसके द्वारा साधक की अहंता और ममता मिट जाए उसको यज्ञ कहते हैं।
- भजन स्वभाव है, भजन साधन नहीं है।
- प्रसाद परमात्मा के घर से आया हुआ रसायन है।
- परमेश्वर मिलना आसान है, भक्ति मिलना मुश्किल है।
- श्रद्धा से भगवान की प्राप्ति होती है, लेकिन विश्वास से भक्ति की प्राप्ति होती है।
- गुरु तो साक्षात् धर्मविग्रह होता है। गुरु मानी साक्षात् धर्म।
- योग्य शिष्य गुरु की संपदा हैं।
- संत का कोई युनिफोर्म नहीं होता, संत युनिवर्सल होता हैं।
- संत के पैर छूने की इच्छा न हो तो मत छूना लेकिन संत का विरोध मत करना।
- बुद्धपुरुष वो है जो हरेक परिस्थिति को अनुकूल कर लेता है।
- ये जगत सुंदर है लेकिन कोई बुद्धपुरुष की आंखों से देखा जाए तो।
- महापुरुष का प्रमाणपत्र लंबा-चौड़ा नहीं होता।
- प्रतिभा उधार नहीं आती, प्रतिभा आदमी के अंदर से प्रकट होती है।
- प्रेम का कोई मित्र नहीं होता, प्रेम का कोई दुश्मन नहीं होता।
- प्रेम करनेवाला कभी प्रपंच नहीं कर सकता। प्रपंच करनेवाला कभी प्रेमी हो ही नहीं सकता।
- दृष्टि सब के पास होती है, दृष्टिकोण नहीं होता।
- तरस को आप छूपा भी सकते हो, लेकिन तृप्ति को नहीं छूपा सकते।
- राजगादी भेद कर सकती है, व्यासगादी नहीं करती।

सत्संग करना ये चरित्र-निर्माण का प्रथम कदम है

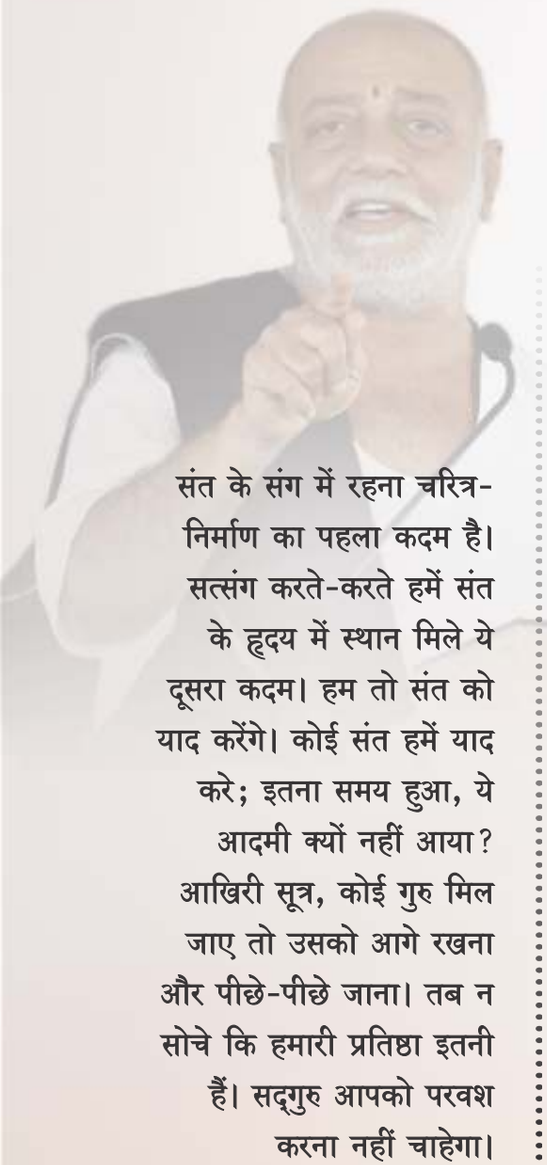

संत के संग में रहना चरित्र-निर्माण का पहला कदम है। सत्संग करते-करते हमें संत के हृदय में स्थान मिले ये दूसरा कदम। हम तो संत को याद करेंगे। कोई संत हमें याद करे; इतना समय हुआ, ये आदमी क्यों नहीं आया? आखिरी सूत्र, कोई गुरु मिल जाए तो उसको आगे रखना और पीछे-पीछे जाना। तब न सोचे कि हमारी प्रतिष्ठा इतनी हैं। सद्गुरु आपको परवश करना नहीं चाहेगा।

'मानस-धनुषजग्य', इस विचार को केन्द्र में रखते हुए हम सब मिलकर संवादी सूर में कुछ विशेष सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा कर रहे हैं। थोड़ा आगे बढ़ें। फिर एक बार स्मरण करे कि विश्वामित्रजी के कहने पर राम और लक्ष्मण सोलह साल की उम्र में मिथिला की यात्रा कर रहे हैं, जहां धनुषजग्य हो रहा है। और मिथिला में वो आते हैं। जन्म से लेकर सीयराम विवाह तक मेरी व्यासपीठ ने नव यज्ञ का वरण किया, जिसके बारे में हम बात कर रहे हैं। इसी शृंखला में कल की कथा में प्रणययज्ञ, प्रेमयज्ञ की जो पुष्पवाटिका अंतर्गत प्रभु की दिव्य प्रेमभरी लीला है, उसका कुछ संवाद हुआ। उसके कुछ आध्यात्मिक अर्थ भी है, जो संतों से सुना। एक सखी आती है और जानकी को ले चलती हैं कि गौरीमाता की पूजा बाद में कीजिए, राम को पहले देख लीजिए। और वो सखी आगे चलती है, जानकीजी पीछे चलती है और राम तक पहुंच जाते हैं, राम के दर्शन हो जाते हैं। संतों से सुना कि ये घटना, ये हकीकत वो तो त्रेता में घटी घटना हैं। आज कलियुग में, आजकी तारीख में हमारे जीवन में उसको प्रासंगिक कैसे समझें? ये भूतकालीन कथा, ये अतीत की कथा हमारे जीवन में किस अर्थ में जरूरी है?

'रामचरित मानस' में तीन शब्द के प्रयोग हुए हैं, 'कथा', 'लीला', 'चरित्र'। जो कथा है, उसका कथन किया जाता है। जैसे मैं बोलूं, आप बाले। कथा में कथन प्रधान हैं, लीला में मंचन प्रधान हैं। लीला देखी जाती है, मंचन होता है। जैसे कृष्णलीला होती है, रामलीला होती है। और चरित्र उसको कहते हैं, जो जीया जाता है, जिसको जीना पड़ता हैं। कथा का कथन करते, सुनते, भगवान की मंगलमय लीला का दर्शन करते व्यक्ति का चरित्रनिर्माण हो। आज राष्ट्र और विश्व की बड़ी समस्या है, कई समस्या हैं, इनमें से एक समस्या में, बुद्धिमान लोग ये मानते हैं कि प्रश्न हैं, चरित्रनिर्माण का। मैं नौ दिन आपके सामने बोलकर चला जाउंगा, कथन हो जाएगा। आपने सुना, बहुत आनंद, अवश्य, लेकिन चरित्र निर्माण हो। राष्ट्रीय चरित्र का निर्माण हो। इसलिए ये पुरानी कथाएं, सनातन कथाएं 'रामायण', ये सब सद्ग्रंथ आज के वैज्ञानिक युग में, आज के इस विज्ञान जो इतनी बड़ी छलांग लगाई हैं, क्या प्रासंगिक है ये कथाएं? आज कई बुद्धिमान लोग ये प्रश्न पूछते हैं। आप किसी भी काल में रहे, मैं आपसे एक प्रश्न पूछुं? भोजन प्रासंगिक हैं? भोजन प्रत्येक काल में, प्रत्येक व्यक्ति को, प्रत्येक परिवार को, प्रत्येक गांव में, किसी भी काल में प्रासंगिक है। ऐसे ही ग्रंथों में जो भगवद्भजन है, भगवान के चरित्र का जो भजन है वो भी हर युग में प्रासंगिक हैं। रामकथा भी और कोई भी पवित्र ग्रंथ ले लो आप, हर काल में प्रासंगिक होगा। ये मीरर है, ये मुकुट है, ये शीशा है। किसी युग का मानवी इस शीशे में दर्शन करेगा तो उसको अपना प्रतिबिंब प्राप्त होगा।

तो, ये पुष्पवाटिकावाली घटना घटी है, इसी रूप में हमारे जीवन में उसकी प्रासंगिकता क्या है? उसके उपर 'मानस' के संतों ने, 'मानस'मर्मज्ञों ने, 'मानस' के मनीषियों ने बहुत विचार किया। पूरा प्रसंग पुष्पवाटिका का रामदर्शन की एक विधि है कि व्यक्ति को राम तक पहुंचना है। यानी मैं राम को कोई एक अर्थ में नहीं पेश कर रहा हूं। राम मानी सत्य। याद रखिएगा, प्लीज़ मेरा राम छोटा नहीं है। मेरा राम गगनसदृशम्, आकाश के समान है। राम तत्त्व मानी बहुत व्यापक जिसका कोई छोर नहीं। राम मानी सत्य, राम मानी प्रेम, राम मानी करुणा। सत्य नहीं तो राम नहीं, प्रेम नहीं तो राम नहीं, करुणा नहीं तो राम नहीं। तो, राम की प्राप्ति करनी है, सत्य की प्राप्ति करनी हैं, प्रेम की प्राप्ति करनी है, करुणा तक यदि पहुंचना है तो पुष्पवाटिका की जो घटना घटी उस घटना के रूप में हमारे जीवन में चरित्र निर्माण करना होगा। जितना हम कर पाएं।

मेरा निवेदन था कि मैं उपदेशक नहीं। अल्लाह करे, मैं उपदेशक न बनूं। मेरी ख्वाहिश है, परमात्मा पूरी करे। मैं उपदेशक हूं ही नहीं। हां, मैं आपसे बात करता हूं, संवाद करता हूं। मुझे जो लगा, मिला, संतों से, बुद्धपुरुषों से, मेरे सद्गुरु भगवान से, वो बातें आपसे शेर कर रहा हूं। इसको उपदेश मत समझना। आप भी उस पर सोचे।

तो, ये प्रसंग जो है, हमें राम तक पहुंचाने का एक उपाय है। इतनी वस्तु करनी चाहिए, जो पंचवटी की कल हमनें बात कही। सीताजी सखियों के संग बाग में गई; एक विधि। उसके बाद जानकीजी ने सखियों के साथ सरोवर में स्नान किया; दूसरा कदम। उसके बाद सीताजी गौरी का मंदिर था वहां पूजा करने गई। चौथा, एक सखी जो राम को देख लेती हैं और दौड़ती आती है, सीताजी को रामदर्शन के लिए निमंत्रित करती है। वो सखी को आगे करते सीताजी उसके पीछे-पीछे चलती हैं और रामदर्शन कर लेती हैं और बात पूरी।

पहले जानकी बाग में गई। युवान भाई-बहनों को मैं खास कहूं, मेरा लक्ष्य विश्व की युवा जनता है। बूढ़े-बुझुर्ग को मैं प्रणाम करता हूं, आपके पास तो अनुभव है; आपने बहुत दिवालियां देखी है। लेकिन मेरा लक्ष्य युवान है। उपनिषद् में लिखा है, 'युवास्यात् साधु युवाध्यापकः।' आज युवानी आध्यात्मिका की और आकर्षित हो रही है, ये भगवद्कृपा है; भारत के लिए मंगल शगुन है। ये आप घर में सुनो तो मोरारिबापू को बंद कर सकते हो। ए.सी. कमरा हो, बीच-बीच में चाय पी लो, पानी पी लो, लेटकर सुनो, पैर फैलाओ। फिर भी आप भरौल के खेत में आकर कथा क्यों सुनते हो? और युवान को, आपको कोई काम नहीं? मैं कहूं तो भी आप नहीं जाएंगे, इसका मतलब हैं, देश की युवानी को चरित्र निर्माण में रुचि जगी हैं। बर्नर तपा हुआ है। कोई एक दीवासली लगा दे और आग लगने में कोई देर नहीं। एक शेर सुनाउं?

उसने देखते ही मुझे दुआओं से भर दिया।
मैंने तो अभी सजदा भी नहीं किया था।

मेरे सद्गुरु ने, मेरे सांई ने केवल मेरी तरफ देखा, मेरा तपा हुआ अंतःकरण में ज्ञानाग्नि प्रकट हुई, एक जिज्ञासा प्रकट हुई, एक चरित्रनिर्माण की वृत्ति प्रकट

हुई। मेरे पास कई लोग आते हैं, आपकी कथा इतनी सस्ती तो नहीं, पंडाल बनाना पड़ता है और आप महाप्रसाद के इतने आग्रही हैं कि भोजन ले के ही जाओ! यहां के लोग कितने भोले हैं? एक भोले दादाजी ने कहा, एक दिन आप बोले नहीं कि भोजन लेके जाओ; तो बोले चलो घर, आज बापू ने बोला नहीं है। बिपिन, बेटा मैं खुश हूं, इसलिए कि मुझे तो कल पता लगा कि मैं एक बस्ती में गया, तब मुझे पता चला कि बापू, कथा में ही भोजन दिया जाता है ऐसा नहीं, आपने जब कथा की डेट दी ना तब से ये पूरे विस्तार में भंडारा चल रहा है! एसा तो मैंने पहली बार सुना! मैं बहुत खुश हुआ। परमात्मा ने जिसको दिया है, उसको देना चाहिए। बादल भर जाए तो उसको बरसना ही चाहिए। मैं बहुत राजी हूं।

आज निषाद ज्ञाति के शायद एक बहन ने एक चिठ्ठी लिखी कि बापू, निषाद शृंगबेरपुर का राजा था फिर हमको समाज निकृष्ट क्यों समझता है? समाज को एक बाजु रख दो। राम ने निकृष्ट नहीं समझा है और मोरारिबापू ने कभी निकृष्ट नहीं समझा। मैं कल जहां गया, वहां कुदरती एक निषाद का घर था। मैंने माताजी को कहा, मेरा गंगाजल का व्रत है, ये गंगाजल में रोटी और जो सब्जी पड़ी हो वो बनाके दो। वो बहुत खुश हो गई। यहां कोई निकृष्ट नहीं है। मेरी दो हाथ जोड़कर आपको, पूरे राष्ट्र को प्रार्थना हैं कि किसी को हलका मत समझना। मेरा स्पष्ट निवेदन है कि दूसरे को जो हलका समझता है, उसके समान हलका कोई नहीं है।

एक बात मुझे खुशी की वृद्धि कर गई, इस बिहार की भरौल की भूमि की। मुझे बताया गया कि बापू, इस खेत में मकाई, फसल लहलही है। हमने मिटिंग बुलवाई कि रामकथा होनी हैं तो मैदान चाहिए। तो ये फसल ले लेनी चाहिए यानी काट दिया जाए। तो, बिपिनभैया ने धीरे से पूछवाया कि जिसकी है वो काट ले तो, जो मुहावझा देना पड़े तो ले। तो सब रो पड़े कि बिपिन, हम इतने गिरे हुए लोग नहीं! हम को अपराध लगे। हमारे खेत में, हमारे मुलक में यदि भगवान राम की कथा होती हो तो हमारा सब लूंट जाए तो लूंट जाए। मुझे लगता है कि मेरा आना सार्थक हुआ यहां। और मिथिला में, बिहार में ये हो वो स्वाभाविक है। आपने ही तो सीता को जन्म दिया। आपने ही तो सीता को बड़ी की है। आपने ही तो आपकी बेटी को जगतजननी बना दिया। आपने ही तो प्रणय-यज्ञ और परिणय-यज्ञ से सीताजी को रामजी को समर्पित किया। इस भूमि को मेरा सलाम।

युवान भाई-बहन, में उपदेश नहीं दे रहा हूं। मैं आपके साथ हूं, जितना हम लोग कर सके। आप प्रसाद लो, भोजन करो वो भी भजन है। चिंता मत करना। जगदंबा का प्रसाद हैं। माँ जानकी का प्रसाद है। किसीको हलका मत समझे। भगवान वशिष्ठजी का भी बंधन छूटा और गूह को गले से लगाया। राम ने तो लगाया ही लगाया, भरत ने तो लगाया, पूरी दुनिया जिससे मांगती है, वो भगवान राम ने निषाद से भीख मांगी वो भूलिए मत। भगवान ने केवट से नांव मांगी और केवट ने उतराई भी न ली। आप परिचित है, इस कथा से। मैंने तो वहां रोटी पाई। किसीको तिरस्कृत मत समझना।

तो युवान भाई-बहन कथा में आ रहे हैं; वर्ना घर में टी.वी. है, ईन्टरनेट पर भी आप सुन सकते हैं, जो आधुनिक विज्ञान ने सुविधा कर दी है, गरमी में क्यों बैठे हो? इसका मतलब है कि आदमी के अंदर कई आग जल रही हैं। उसको उजाला करो। हिंदी जगत के बहुत प्रसिद्ध शायर हुआ, गज़लकार हुआ, उसका नाम था दुष्यन्तकुमार, छोटी उम्र में चला गया! उसकी पंक्तियां है -

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।
मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

एक प्रकाश होना चाहिए। मेरा मक्सद क्या है? फिर ये सूरत बदलनी चाहिए। चरित्र निर्माण। बाग मानी क्या? उसका आध्यात्मिक अर्थ 'रामचरित मानस' में बताया -

संतसभा चहुँ दिसि अवँराई।
श्रद्धा रितु बसंत सम गाई।।

युवान भाई-बहन, बाग में जाईए, बाग में जाना। तुलसी ने कहा, संत की सभा में; संत माने संत का कोई गणवेश नहीं होता, संत का कोई युनिफोर्म नहीं होता, संत युनिवर्सल होता हैं। संत वैश्विक होता हैं। चाहे उसको फकीर कहो, सांई कहो, संत कहो, गुरु कहो, गणवेश परिचय है। संतत्व कुछ बिलग-सी महक है। सत्संग करना ये चरित्र-निर्माण का प्रथम कदम हैं। संत कहे किसको? छोटी-सी व्याख्या आपके सामने रखूं कि इतने लक्षण आप जिसमें देखो ना, उसको आंखें बंद करके आप संत मान लेना। जिस व्यक्ति के जीवन में आप अनुभव करके देखे कि उसके जीवन में कोई तंत नहीं है, उसका नाम संत। संत मानी कोई आग्रह नहीं, कोई जिद्द नहीं, कोई दुराग्रह नहीं, कोई आक्रमकता नहीं। जिद्द न करे कि तुम यही माला पहनो, तुम यही तिलक करो, तुम यही जप करो, तुम यही ग्रंथ पढ़ो। नहीं, कोई तंत नहीं। हमें सहज छोड़े। कबीरसाहब का एक पद हैं। मुझे बहुत प्रिय हैं। सच्चा सद्गुरु कौन? सच्चा संत कौन? सच्चा बुद्ध कौन? कबीर के कुछ बचन -

साधो, सो गुरु सत्य कहावे।

उसको सच्चा सद्गुरु मानना। काया-कलेश, शरीर को कष्ट दो, एसा कभी न सिखाए। नहीं संसार छुडावै। संसार छोड़कर भाग जाओ, एसा भी न कहे और तुम्हारे शरीर को कष्ट दो, तोड़ डालो, उपवास करो, ऐसी कोई आक्रमकता आपको न सिखाए।

कोई नैनन में अलख लखावे,
साधो, सो गुरु सत्य कहावे ...

अपनी आंखों में अलख लगा दे, अपनी दृष्टि में मालामाल कर दे। कल मैंने कहा, तरस और तृप्ति। तरस को आप छूपा भी सकते हो, लेकिन तृप्ति को नहीं छूपा सकते। जिसको किसी बुद्धपुरुष की आंख में अलख दिखाई दे फिर उसके बस की बात नहीं कि वो तृप्ति को छूपा सके। कोई बुद्धपुरुष की आंखों को आपने देखा और आप भर गए तो आपकी आंखों में आंसू बहने लगेंगे, क्योंकि तृप्ति छुपाने की अस्तित्व में कोई व्यवस्था नहीं। मुझे बड़ा प्यारा सूत्र लगा। तृप्ति डकार बता देगी। डकार आएगा ही। क्यों किसी संत के पास जाते ही हमको अच्छा लगता है?

मैं आपसे निवेदन करूं मेरे भाई-बहन कि परमात्मा दिखाई दे तो उसको कहना कि हे परमात्मा, तू जिस बंदे से प्यार करता हो ना उनसे भेंट करा दे। ऐसे कोई साधु के संग में घंटे-डेढ़ घंटे बैठने का मौका दे। कबीर के एक पद पर नौ दिन की कथा करने का जी करता हैं। अद्भुत पद हैं! बिनसांप्रदायिक पद है।

भीतर-बाहर एक ही देखे, दूजा दृष्टि न आवे।
कह कबीर कोई सद्गुरु ऐसा आवागमन छुडावे।
साधो, सो गुरु सत्य कहावे।

जिद्द न करे, तंत न करे। तंत में उर्जा खत्म हो जाती हैं। दूसरा लक्षण, जिसका कोई अंत ना हो। संत शाश्वत होता है। शरीर तो जाएगा, लेकिन उसकी खुश्बू अनंत रहती है। श्रीकृष्ण ने 'भगवद्गीता' में अर्जुन से कहा, मेरी विभूति का अंत नहीं, तो विभु का कैसे?

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप।

संत को जमाना याद करता हैं। नीरज का एक शे'र है -

इतने बदनाम हुए हैं इस जमाने में।
लगेगी सदियां आपको हमें भुलाने में।

आपको बोज न लगे, आपको डर न लगे। जिसको कोई पद पाने की इच्छा नहीं वो संत। शंकराचार्यजी ने महंत की बड़ी महिमा गाई है, लेकिन जिसको महंत बनने की कामना नहीं होती वो संत। ऐसे संत के संग में रहना चरित्र- निर्माण का पहला कदम है। दूसरा कदम, सीयाजू ने सरोवर में स्नान किया। सरोवर क्या है? तुलसीदासजी ने सरोवर के जल को संत के हृदय की उपमा दी। सरोवर का जल साधु का दिल है। सीयाजू ने स्नान किया, मतलब सत्संग करते-करते हमें संत के हृदय में स्थान मिले ये दूसरा कदम। हम तो संत को याद करेंगे। कोई संत हमें याद करे; इतना समय हुआ, ये आदमी क्यों नहीं आया? हम तो परमात्मा को याद करेंगे, लेकिन परमात्मा हमें याद करें। फिर जानकीजी

गई माँ गौरी के मंदिर में। गौरी-भवानी 'रामचरित मानस'की तात्त्विक व्याख्या में श्रद्धा है -

भवानीशङ्करौ वन्दे श्रद्धाविश्वासरूपिणौ ।

इसका मतलब है कि सत्संग करते-करते, संत की प्रियता प्राप्त करते-करते सच्ची श्रद्धा की शरण में जाए, पक्का यकीन। कल एक युवक पूछ रहा था, आप बात-बात में 'सम्यक्' 'सम्यक्' कहते हैं। सम्यक् समझ; सम्यक् संस्कार; ये बुद्ध के शब्द है। श्रद्धा सम्यक् होनी चाहिए। उसका अतिरेक नहीं होना चाहिए। अंधश्रद्धा का भी अतिरेक नहीं होना चाहिए और अश्रद्धा का भी अतिरेक नहीं होना चाहिए। श्रद्धा कायम बढ़नी चाहिए। गुणातीत श्रद्धा, मौलिक श्रद्धा, अश्रद्धा भी नहीं और अंधश्रद्धा भी नहीं। मूल श्रद्धा; सत्संग करते-करते, किसी संत का प्यार पाते-पाते जब हम श्रद्धा में डूब जाए तब कभी कोई सद्गुरु मिलता है, जैसे वो सखी आती है। सखी है बुद्धपुरुष। सद्गुरु को खोजना नहीं पड़ता। हम सत्संग करे, प्रिय बने, श्रद्धा निर्मित हो जाए तो कोई ना कोई सद्गुरु आएगा, जो हमें राम तक पहूंचा देगा। चाहिए विश्वास।

निज़ामुद्दीन ओलिया और उनका पट्टशिष्य अमीर खुशरो। बाबा के स्थान में रोज शाम को धूप करना, लोबान का धूप करना आदि-आदि होता था। नियत समय। एक सायंकाल को हुआ ऐसा कि अमीर खुशरो कार्यवश धूप करना भूल गया। लेकिन कुछ समय बाद अपने आप लोबान की खुश्बू आने लगी! उसको भान हुआ, अरे! मैं मेरा फर्ज चूक गया! मेरे पीर ने अपने आप धूप करना पड़ा, उसको श्रम करना पड़ा, क्योंकि मुझे पता नहीं! समय चला गया होगा। लोबान की खुश्बू आ रही। गिड़गिड़ाकर चरणों में गिर पड़ा, 'पीर, मुझे माफ करो।' निज़ामुद्दीन ने कहा, 'मैंने कुछ नहीं किया!' तो फिर ये किस लोबान का धूप हुआ? निज़ामुद्दीन ने कहा, 'ये मेरे भरोसे का लोबान था, मेरी श्रद्धा का, मेरे यकीन का लोबान था। ये खुश्बू मेरे विश्वास की थी।' श्रद्धा की महक जितनी बढ़े, बढ़े। श्रद्धा का अतिरेक दोष नहीं। अंधश्रद्धा का अतिरेक अवश्य दोष हैं। श्रद्धा न हो तो विश्वास अधूरा है।

आखिरी सूत्र, कोई गुरु मिल जाए तो उसको आगे रखना और पीछे-पीछे जाना। तब न सोचे कि हमारी प्रतिष्ठा इतनी हैं। सद्गुरु आपको परवश करना नहीं चाहेगा। लेकिन हमारा कर्तव्य हैं, इसमें हमारा भला है।

मेरे भाई-बहन, त्रेतायुग की पुष्पवाटिका की ये घटना हमारे जीवन में इसलिए प्रासंगिक है कि रामदर्शन पाने के लिए, प्रेम पाने के लिए, करुणा का साक्षात्कार पाने के लिए इतना काम जरूरी हैं। सज्जनों का संग करो। बस, इतना ही। सज्जन की प्रियता प्राप्त करो। विश्वास को अखंड रखो। कोई मिल जाए तो हमें सत्य तक पहुंचा देगा।

बाप, उसके बाद का जो क्रम चलता है वो धनुषजग्य है। उसमें जो बीच का क्रम है, हमने परसों जो रामजन्म संक्षेप में किया। जैसे राम का प्राकट्य हुआ, वैसे भरत, लक्ष्मण, शत्रुघ्न मानी चार पुत्रों की प्राप्ति अयोध्या में हुई। उसके बाद नामकरण संस्कार का क्रम आया। वशिष्ठजी ने चारों का नामकरण किया। जो सबको आराम देगा उसका नाम राम। जो सबका पोषण करेगा उसका नाम भरत। जिसके नाम से दुश्मन नहीं, दुश्मनी मिटे उसका नाम शत्रुघ्न। पूरे जगत का आधार बनेगा शेष के रूप में उसका नाम लक्ष्मण। और दशरथ को कहा, ये आपके पुत्र तो है ही, लेकिन वेदों के सूत्र हैं। राम महामंत्र है। हम किसी के भंडारे में परोसने की सेवा कर दे, राम नाम सार्थक। मरीज़ को दवा दिलवा दे, तो आधार है।

प्रत्येक व्यक्ति अपनी कमाई का दसवां हिस्सा निकाले। बिलकुल वंचित है, उसको ये जरूरत नहीं। मैं भी चौबीस घंटे का दसवां भाग, दुगना भाग, चार घंटे व्यासपीठ को देता हूं। मुझे प्रश्न पूछा है, आप क्या दक्षिणा लेते हो? कोई माई का लाल बता तो दे बापू ने एक रूपया लिया! व्यासपीठ छोड़ दूं! साहब, मेरा किसी से कोई लेना-देना नहीं, मेरा दिल का रिश्ता है यारों, ये मुहोब्बत का रिश्ता है। मैं आपको याद करूंगा नहीं,

आप मुझे याद रहोगे, ये रिश्ता हैं। हमारा रिश्ता सत्य, प्रेम, करुणा का नाता हैं। मेरे साथ जो हैं वो भी चार्ज नहीं लेते। चार्जवाला मेरे पास रह नहीं सकता। जिसको रिचार्ज होना हो वही रह सकता हैं। मेरे पास बैठकर आदमी की जिंदगी रिचार्ज हो गई नौ दिन में। धर्म का भी दसवां हिस्सा निकालना चाहिए। मैं गुरुकृपा से मेरा समय का दसवां हिस्सा नहीं, दुगुना दसवां हिस्सा दे देता हूं। मुझे यकीन है, मेरे युवान भाई-बहन ऐसा करेंगे। धार्मिक लोगों को भी दक्षिणा ज्यादा मिलने लगे तो दसवां हिस्सा निकालना चाहिए।

राम का यज्ञोपवित संस्कार हुआ। विद्याप्राप्ति के लिए वशिष्ठ महाराज से अल्पकाल में विद्याप्राप्त कर लौट आए। विश्वामित्रजी अयोध्या आते हैं। राम-लक्ष्मण की मांग करते हैं। शुरू में दशरथ मना करते हैं, लेकिन राजा का अज्ञान वशिष्ठ ने तोड़ा। दशरथजी ने राम-लक्ष्मण को सौंप दिया। भारत का ऋषि संपत्ति नहीं, संतति मांगता है। राम-लक्ष्मण सिद्धाश्रम की ओर गति करते हैं। योग्य शिष्य गुरु की संपदा हैं। रास्ते में एक ही बान से ताड़का का निर्वाण कर दिया। दूसरे दिन भगवान ने यज्ञ का आरंभ करवाया। मारीच को फैंक दिया, सुबाहु को निर्वाण दिया। और विश्वामित्र के आनुष्ठानिक यज्ञ को पूर्ण किया। राम-लक्ष्मण को लेकर जनकपुर की यात्रा में निकले। रास्ते में अहल्या का उद्धार किया।

मैं मेरे युवान भाई-बहनों को कहना चाहूंगा कि भूल किससे नहीं होती? कमजोरियां किसमें नहीं होती? दीक्षित दनकौरी का एक शे'र -

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ,
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।

भूल हो जाए तो अहल्या की तरह स्थिर हो जाना। जिस चंचलता ने भूल करवाई उसको दोहराए ना, तो पाप से मुक्त होने के लिए अयोध्या नहीं जाना पड़ेगा, अयोध्या के राम को तुम्हारे पास आना पड़ेगा। मैं दो कथा से कह रहा हूं, शाप निकल जाए। शुभकामना जरूर व्यक्त करो। शाप देने की बजाय सावधान करो। आशीर्वाद की जगह समाधान देना चाहिए। एडवान्स में समाधान देना इक्कीसवीं सदी का आशीर्वाद है। एडवान्स में सावधान करना इक्कीसवीं सदी का आशीर्वाद है।

भगवान राम आगे बढ़े। गंगा में स्नान किया, गंगा अवतरण की कथा सुनी। तीर्थ देवताओं को दान-दक्षिणा दी। फिर जनकपुर पहुंचे। प्रणययज्ञ में भूमि थी पुष्पवाटिका; उसके केन्द्रबिंदु कुंज-लतामंडप। अग्नि-सीता की तड़प, विरह-अग्नि। आहुति-एक-दूसरे के मन को अर्पण करना। आचार्य-विश्वामित्र। जानकी पक्ष में सखी सयानी। मंत्र एक ही हैं-दोनो मिले। मंत्र-विचार, विचार फल है।

शतानंदजी आमंत्रित करते हैं विश्वामित्रजी को, राम और लक्ष्मण को धनुषजग्य में। राम की एन्ट्री होती है। सबने बिलग दर्शन पाए। हरिनाम मधुर है। नव रस की चर्चा की। परमतत्त्व एक हैं। रामकथा जोड़ने की कथा, सेतुबंध की कथा है। जोड़े वो धर्म, तोड़े वो नहीं। भगवान शंकर धर्मनिरपेक्ष हैं। चांद अपने मस्तक पर है वो वक्र हैं। महादेव में सब हैं। गंगा भी हैं, वक्र चंद्र भी है। स्मशान धर्मनिरपेक्ष होता हैं। राजगादी भेद कर सकती है, व्यासगादी नहीं करती।

हरिनाम लेनेवालों को ज्यादा जिंदा रहना चाहिए। जरूरत है दुनिया को ऐसे लोगों की। व्यसन करो तो हरिनाम का करो। जनकपुर की रंगावलि का दर्शन करते हैं। जनकजी सब दिखाते हैं। जनकपुर की रंगावलि में विषमता नहीं थी। जनक चाहते हैं कि महामुनि विश्वामित्रजी से मेरी व्यवस्था के बारे में कोई प्रतिभाव प्राप्त हो। विश्वामित्र इतना ही बोले, 'भली रचना।' महापुरुष का प्रमाणपत्र लंबा-चौड़ा नहीं होता। यहां भी मैं कहूंगा, 'भली रचना।' ये व्यासपीठ का प्रेम-संदेश हैं। जनक बहुत खुश हुए। सब मंच से ऊंचा मंच, राम-लक्ष्मण को वहां बिराजित किए। सीयाजू भी आ चुकी हैं। सब लोग उपस्थित हैं। धनुषजग्य की कथा कल आगे करेंगे। आज की कथा को यहां रोक रहा हूं।

भगवान को पाना कठिन नहीं है, भक्ति को पाना कठिन है

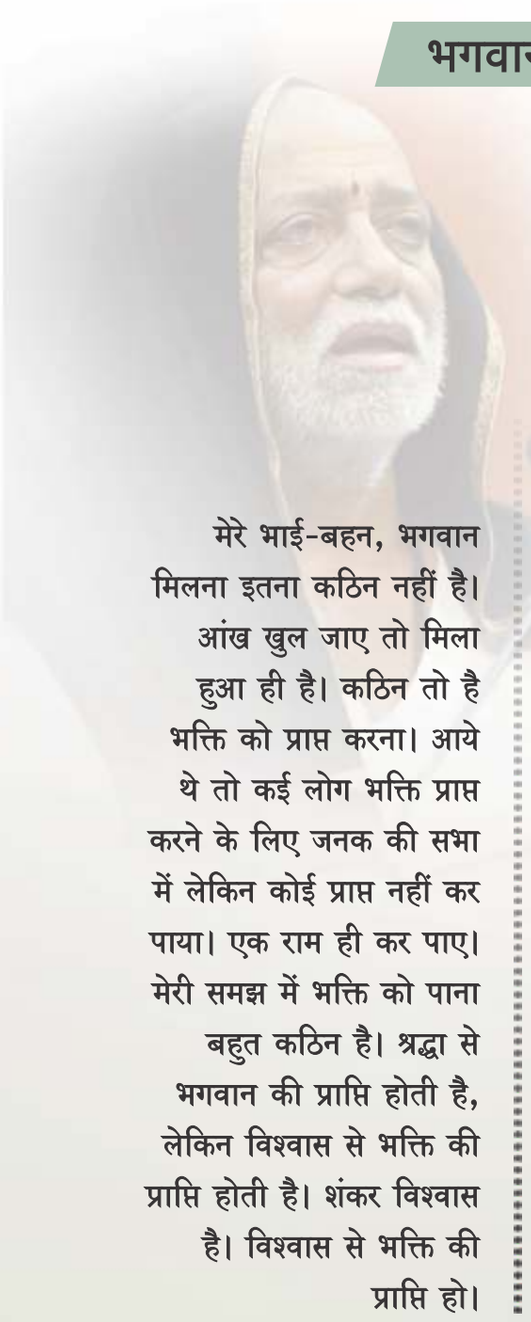

मेरे भाई-बहन, भगवान मिलना इतना कठिन नहीं है। आंख खुल जाए तो मिला हुआ ही है। कठिन तो है भक्ति को प्राप्त करना। आये थे तो कई लोग भक्ति प्राप्त करने के लिए जनक की सभा में लेकिन कोई प्राप्त नहीं कर पाया। एक राम ही कर पाए। मेरी समझ में भक्ति को पाना बहुत कठिन है। श्रद्धा से भगवान की प्राप्ति होती है, लेकिन विश्वास से भक्ति की प्राप्ति होती है। शंकर विश्वास है। विश्वास से भक्ति की प्राप्ति हो।

'मानस-धनुषजग्य', जिसकी प्रधानरूप से ये चर्चा हो रही है। उसके सात्त्विक-तात्त्विक कुछ पहलू को गुरुकृपा से छूआ जा रहा है। कुछ आगे दर्शन करें। कल कथा में भगवान राम-लक्ष्मण महामुनि विश्वामित्र के संग जनक के बुलावे पर रंगभूमि में-धनुषजग्य की भूमि में पहुंचे हैं। राम एक ही है लेकिन दर्शन अनेक है। दर्शकों कि दृष्टि के पीछे रही मानसिकता, रुचि अपना-अपना भाव भी बिलग-बिलग है। इसी कारण प्रत्येक व्यक्ति को राम का दर्शन बिलग-बिलग रूप में हुआ है। किसीको भगवान राम में वीर पुरुष का दर्शन हुआ। जनक परिवार को वात्सल्य रस का दर्शन हुआ। कुछ राक्षसों को भयानक रस का दर्शन हुआ। कईओं को रौद्र रस का दर्शन हुआ। शृंगार रस का वर्णन भी गोस्वामी ने वहां अंकित किया है। जैसे ही प्रवेश किया, सब से पहले देखनहारों को भगवान में वीर रस की झांकी हुई। कई लोगों को महावीर रस दिखाई दिया। प्रभु में परम वीर रस की झांकी हुई। कुटिल राजा लोग थोड़ा ड़रे हुए हैं, क्योंकि उनको राम में भयानक मूर्ति का दर्शन हुआ यानी भयानक रस का अनुभव हुआ। कई असुर लोक छद्म रूप में वेश पलट कर दुर्भाव लिए आकर बैठे थे। उसको भगवान काल के समान दिखे यानी रौद्र रस का दर्शन हुआ। नेत्रों को सुख देनेवाले नगरवासीओं को भगवान का थोड़ा मधुर रूप का दर्शन हुआ। मिथिला की महिलाएं भगवान राम को अपनी-अपनी रुचि के अनुसार दर्शन कर रही है, वहां शृंगार रस का अनुभव सब को हुआ। बिदूषक गण को भगवान विराट रूप में, उसका अर्थ है अद्‌भुत रस का दर्शन हुआ। नगर के लोग और जनक अपनी रानी के संग राम को देखते हैं तो माना अपना बालक हो, अपना बच्चा हो ऐसे वात्सल्य रस का अनुभव हुआ। जनक की इस धनुषजग्य की सभा में कई योगी लोग भी बैठे थे। उसको भगवान शांत रस के रूप में दिखाई दिये। जितने भगवान के भक्त लोग बैठे थे सभा में,

उसको राम ने अपने इष्टदेव के रूप में यानी भावरस अथवा भक्ति रस का दर्शन दिया।

जानकी जिस रूप में प्रभु का अवलोकन करती है उस भाव का कथन अकथनीय है, केवल अनुभव का विषय है। ये उर में अनुभव कर रही है। वो स्वयं भी नहीं कह सकती तो तुलसी कहते, मेरे जैसा कवि उनके बारे में क्या प्रकाश डाले? मेरे कहने का मतलब एक सूचि आप के सामने रखनी थी कि परमात्मा का दर्शन प्रत्येक व्यक्ति को अपनी दृष्टि के पीछे रही मानसिकता के अनुरूप हुआ। ब्रह्म एक है। बिलोकनी अनेक है। बिलोकनी के पीछे-पीछे मनोभाव कई प्रकार के हैं। और ये त्रेता युग का सत्य आज का भी सत्य है। एक व्यक्ति को एक व्यक्ति बहुत अच्छा दिखता है। वोही व्यक्ति, वोही चेहरा, वोही नाक, वोही गांव-ठांव उसको मानी दूसरी व्यक्ति को बुरा लगता है। अथवा तो एक ही व्यक्ति हमारी आंख में जब तक राग है, तब तक वो अच्छा दिखता है, प्यारा दिखता है। जब हमारी आंख में किसी कारणवश द्वेष आ जाता है, तो वोही व्यक्ति वोही जगह बुरा लगने लगता है। हम आरोप करते हैं कि ये बदल गया! राम नहीं बदले। राम तो वोही के वोही है। जब से अवध से चले हैं, वोही है। आनेवाले अनेक दर्शकों कि दृष्टि भिन्न-भिन्न होने के कारण राम-दर्शन सब ने भिन्न-भिन्न पाया।

आप का एक मित्र है। आप को उनके प्रति बहुत प्यार है। उसकी हर बात आप को बहुत प्यारी लगेगी। प्यार की जगह थोड़ी नफ़रत शुरू हो जायेगी, तो उसी व्यक्ति के उसी के बोल में आप को कई प्रकार के तर्क पैदा हो जायेंगे। ये हमारे सभी के अनुभव का सत्य है। और अनुभव के सत्य को अनदेखा न किया जाय। इसीलिए सही दर्शन, कहीं अवलोकन केवल और केवल उदासीन व्यक्ति कर सकता है। उदासीन उसको कहते हैं जो राग और द्वेष से उपर उठ चुका है। आप ठीक से 'अयोध्याकांड' का स्वाध्याय करे, अभ्यास करे, दर्शन करे। न तो मंथरा ने कैकेयी से कहा कि चौदह साल का वनवास राम को दो। न तो मंथरा ने कैकेयी से ये भी कहा है कि तपस्वी बनाकर भेजो, उदासीन व्रत देकर भेजो। इनमें से मंथरा ने कोई भी बात कैकेयी से नहीं कही है। ये सत्य है। तो फ़िर चौदह साल का वनबास, तपस्वी राम बने उदासीन वनके वन में जाए ये कहां से टपक पड़ा? 'मानस' में तो कहीं मिलता नहीं! मंथरा का एक ही वाक्य 'मानस' में मिलता है, 'आप के पुत्र भरत को राज दिलवा दो। और राम को वनवास दे दो।' मंथरा ने ओर कोई बातें भी नहीं रखी। लेकिन दशरथजी के पास रानी कैकेयी जब मांगती है-

तापस बेष बिसेषि उदासी ।
चौदह बरिस रामु बनबासी ।।

'तापस बेष उदासी' मनोवृत्ति लेकर राम चौदह साल के वन में चले जाए। ये निर्णय किसका है? 'रामायण' का ये रहस्य है।

जनक की इस रंग-आवली में सब की बिलग-बिलग व्यवस्था है। एक संविधान है। भेद नहीं होना चाहिए। और मुझे ये भी अच्छा लगता है कि ये छोटे-छोटे मिथिलांचल के बस्ती में जैसे निषाद भाई-बहन रहते हैं, वैसे ब्राह्मण भी रहते हैं। और सब मिलझूलकर रहते हैं। और कहीं न रहते हो तो भी भारौल की कथा के बाद तो ये सभी भेद तोड़ देना। छोटा आदमी कभी ये न सोचे कि मैं यहां नहीं आ सकता और न बड़ा आदमी कभी ये गुरूर करे कि हम बड़े हैं।

सब नर करहिं परस्पर प्रीती ।

एक दूसरे से प्यार और मोहब्बत करे। यही रामकथा का संदेश है। आप दौड़ेंगे ये आप की मानसिकता है। लेकिन व्यवस्था के लिए पुलिसकर्मी आप को रोकेंगे कि भैया, यहां बैठ जाओ; दौड़ो मत। ये उनका कर्तव्य है। ये भेद नहीं है। ये व्यवस्था है। ये सब सोचो, वर्ना इतने लोगों को संभालना इतनी गर्मी में और ये सब! ये तो कोई परिबल काम कर जाता है। साहब, हम इन्सानों की कोई गुंजाईश नहीं! वो फ़िल्म का गीत है ना-

तू जहां जहां रहेगा, मेरा साया साथ होगा।

कोई परमतत्त्व हमारे साथ है। हम निमित्त बन जाते हैं।

धरमशील लोग रहते हैं जनकपुर में, सब ज्ञानी है। और ज्ञान उसको कहते हैं जहां भेद न हो। व्यवस्था जरूर हो; आप किसी की बारात में जाए और कहे कि ये क्या हो रहा है, दुल्हा-दुल्हन तो बड़े खुर्शी पर बैठे हैं और हम को तो नीचे! ये व्यवस्था है। शादी उसकी हो रही है। जनक ने व्यवस्था की है। लेकिन ये अवलोकन कूटस्थ-तटस्थ तभी होता जब हमारे पास साधु की उदासीन दृष्टि होती है। वर्ना हम इधर-उधर हो ही जाते हैं। वर्ना अपने-पराये का भेद प्रसव ले ही लेगा। वर्ना कभी प्रियता, कभी अप्रियता का द्वन्द्व हमें जकड़ लेगा।

मेरे भाई-बहन, मुझे ये भी कहना था कि प्रणय-यज्ञ हुआ पुष्पवाटिका में और अब धनुषजग्य हो रहा है रंगभूमि में-रंग-आवली पर। ये दोनों यज्ञ में क्या भेद है, ये दोनों यज्ञ में क्या साम्य है? कुछ साम्य है, कुछ भेद है। प्रणय-यज्ञ; सीता-राम का प्रथम मिलन जनक के बाग में हुआ है। ये जनक की पुष्पवाटिका है वहां सीता-रामजी मिले। जहां प्रणय-यज्ञ हुआ। सीता-रामजी यहां भी मिलने वाले हैं धनुषजग्य में, लेकिन वो जनक का बाग नहीं है, तुलसी की दृष्टि से ये जनक की सभा है। ये बाग है, ये सभा है। विशिष्ट अंतर है। बाग में एक विशिष्ट व्यवस्था है। वहां कुछ ही लोग है। राम-लक्ष्मण है, कुछ सखियां है और मालिगण है। बाकी पेड़-पौधें, सरोवर, गौरीमंदिर, आदि-आदि। जहां धनुषजग्य होने जा रहा है वो जनक-सभा है। जहां पूरी नगरी है। पूरी नगरी ही नहीं, खंड-खंड, द्वीप-द्वीप हर जगह से राजे-महाराजे आए हैं। महात्मागण भी आए हैं। तो, पहला भेद है, ये जनक-बाग है। धनुषजग्य होता है जनक की सभा में।

दूसरी बात, यहां राम आए हैं प्रणय-यज्ञ में फूल तोड़ने के लिए। यहां फूल तोड़ा, यहां धनुष तोड़ेंगे। तीसरा भेद, फूल कोमल है, अति कोमल है और धनुष शंकर का है बड़ा भारी, बड़ा कठोर, घन अथवा तो जड़ है। फूल कोमल है पुष्पवाटिका में; जनक सभा में धनुष कठोर है। दोनों काम राम ही कर रहे हैं। क्योंकि उपनिषदों में ब्रह्म के जो लक्षण बताएं है,यद्यपि ब्रह्म का लक्षण कहना मुश्किल है। फ़िर भी ये कोमल भी है, कठोर भी है। फूल से भी ज्यादा ब्रह्मतत्त्व कोमल भी है, कठोर भी है। और भगवान पुष्पवाटिका में जनक के बाग में जब फूल तोड़ते हैं तो पसीना हो गया था! ये धनुषजग्य में इतना कठोर धनुष तोड़ा, पसीने-बसीने की कोई बात नहीं! जरा भी नहीं। फूल तोड़ने में पसीना! समय तो करीब-करीब समान था। धनुषजग्यवाला समय थोड़ा दिन उपर उठ चल गया। बाकी पुष्पवाटिका में जब पुष्प चुनते थे ये थोड़ा एक-दो घंटे आगे की बात है। धनुषजग्य का समय थोड़ा देर से शुरू होता है। लेकिन वहां कोई श्रम दिखता नहीं। भगवान ऐसे ही तोड़ ड़ालते हैं! एक ओर भेद सुनिए। ये 'रामचरित मानस' में नहीं लिखा है। प्लीज़, खोजना मत। आप कहेंगे कि ये कहां लिखा है? कुछ बातें दो पंक्ति के बीच में जो खाली जगह होती है ना, वहीं से गुरुकृपा से निकलती है। वो लिखी हुई नहीं होती। संतों की कृपा से महापुरुषों की कृपा से, मेरी व्यासपीठ को ऐसा लगता है इसीलिए मैं जिम्मेवारी के साथ आप के सामने ये दर्शन पैश कर रहा हूं। जनक के बाग में जहां रामजी और जानकी का मिलन हुआ वहां गौरी है, शंकर नहीं है। वहां गौरी का मंदिर है। पार्वती ही है, शंकर नहीं है।

जनक के बाग में गौरी है; वो बोली भी है। आशीर्वाद भी देती है। प्रसाद में फूल की माला भी देती है। लेकिन जनक की सभा में जहां धनुषजग्य है, वहां गौरी नहीं है; वहां शंकर है। किसी ना किसी रूप में शंकर है। प्रणय-यज्ञ गौरी के आशीर्वाद से संपन्न होता है। धनुषजग्य महादेव की कृपा से और इनके सहयोग से संपन्न होता है। ये भी एक भेद है। एक ओर भेद, पुष्पवाटिका में प्रभु के प्राप्ति के सूत्र है कि राम कैसे मिले? इसके सूत्र मैंने कल आप के सामने रखे कि पहले सत्संग करे। फ़िर संत की प्रियता प्राप्त करे। फ़िर दृढ़ श्रद्धा

के सन्मुख हो जाइए। फ़िर कोई सद्गुरु मिले और सद्गुरु का हम अनुगमन करे और जैसे वो सखी सीता को राम तक ले गई वैसे हम भी राम तक पहुंच जायेंगे।

जनक के बाग में राम प्राप्ति के साधन बताए हैं। जनक की सभा में धनुषजग्य में राम की प्राप्ति के साधन नहीं, भक्ति की प्राप्ति के साधन बताए हैं। जानकी कैसे मिले, उसके सब लक्षण वहां बताए गए हैं। यहां हरि मिले, यहां हरिप्रिया कैसे मिले? यहां भगवान प्राप्ति की योजना बताई। जनक के धनुषजग्य में भगवती की प्राप्ति भक्ति की प्राप्ति की योजना बताई थी कि भक्ति कैसे मिले? और मेरे भाई-बहन, भगवान मिलना इतना कठिन नहीं है। आंख खुल जाए तो मिला हुआ ही है। कठिन तो है भक्ति को प्राप्त करना। आये थे तो कई लोग भक्ति प्राप्त करने के लिए जनक की सभा में लेकिन कोई प्राप्त नहीं कर पाया। एक राम ही कर पाए। मेरी समझ में भक्ति को पाना बहुत कठिन है। श्रद्धा से भगवान की प्राप्ति होती है, लेकिन विश्वास से भक्ति की प्राप्ति होती

है। शंकर विश्वास है। विश्वास से भक्ति की प्राप्ति हो।

सभा भरी हुई है। सीया को बुलाई गई। जानकीजी अपनी सखीओं के वृंद के साथ अपनी विशिष्ट जगह में बैठ चुकी है। जानकीजी अति सुंदर है। ऐसी जानकीजी अपनी विशिष्ट जगह पर बैठ जाती है। हम कल शाम को बैठे थे तो एक प्रश्न पूछा गया कि 'रामजी धनुष तोड़ने में देर कर रहे हैं तो जानकीजी अकुला रही थी बहुत। रामको अकुलाहट क्यों नहीं हुई?' दोनों और प्रेम पलता है। प्रेम दोनों और होना चाहिए। प्रश्न तो बराबर था। सीता अकुलाई है जरूर वहां। रामजी बिलकुल नहीं अकुलाते। राम ब्रह्म है। ब्रह्म में तरंग नहीं होते, भक्ति में तरंग होते हैं। भक्ति में एक के बाद एक भावों का आरोहण होता हैं। स्वाभाविक है, तब राम तटस्थ ब्रह्म के रूप में बैठे हैं। इतना हल्ला-बल्ला हो गया! जनक राजा ऐसे-ऐसे कठोर शब्द बोल जाते हैं। लक्ष्मण भी ऐसे बोलते हैं। दस हजार राजा खड़े हो जाते हैं। रामजी चुपचाप ब्रह्म की भांति जो होता हो, ये कूटस्थ बैठे इसलिए भगवान की अकुलाहट का दर्शन नहीं है।

दूसरा, इन परिस्थिति को देखकर जानकी अकुलाई, जनक भी अकुलाए कि कोई धनुष तोड़नेवाला वीर पुरुष नहीं? और कुछ शब्द ऐसे बोल गए कि लक्ष्मण भी अकुलाए। सब को विचलित बताया लेकिन मेरा ठाकुर बिलकुल अतरंग बैठा है, बिलकुल साक्षी बैठा है। देख रहा है साक्षीरूप में अथवा तो जानकी की प्रेम की तड़प ठाकुर जानते है फ़िर भी उसकी अकुलाहट नहीं दिखाई दी। रामजी ने देखा भी नहीं उधर क्योंकि भगवान को लगा कि सीता की अकुलाहट यदि मैं देख लूंगा तो कहीं मेरे से मर्यादा भंग हो जायेगा। कहीं बिना गुरु को पूछे मैं धनुष उठा लूंगा। इसीलिए भगवान उसमें गए नहीं और जैसे सीता की अकुलाहट देखी और भगवान तुरंत धनुष के सामने देखते हैं उसी समय भगवान एकदम आवेश में आ गए। और फ़िर घटना घटने की तैयारियां होने लगती है। तो मेरे भाई-बहन, यहां भगवान शांत बैठे हैं। जानकीजी आकर बैठ चुकी है, पूरा मंडप भरा हुआ है। एक ओर से

मिथिला नरेश जनकजी का आदेश हुआ है, जनक के बंदीजन खड़े होते हैं और अपने दोनों हाथ उपर उठाकर जनक के दूत बोले; हमारे भारत की, हमारे देश की एक पावन परंपरा रही है कि पूर्ण सत्य की उद्घोषणा जब करनी होती है तब हम हाथ उपर उठाते हैं।

कल एक भाई ने ये भी पूछा कि 'बापू, आप 'तात', 'बाप', क्यों बोलते हो? बाप का मतलब क्या है? बाप का अर्थ क्या है?' मैंने तो वहां जवाब दे दिया लेकिन बाप के दो अर्थ है, अपने बाप जो होते हैं उसको भी हम बाप कहते हैं और बेटे को भी बाप कहते हैं, 'बाप, कैसे हो?' बेटी को भी हमारे यहां बाप कहते हैं और संस्कृत में तात कहते हैं। पिता को भी तात कहो, छोटे भाई को भी तात कहो, बेटे को भी तात कहो। तो आप मेरे लिए दोनों है। बाप की जगह ये बड़े हैं, आदरणीय है। मेरे श्रोता इस रूप में भी बाप है और मेरी कथा सुनकर इतनी श्रद्धा से नखशिख सुन रहे हैं तो ये वात्सल्यभरा 'बाप' संबोधन है। जैसे हम छोटे को तात कहते हैं, उसीका भी संदर्भ है। 'बाप' मेरा प्रिय संबोधन है।

कल एक भाई ने मुझे कहा था कि आपने मेरे प्रश्नों के उत्तर नहीं दिए बापू! उसने पूछा था कि 'मैं बहुत घूमा गुरु बनाने के लिए। अयोध्या गया तो वहां कहा गया कि आप गुरु बनाओ तो फ़िर रामायणी हो जाओगे। और फ़िर माल-माल खाओगे। तो उस भाई ने मुझे कहा कि मैं कोई माल-मलिंदा खाने के लिए रामायणी बनने नहीं जा रहा था, तो फ़िर मैं निकल गया वहां से। तो मैंने किसीको गुरु नहीं बनाया। फ़िर बहुत घूमने-फ़िरने के बाद मैंने निर्णय किया कि महादेव को गुरु बना दो। तो मैं शंकर को गुरु बना सकता हूं?' शंकर के उपर दुनिया में कोई गुरु ही नहीं। जल्दी कर लो, महादेव जैसा कोई गुरु नहीं है। 'रामायण' में ऐसा लिखा है-

तुम्ह त्रिभुवन गुर बेद बखाना।
आन जीव पाँवर का जाना।।

शिव त्रिभुवन का गुरु है। तो न मानो तो भी त्रिभुवन में हम जीते हैं, इसलिए हमारे गुरु बन ही जाते हैं। तो शंकर को गुरु मान लेना, इससे विशिष्ट निर्णय कौन हो सकता है? अथवा तो मैंने बीच में भी कहा, हनुमान को गुरु मान लो। कोई जंजट ही नहीं। आज एक ओर प्रश्न मेरे पास है गुरु के बारे में, 'क्या अपनी माँ को हम गुरु मान सकते हैं?' बिलकुल; उपनिषदों ने कहा है, 'मातृदेवो भव।' माँ को भी गुरु मान सकते हैं। किसीने मुझे ये भी कहा, 'बापू, आप ने जो गुरु के लिए तीन सूत्र दिये ये सत्य, प्रेम और करुणा। ये तीनों माँ के अलावा कम ही लोगों में दिखता है। माँ के अलावा सत्य, प्रेम, करुणा दूसरों में नहीं दिखता। तो माँ को गुरु मान सकते हैं?' बिलकुल; व्यासपीठ आप को सहर्ष ईजाजत देती है। माँ को गुरु मान लीजिए। माँ में आप को यदि सत्य, प्रेम और करुणा दिखते हैं तो जरूर मानिए। ये बात पक्की है।

'बापू, मुझे भगवद्कृपा से कथा सुनने को मिल रही है और मुझे माला के सिवा कुछ अच्छा नहीं लगता। बस, समय मिलते ही माला करना बहुत अच्छा लगता है। मैं शिक्षिका हूं, तन्मयता से नहीं पढ़ा पाती हूं। मुझे लगता है, कब छुट्टी मिले और कब माला लेकर बैठ जाऊं?' स्कूल में बच्चों को इमानदारी से पढ़ाना वो भी माला जपना है। उसके बाद फिर माला करिए वो भी माला जपना। लेकिन माला जपना आपका एकमात्र साधन बन जाए तो ये तो बहुत अद्भुत बात है, क्योंकि हरिनाम के सिवा और कोई साधन कलियुग में हमारे जैसों के लिए सुविधापूर्ण नहीं है। लेकिन अपना कर्तव्य निभाते करना हैं।

'बापू, कथावाचकों को सरकार क्या-क्या सुविधा देती है?' सरकार से क्या लेना-देना यार! हम राघवेन्द्र सरकार के दरबार में निरंतर बैठते हैं। और दुनिया की सरकारें हमारी सभा में आती है! हमें सरकार से क्या लेना-देना होता है? लेकिन सरकार इंतजाम तो कर ही देती है ना। राज्यसरकार, जिल्ला प्रशासन ये सब अपने-अपने ढंग से सेवा में तो लगते ही है। इतना बड़ा आयोजन है। लेकिन कथाकार को कोई सरकार की सुविधा और कोई प्रोटोकोल की तो जरूर है ही नहीं! मुझे

तो कुछ नहीं चाहिए। हम तो अकेले काफी है, मैं और मेरी 'रामायण।' इसके अलावा और कुछ भी नहीं। फिर भी सरकार व्यवस्था के नाम पर तो सब करते हैं।

'बापू, दुनिया में साधुपुरुष तो कई हुए मगर साधु महिला एक ही नहीं हुए?' किसने कहा? जितने-जितने साधुपुरुष हुए हैं तो उनमें महिलाओं का बहुत योगदान होता है। तभी तो साधु बन सकते हैं। और ये जानकी कौन है? एक जानकी समग्र विश्व की महिलाओं का प्रतिनिधित्व करती है। इससे बड़ा कौन है? गार्गी कौन है? कश्मीर की लल्लादेवी कौन है? सहजोबाई, झांसी की रानी और प्रत्येक घर में बैठी माँ, सब महिमावंत है।

'बापू, आपका ई-मेईल एड्रेस क्या है? क्या आप ट्विट करते हैं? क्या आप कम्प्यूटर के लिए समय निकाल पाते है? आपकी दिनचर्या क्या है?' देखो भाई, मेरा कोई ई-मेईल नहीं है। मुझे ट्विट करना आता नहीं। मुझे कम्प्यूटर का कुछ याद नहीं। मैं एक सीधा-सादा फोन रखता हूं। जिसमें मुझे कहीं फोन करना हो तो फोन कर सकता हूं। और आप मुझे दुआ दो कि मुझे कुछ भी सीखना नहीं है। आजकी दुनिया में सब सीखना चाहिए, लेकिन मेरी रुचि नहीं है इसमें। कोई वोट्सअप, कोई फेसबूक! दुनिया को कितना व्यस्त कर दिया ये इन चीजों ने! एक समय था, आदमी फ्री होता था। बेरखा लेकर, माला लेकर हरि जपता था। अब तो आदमी मोबाईल में ही पड़ा रहता है! और इससे राग-द्वेष भी बहुत बढ़ता है। इससे आदमी डिस्टर्ब हो जाता है। सुविधा का सद्भावपूर्ण सदुपयोग किया जाए। बाकी ये छोटे-छोटे बच्चों को भी बहुत बचाना। टी.वी. कुछ सिरियल ऐसी कि तुम्हारे बच्चों के दिमाग में कचरा न जाए इसलिए विवेक से, प्यार से बचाना। जरूर देखे मनोरंजक प्रोग्राम, अच्छी सिरियलें, अच्छे संगीत। कुछ अच्छा है, लेकिन कचरा भी तो बहुत डाला जा रहा है! तो, मेरे पास ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। मैं उसमें रुचि नहीं रखता हूं। मुझे सही में आता नहीं। यद्यपि हमारे कथाकार लोग सबकुछ जानते हैं। हमारे कई जो बुज़ुर्ग कथाकार लोग है, शास्त्रीगण है वो सब जहां बैठते हैं वहां शुरू कर देते हैं! लेकिन मैं अनपढ़ आदमी हूं। आपको पता होगा, मैं मेट्रिक मैं तीन बार फैल हुआ हूं। नापास हुआ आदमी हूं। मुझे कुछ आता नहीं और अल्लाह करे, मुझे ओर कुछ सीखना नहीं। मुझे मेरी तुलसी की चौपाई, मेरी निष्ठा और मेरा गुरु, इसके अलावा कुछ नहीं चाहिए।

जनक के बंदीजन खड़े हुए सभा में और अपनी दोनों भुजाओं को उपर उठाते हुए सत्य की उद्घोषणा करते हैं कि हे राजे-महाराजे, आप धनुषजग्य में आए हैं, सुनो-सुनो। हमारे महाराज जनक, विदेहराज मिथिलेश जनक, इनकी प्रतिज्ञा हम कर रहे हैं कि ये सत्य है, इसीलिए हम अपनी भुजा को उपर उठाकर कह रहे हैं। धनुष अहंकार का प्रतीक है और अहंकार तभी टूटेगा कोई गुरु की कृपा हो और अहंकार टूटेगा तभी ही भक्तिरूपी सीता प्राप्त होगी। लेकिन ये राजाएं गुरुद्रोही है। कमर कसते हैं। तैयार होते हैं। मुकुट ठीक करते हैं। ये मूढ़ राजा लोग धनुष को तोड़ने की विफल चेष्टा करते हैं। निर्बल होकर गिर पड़ते हैं! मजाक के-उपहास के पात्र बनते हैं। सब राजा उपहास के पात्र बन गए! तेजहीन हो गए। जैसे बैराग बिना संन्यासी निस्तेज दिखाई दे ऐसे राजा तेजहीन हो गए। और जिस राजा में तेज न हो, उस राजा का कोई अर्थ नहीं।

कोई धनुष को कुछ नहीं कर पाये! एक सन्नाटा छा गया! महाराज जनकजी चिंतित हो उठे। कभी-कभी परिस्थिति बड़े-बड़े ज्ञानी को भी विचलित कर देती है। ये तो बड़े ज्ञानी महापुरुष है। लेकिन आज विचलित हो गये कि इतने राजे-महाराजे आए, धनुष को कोई हटा नहीं पाया! और मेरी बेटी कुंआरी रह जाएगी! और जनक अकुला जाते हैं। एकदम उग्र भाषा में बोलते हैं, हे राजे-महाराजे, बंद करो अब ये चेष्टा! द्वीप-द्वीप, खंड-खंड से मेरी प्रतिज्ञा सुनकर आप आए हैं। धनुष को उठाना, चढ़ाना, तोड़ना बड़ी दूर नगरी है! लेकिन तिल के दाने की

जगह आप उसकी मूल जगह से हटा भी नहीं सके! आप सब अपने-अपने घर चले जाओ! जनकजी ने कहा, मुझे लगता है, मेरी बेटी के भाग्य में विधाता ने विवाह लिखा ही नहीं है! सबने अपमान सह लिया। लेकिन रामानुज लक्ष्मण, तेजस्वी ये राजकुमार से जनक के ये कठोर वचन सहे नहीं गए। जैसे जनक अकुला गए वैसे लखन अकुलाए। भगवान राम के पास लक्ष्मणजी खड़े हो गए और कहा कि बिना पूछे मैं बोल रहा हूं, मुझे माफ करिए। अविवेक क्षमा करे, लेकिन मुझे बोलने दो, ये जनक को विवेक नहीं है! सीधा जनक का अपमान कर दिया! आप यहां विद्यमान है, रघुवीर बैठे हैं और जनक कहे कि कोई वीर नहीं! भगवान राम ने गुरु विश्वामित्र की ओर संकेत किया कि भाई, जब तक गुरु की आज्ञा न हो, उठना मर्यादा का उल्लंघन है। गुरु मुझे उठाए तो मेरे द्वारा धनुष उठेगा; काम तो गुरु कृपा करेगी। कठिन से कठिन समस्या टूट सकती है जिसके साथ गुरुकृपा होती है।

विश्वामित्र महाराज सावधान हुए। विश्वामित्र बोले, हे तात, हे बाप, राघव, उठो और जनकराज के संताप को मिटा दो। ये गुरु का विवेक है। दूसरा होता तो ये कहता, राम, दस हजार राजाओं से कुछ नहीं हुआ; अब उठो बेटे और तोड़कर दिखाओ सबको! लेकिन शिष्य में अहंकार न आ जाए इस लिए कहा, धनुष तोड़ना गौण बात है, तुम्हारा और सीता का विवाह तो सनातन है; तुम तो एक ही ब्रह्म हो, ये तो लीलामात्र है। लेकिन जनकराज जैसे ज्ञानीपुरुष को विक्षेप हो चुका है, उसके परिताप को मिटाने के लिए धनुष तोड़ दो। अपने गुरुदेव के वचन सुनते ही भगवान रामजी ने गुरु के चरण को स्पर्श किया। कोई राजा ने ये नहीं किया था इसलिए अहंकार नहीं टूटा। राम जब धनुष की और जा रहे थे तब अनेक अभिमानी राजा अपमानित शब्द बोल रहे थे। हम नहीं तोड़ पाए, अयोध्या का राजकुमार तोड़ पाएगा? हम विफल हो गए, ये सकल होगा? ऐसे-ऐसे बचन बोल रहे थे। हाथी जाता हो और अगल-बगल से रहकर कुत्ते भौंके तो हाथी उसे देखता नहीं। और भौंकनेवाले थोड़े दूर से ही भोंकते है! कुत्ते हाथी के पैरों में आकर नहीं भोंकते। जगत को राम ने बताया कि अभिमान तोड़कर, धनुष तोड़कर भक्तिरूपी सीता को प्राप्त करनी है, शांतिरूपी सीता को प्राप्त करनी है तो निंदा करनेवालों के वचन को हाथी की तरह अनसुना करके अपनी गति से चलते रहो। बोलनेवाले बोलते रहेंगे।

मेरे भाई-बहन, ये जीवन का सत्य है। और ये दुनिया किसीको छोड़ती नहीं! इस दुनिया ने बुद्ध की आलोचना की। महावीर के कानों में खीलें ठोक दिए। भगवान ईसु-जिसस क्राईष्ट को वधस्तंभ पर लटका दिया। गांधी को गोली मारी। मीरांबाई को ज़हर दिया। नरसिंह मेहता को जैल में बंद कर दिया। जितने-जितने संत और विशिष्टगण हुए हैं, विश्व कि व्यवस्था में जो जाए उसके निंदक होते ही है! निंदा करनेवालों की अनसुनी करनी होगी, तभी हमारी साधना का पौधा पनप सकता है।

भगवान राम ने कैसे धनुष उठाया, कैसे पकड़ा, कैसे चढ़ाया, कोई देख नहीं पाया! और केवल आवाज़ सुनी और क्षण के मध्यभाग में धनुष तोड़ा! धनुषभंग की धुनी ब्रह्मांड में व्यापक हो गई! देव, असुर सब लोग ने कान पर हाथ रख दिए! किसने ये क्या किया? इस ब्रह्मांड में हुआ क्या? कोई निर्णय नहीं कर पाए! तुलसीदासजी ने जाहेरात कर दी, मेरे ठाकुर ने धनुष भंग किया। जयजयकार हो रहा है। यहां सखियां जानकीजी को लेकर आती है। हाथ में जपमाला है। और माला पहनाने की तैयारी है। रामजी खड़े हैं। विश्वामित्रजी का आनंद कहीं समाता नहीं है। लक्ष्मणजी तो इतने खुश है कि राम के सामने बाद में देखे, जनक के सामने खास देखे कि आप कहते थे ना कोई वीर नहीं है! जयमाला पहनाई। सखियों ने कहा, अरे जानकी, पैर छुओ। तब जानकी पैर छुने में संकोच करती है। मधुर भाव का संप्रेक्षण किया है। जानकी इस अलौकिक प्रीत के भाव में है। सीता-राम की जोड़ी खड़ी है। कल सुबह तक दर्शन करते रहो कि दोनों खड़े हैं जनकपुर में। सीता-रामजी इस रूप में दर्शन दे रहे हैं।

'रामचरित मानस' धर्म नहीं सिखाता, धर्मसार सिखाता है

मैंने कबीरसाहब के स्थान में कथा की तब मैंने कहा था, कबीरसाहब क्रान्तिकारी संत है, भ्रान्तिहारी संत है और शान्तिकारी संत है। कबीर शांति देनेवाला, क्रांति करनेवाला और समाज की भ्रान्ति, भ्रामक मान्यता काटनेवाला संत है। मेरा 'रामचरित मानस' क्रान्तिकारी शास्त्र है; भ्रान्ति तोड़नेवाला शास्त्र है; और शांति करनेवाला शास्त्र है।

नव दिवसीय इस रामकथा में हम संवाद कर रहे हैं। भगवान की कथा अनंत है, लेकिन कुछ सात्त्विक-तात्त्विक विचार भी 'मानस' के साथ जुड़े हैं तो ये धनुष-यज्ञ का थोड़ा कुछ मात्रा में आध्यात्मिक अर्थघटन हम सब मिलकर समझने की कोशिश करें। जैसे कि कल कुछ चर्चा हुई कि प्रणय-यज्ञ जो पुष्पवाटिका में हुआ उसमें जीव परमात्मा का दर्शन कैसे प्राप्त कर सकता है उसकी विधि संतों ने बतायी। फिर मैं पुनरुक्ति कर रहा हूं कि व्यक्ति को चाहिए, पहले सत्संग करे, फिर संत की प्रियता प्राप्त करे, फिर वो श्रद्धामय बने, फिर गुरु के कदमों पर चले और राम तक पहुंच जाए।

गोस्वामीजी ने 'रामचरित मानस' में सीताजी के बारे में कई प्रकार के शब्दप्रयोग किए हैं। कभी तुलसीजी सीताजी को 'जानकी' कहते हैं, 'सीता' भी कहते हैं, 'श्री' भी कहते हैं, 'माया' भी कहते हैं, 'भक्ति' भी कहते हैं, और जगद्गुरु शंकराचार्य के शब्द में, वो तो सीताजी को 'शांति' कहते हैं। पुष्पवाटिका में तो रामकी प्राप्ति हुई। और बिलकुल आध्यात्मिक दृष्टि से राम तो हमें मिले हुए हैं, केवल परदा हटे। परमात्मा तो ओलरेडी हमें मिले हुए ही है। फिर भी उसकी पूरी पहचान के लिए कौन-कौन से कदम उठाये जाये वो पुष्पवाटिका का अध्यात्म है। लेकिन धनुष-यज्ञ में भक्ति की प्राप्ति कैसे हो, शांति की प्राप्ति कैसे हो?

आज एक बहन ने प्रश्न पूछा है, 'मैं माला करती हूं, जप करती हूं, पूजा-पाठ करती हूं, लेकिन घर में रोज तकरार होती है। रोज कुछ ना कुछ लड़ाई-झघड़ें होते हैं! मैं क्या करूं?' उसका मैं जवाब नहीं दूंगा, लेकिन एक बात मैंने सुनी वो मैं सुना दूं कि एक बहन ने पंडितजी से पूछा कि, मेरे घर में रोज तकरार होती है। छोटी-छोटी बातों में मेरे पति के साथ मेरी लड़ाई होती ही रहती है। कृपया आप मुझे व्रत बताईए। एकादशीका व्रत या कुछ जप-तप का व्रत, कोई व्रत बताईये के ताकि मैं करूं तो ये तकरार बंद

हो। पंडितजी ने कहा कि बहनजी, ओर कोई व्रत करने की जरूरत नहीं, आप मौन व्रत रखे। आप केवल मौन धारण करोगे तो ये तकरारें बंद हो जायेगी। आप माला करते हैं, जप करते हैं, पूजा-पाठ करते हैं, फिर भी अशांति है! मेरे भाई-बहन, थोड़ा चूप रहना सीखो।

तो, शांति कैसे मिले? शांतिरूपी सीता कैसे मिले? भक्तिरूपी सीता कैसे मिले? और जो माया अविद्या नहीं बल्की विद्या है उसी माया, जो हमें बांधे ना उसका अनुभव हमें कैसे हो? हमें सीया की पहचान कैसे हो? इसके लिए धनुषयज्ञ है। धनुषयज्ञ एक यात्रा है भक्ति प्राप्त करने के लिए। मुझे जब पूछा जाता है, भगवान कैसे प्राप्त हो? मैं इतना ही कहता हूं, भगवान को प्राप्त करना नहीं है, भगवान को पहचानना मात्र है। केवल पहचान हो। लेकिन कठिन है भक्ति। भक्ति को प्राप्त करो ये कठिन है। किसी सुंदर व्यक्ति को आप देख लो, आपको उसके प्रति आदर जगे, उसके प्रति आकर्षण हो जाय। ये व्यक्तित्व आपको मिल सकता है, लेकिन प्रेम मिलना कठिन है। परमेश्वर मिलना आसान है, भक्ति मिलना मुश्किल है। इसलिए धनुषजग्य में भक्ति प्राप्त करने की तीन विद्या मेरी व्यासपीठ को दिखती है। मैं आपके सामने गुरुकृपा से पेश करना चाहता हूं।

तो, मैं खास करके युवान भाई-बहनों को कहना चाहता हूं कि शांति प्राप्त करने के लिए, भक्ति प्राप्त करने के लिए धनुषजग्य में तीन सूत्र है। ये तीन सूत्र हम सब कर सकते हैं और भक्ति प्राप्त कर सकते हैं। राम को जानकी मिली। मान लो कि राम ईश्वर नहीं है, राम परमात्मा नहीं है। एक मिनट के लिए मान लो, राम भगवान नहीं है। राम एक मानव है। और महामानव है, लौकोत्तर है। राम को सीता मिली इनके पीछे कौन साधन काम कर गया? राम को सीता मिली तो हम भी मानव है। हम भी भक्ति प्राप्त कर सकते हैं। लेकिन तीन काम करने होंगे मुझे और आपको। ये है उपाय धनुषजग्य का मेरी व्यक्तिगत धारणा में। मैं मेरी जिम्मेदारी से कहूंगा, ये तीन उपाय है।

कोई भी काम करो जीवन में, जग्यभाव से करो। पहला सूत्र है। मैं बार-बार कह चुका हूं, आप खेती करते हैं वो मेरी दृष्टि से जग्य है। किसानी करो, जग्यभाव से करो। किसीको मिलने जाओ, वृत्ति जग्यभाव की रखे कि मुझे वहीं से कुछ लेना नहीं, मैं वहां कुछ स्वाहा करने के लिए जा रहा हूं। केवल वाह-वाह के लिए मेरी गति नहीं। मेरी गति स्वाहा के लिए है। राम प्रकट हुए है जग्यभाव से। संतानप्राप्ति की विद्या जो मेरे देश में वशिष्ठजी ने बताई, वो भी जग्य के भाव से बताई। पुत्रप्राप्ति करनी है, संतानप्राप्ति करनी है उसके लिए जो प्रक्रिया है उसमें भी जग्यभाव रखे। एक वेपारी को पीढ़ी पर बैठना है, जग्यभाव से बैठे। प्लीज़, एक डोक्टर मरीज़ को तपासे, कृपया जग्यभाव से तपासे। एक शिक्षक अपने छात्र के साथ पढ़ाई शरू करे, उसको जग्यभाव से पढ़ाईए। भारत की भूमि जग्य की भूमि है।

प्रभु की यात्रा ही जग्य से शुरू हुई है। फिर वो ताड़का को मारे। विश्वामित्र का जग्य पूरा करे। अहल्या का जग्य पूरा करे। करते-करते ठाकुर आये जनकपुर। जग्यभाव से कर्म हो। मैं बोलता हूं, आपके सामने चार घंटे। इतने सालों से बोल रहा हूं। आपकी दुआओं से बोलता रहूंगा जब तक जीवन है। ये मेरा जग्य है। गुरुदत्त वचनों से मैं आपके कान में, जग्यकुंड में शब्दों की आहुति दे रहा हूं। मैं विचार आपके कान में, जग्यकुंड में डाल रहा हूं। अल्लाह करे, इसके कारण सबके जीवन में राम का जनम हो जाये। परमात्मा करे हमें जानकी प्राप्त हो जाये, भक्ति प्राप्त हो जाये। तो, चार क्रियापद है इस दो पंक्ति में।

तब मुनि सादर कहा बुझाई ।
चरित एक प्रभु देखिअ जाई ।।
धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा ।
हरषि चले मुनिबर के साथा ।।

चार क्रियापद है। पहला क्रियापद है, 'कहना है।' प्रत्येक व्यक्ति का कहना जग्य है। विश्वामित्र क्यों बोले? Why ? जग्य के लिए बोले। ये तो महामुनि है। मौन रहने के

आदि है। लेकिन क्यों बोले? धनुषजग्य के लिए बोले, हमारे बोलने की क्रिया, हमारा कथन जग्यभाव से हो। मानी हम आहुति डाल रहे हैं।

चरित एक प्रभु देखिअ जाई।

दूसरा क्रियापद आया, देखना। ट्रकों के पीछे लिखा होता है, 'देखो मगर प्यार से।' देखना; देखने की क्रिया। परमात्मा करे, हमारा देखना जग्यभाव से हो। हम एक-दूसरे को देखते हैं, जग्यभाव से देखते हैं कि किस भाव से देखते हैं, ये स्वयं नक्की करे।

धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा।

अब तीसरा क्रियापद आया, सुनना। भगवान करे, हमारा सुनना जग्यभाव से हो। आप रामकथा में बैठे हैं। मैं तो इसे प्रेमजग्य ही कहता हूं। पूरी दुनिया जानती है। मैं भगवत्कथा को ज्ञानजग्य नहीं कहता। यद्यपि 'रामायण'-'महाभारत' की कथा को ज्ञानजग्य कहने की परंपरा है। लेकिन 'मानस' की कथा को प्रेमकथा कहता हूं। यज्ञ की हमारी कोई औकात नहीं है। यद्यपि हां 'मानस' के आधार पर मुझे रामकथा को जग्य कहना हो, धनुषजग्य को जग्य कहना हो तो मैं कहूं, ये ज्ञानजग्य नहीं, विज्ञानजग्य है। धनुष यानी विज्ञान। तो, ये विज्ञानजग्य है। मैंने परसों शायद कहा था कि ये धर्मशाला नहीं, प्रयोगशाला है, जैसे विज्ञान में प्रयोग होते हैं।

एक मुरब्बी आये थे कल कथा में साठ किलोमीटर दूर से। कथा की क्या असर हुई है, इसका मूल्यांकन होना चाहिए, ऐसा प्रश्न वो मेरे निवास पे कर रहे थे। तो, एक भाई ने कहा, हम दो भाई है, एक मेरा बड़ा भाई और मैं हूं। हमारा बटवारा शुरू हुआ तब मैंने तुरंत कहा, मैंने मोरारिबापू की कथा सुनी है इसीलिए मुझे ज्यादा नहीं चाहिए, तुम्हें जितना चाहिए ले जा। भगवान की कथा में इतने लोगों में क्या-क्या हलचल हो रही है, कौन निर्णय करेगा? मेरा प्रयोग पांच-पचास लोगों के बीच में नहीं है। यद्यपि मैं बात व्यक्तिगत कर रहा हूं। एक पर्सनल टोक है मेरी। आप एकाग्रता से सुनेंगे तो आपको लगेगा, बापू मेरे से बात कर रहे हैं, मेरे ही प्रश्नों की बात कर रहे हैं, मेरी ही समस्या की कुछ बात हो रही है। भगवद्कथा से क्या नहीं होता?

आज मुझे कई प्रश्न पूछे गये कि आप कितने साल के थे तब से कथा शुरू की? जब मैं चौदह साल का था तब मैंने पहली कथा गाई। तब से अनवरत गाता हूं। जब मैं शुरूआत में गांव में कथा कहने जाता तब दस-पंद्रह लोग सुनते थे। दस-पंद्रह में दस सो गये होते थे! मैं जागता रहता था, क्योंकि मुझे तो बोलना है तो जागना ही पड़े! हारमोनियम बजाये वो जागते! तबला बजाये वो जागे एक और कोई पूजा करवानेवाले रहेते वो एक पाठक। वो दो-चार लोग जागते, बाकी तो सो जाते थे! आज कथा में इतनी जागृति क्यों आई? ये एक कथायुग है मेरी दृष्टि में। ये सत्युग, त्रेता, द्वापर, कलियुग भूल जाओ। कथायुग में हम जी रहे हैं। कुछ सालों के बाद इसका मूल्यांकन होगा तब मालूम होगा, भगवान की कथा ने कितने जीवन को आप्लावित किया! बहुत काम होता है। छोटे-छोटे बच्चों से लेकर बुज़ुर्गों तक मेरे श्रोता है।

कोई जलेबी करे तो चासनी में डूबोनी पड़ती है। कहना जग्यधर्म है। तुम्हें जो कहना है, कह दो, लेकिन अमृत में घोलकर। 'रामचरित मानस' में भरतजी जो बोलते हैं वो दो-टूक बोलेते हैं। लेकिन घोलकर बोलते हैं ताकि दूसरों को अच्छा लगे। एक-दूसरों के सामने देखे तो जग्यभाव से देखें। कोशिश तो करे यार! सुनना जग्यभाव से। आप मनोरंजन के लिए नहीं सुनते, श्रवणजग्य कर रहे हैं। मैं गायनजग्य कर रहा हूं, वक्तव्यजग्य कर रहा हूं। फिर चौथा क्रियापद आया, चलना। हम चले एक जगा से दूसरी जगा तो चले जग्यभाव से। हम मंदिर में जाये तब भी जग्यभाव से नहीं जाते! दुकान पर जाये तब तो कैसे जायेंगे? आदमी को चाहिए जग्यभाव से चले। तो चार क्रियापद मेरी व्यासपीठ को नज़र आये यहां। कहने की क्रिया, देखने की क्रिया, सुनने की क्रिया और चलने की क्रिया। प्रत्येक

इन्द्रियों की क्रिया को यहां जग्य में सामेल नहीं करूंगा, लेकिन हमें रोज इन बातों को देखना पड़ता है, बोलना पड़ता है, सुनना पड़ता है, चलना पड़ता है। परमात्मा करे, इनके पीछे जग्यभाव का प्रेसर हो।

राम की पूरी यात्रा, राम की प्रत्येक क्रिया श्रवण, कथन, सोचना जग्यकर्म है। 'भगवद्गीता' में कई जग्यों की श्रेणी बताई, द्रव्यजग्य, तपोजग्य। उसके आध्यात्मिक अर्थ है। लेकिन द्रव्यजग्य, उसका अर्थ आपके सामने ऐसा रखूं। द्रव्य यानी लक्ष्मी; पैसे कमाना कोई बुरी चीज़ नहीं है। अर्थ हमारे चतुर्पुरुषार्थ में एक पुरुषार्थ है। लेकिन फिर मेरे वक्तव्य को दोहरा रहा हूं। मेरे भाई-बहनों, मेरे देश के भाई-बहनों, मेरे बिहार के भाई-बहनों, मेरे पृथ्वी के भाई-बहनों, आपसे निवेदन करना चाहता हूं, कमाओ दो हाथ से, खूब कमाओ, लेकिन दूसरों के लिए सद्उपयोग करो ये जग्य हो जायेगा। कर्जा करके सत्कर्म भी मत करो। कई लोगों को देहातों में ऐसे अनुष्ठान तथाकथिक धार्मिक लोग बताते हैं! बेचारों को ज़मीन बेचनी पड़ती है, ब्याज से पैसे लेने पड़ते हैं! तुम्हें नारायण बलि कराना पड़ेगा! ये बलि कराना पड़ेगा! तम्हें इतना अनुष्ठान करना पड़ेगा! लोग एक तो प्रारब्ध से मारे गए, धर्म के नाम से क्यों मारे जा रहे हैं। और साहब, हम धर्म का नाम बहुत आसानी से उपयोग में लेते हैं, लेकिन धर्मजगत, जानो। धार्मिक लोगों ने भी कम जाना है धर्म को! जिन्होंने जाना है उनको तो मेरा कायम दंडवत् है। वशिष्ठजी 'रामचरित मानस' में धर्म जानते हैं। लेकिन मेरा भरत धर्म का सार जानता है। 'मानस' क्यों क्रान्तिकारी शास्त्र है? क्यों मैं उस पर लगा हूं? और क्यों विश्व में अधिक स्थापना होती जा रही है 'रामचरित मानस' की? क्यों? मेरा बल क्यों है? क्योंकि 'रामचरित मानस' धर्म नहीं सिखाता, 'रामचरित मानस' धर्मसार सिखाता है।

फिर मुझे पुराना एक संस्मरण याद आता है। मैं मेरे दादाजी के पास जब 'रामचरित मानस' पढ़ता था और 'अयोध्याकांड' का अध्ययन चल रहा था तब मुझे कहने लगे, बेटा, धर्म और धर्मसार का भेद समझ लेना। और दो-टूक बात मुझे सुनाई थी। वशिष्ठजी धर्म जानते थे, धर्म का सार नहीं जानते थे। तो, भरत के साथ चलते-चलते प्रयाग गए, फिर चित्रकूट गए। फिर लौट आए। अयोध्या आए। फिर पादुका स्थापित की और उसके बाद भरतजी धार्मिक नहीं है, धर्म का सारांश लिए बैठे हुए है, उसके स्वीकार किया वशिष्ठजी ने। और ये मेरा सद्भाग्य है कि मेरी स्मृति खुल रही है। बचपन की बात; करीब नौ-दस साल का जब में था तब 'रामायण' का अध्ययन कर रहा था। आप मेरा परिवार हो इसीलिए मैं आपके सामने बोल देता हूं। वैशाख महिना था। और हमारे गांव में, आप पीठोडिया हनुमान जाओ तो रास्ते में मुस्लिम काडा नारनी वाडी थी आंबा की। हमारे रामदास गुरु हमारे परिवार के भाई साधु थे, वो वहां नौकरी करते थे। नौकरी करते थे रक्षक के रूप में। फिर वो कभी-कभी हम छोटे थे तो बुलाते थे। तो वो थोड़े आम लेके आये, दादा को दिया कि दादा ये आम। दादा के प्रति तो श्रद्धा किसको नहीं थी? वो तो आम देके चला गया।

तो, आम को हाथ में घूमाते हुए दादा मुझे कहने लगे कि बेटा, आम को समझ लो तो धर्म का सार समझ में आ जाएगा। क्योंकि आम में तीन वस्तु है, छिलका, रस और गुटली। यद्यपि तीनों आवश्यक है, तीनों जरूरी है। उपर का छिलका न हो तो रस गंदा हो जाएगा, बह जाएगा। कवच बनकर आम को सुरक्षा देती है छाल। और गुटली भी जरूरी है, क्योंकि नए आम पैदा करती है। लेकिन दादा कहते थे, छाल धर्म है; गुटली धर्म है, पर रस सार है। जरूरी तीनों है, लेकिन छिलका और गुटली धर्म है, रस सार है। वशिष्ठजी छाल में पड़े हैं या तो गुटली में पड़े हैं। मेरा भरत छाल और गुटली में नहीं, रस में डुबोया है। जो धर्म के फल सुंदर रूप उपर-उपर डाल रहा है, शब्दों में ही है, वो धर्म का सार नहीं है; धर्म की छाल है। मैं बहुत अच्छा आपके पास तीन घंटे बोलूं और मेरी बोली में न रस है, न मेरे हृदय में प्यार है; मेरा आनंद न हो, तो ये धर्म तो हो सकता है, क्योंकि चौपाई गा रहा हूं, श्लोक बोल रहा हूं, ये धर्म तो है, लेकिन सार नहीं है। रस नहीं है। वशिष्ठजी राष्ट्र के देवता

है। बोलते हैं बहुत सुंदर, केवल शब्द! और गुटली क्या है? प्रलोभन; धर्म जो प्रलोभन देता है। नया पेड होगा, फिर आम के पेड लगेंगे, तुम्हारे बच्चे खायेंगे, फिर बो, ये प्रलोभन। धर्म दो काम करता है; एक शब्द आडंबर और दूसरी बात, प्रलोभनों की एक शृंखला निर्माण करता है। वो धर्म होगा, प्रणाम; धर्मसार नहीं है। इसलिए मैं कहता हूं, 'रामचरित मानस' क्रान्तिकारी ग्रंथ है। मैंने कबीरसाहब के स्थान में कथा की तब मैंने कहा था, कबीरसाहब क्रान्तिकारी संत है, भ्रान्तिहारी संत है और शान्तिकारी संत है। कबीर शांति देनेवाला, क्रांति करनेवाला और समाज की भ्रान्ति, भ्रामक मान्यता काटनेवाला संत है। मेरा 'रामचरित मानस' क्रान्तिकारी शास्त्र है; भ्रान्ति तोड़नेवाला शास्त्र है; और शांति करनेवाला शास्त्र है।

'रामचरित मानस' में धर्मसार बताया; अद्‌भुत है। ये तो मुझे स्मृति आ गई है, अब मैं क्या-क्या कहूं आपको? अब मुझे कहने को बहुत जी करता है यहां भारौल में और कल तो जाना है! क्या कहूं? सभी पीकर बैठे हैं! कब कौन उठे, कब क्या करे! सब डूबे हैं नशे में! इतना बड़ा मयखाना दुनिया में कहीं नहीं होगा। ये प्रेम का मयखाना है। यहां शराब नहीं पिलायी जाती है, यहां होश देनेवाला अमृत पिलाया जा रहा है। आदमी जागृति में आये, कोई नाचता आये, कोई जुमता आये, कोई कभी खड़े होते हैं! मैं भी आपको यही सीखाके जा रहा हूं कल, ऐसे ही मस्ती में जीना। तथाकथित धर्म की छिलकें की बातें करनेवालों ने हमारे रस को गंदा कर दिया! हमारे सभी रस को दूषित किया! या तो गुटला, ये करो तो स्वर्ग मिलेगा! ये करोगे तो पति-पत्नी में बनेगी! वशिष्ठजी भरतजी को धर्म सीखा रहे हैं। राम का वनवास हो चुका। अवधपति ने प्राणत्याग किया। और भरत को शब्दों से धर्म सीखा रहे हैं कि तुम्हारे पिता को वचन प्यारे थे, प्राण नहीं। और उसने प्राण देके वचन का निर्वाह किया। भरत, तुम सुनो, धर्म व्याख्यान सुनो भरत, ऐसी घटना पहले घटी है और पिता के वचन पालने में पूर्वजों, महान व्यक्तिओं ने बलिदान दिया। तुम्हें और कोई कुरबानी देनी नहीं है। पिता जिसको राज दे वो भोगे। चौदह साल गादी पर बैठ जाओ, धर्म कहता है। ये छिलकेवाले शब्द है! लेकिन गुटलीवाले शब्द अब आते हैं। प्रलोभन दिया। फिर वशिष्ठजी जैसे धार्मिक महामानव गुटली देते हैं, जगत में कीर्ति मिलेगी बेटा भरत। आप दुनिया में कीर्ति का पात्र होगा और आखिर में स्वर्ग मिलेगा। ये सब गुटली है। तुम्हें कीर्ति मिलेगी, यश बढ़ेगा और तुम ये करोगे तो तुम्हें स्वर्ग की प्राप्ति होगी। फिर वशिष्ठजी भरत से संग करते-करते बदल गए और 'अयोध्याकांड' के अंत में बोले -

समुझब कहब करब तुम्ह जोई।
धरम सारु जग होइहि सोई।।

क्या शरणागति है वशिष्ठजी की! हे भरत, अब मुझे कहने दो, तुम जो समझते हो, तुम जो कहते हो और तुम जो करते हो वो धर्म नहीं है, धर्म का सार है। 'रामायण' धर्म नहीं है, धर्म का सार है। मैं मेरे देश के युवानों को, प्यारी पृथ्वी के युवानों को ये कहना चाहता हूं बाप कि 'धर्म' बहुत प्यारा शब्द है, लेकिन धर्म का सार पकड़ना चाहिए। यद्यपि छिलके की जरूरत है। मैं बोल रहा हूं, तुम्हारे सामने प्रवचन कर रहा हूं, मुझे शब्द का ही सहारा लेना पड़ा ये छिलके का। मैं ये भी कहता हूं, 'रामचरित मानस' घर में रखोगे तो शांति मिलेगी। तो, ये थोड़ी गुटली भी है। लेकिन मेरा ईरादा तो बीचवाला रस है। आप रस पीओ। आप रसप्राप्ति करे। क्योंकि हमारी स्मृतिओं ने कहा, ईश्वर रस है। परमात्मा रसरूप है। परमात्मा महारस है।

तो, खूब कमाओ बाप! दो हाथों से खूब कमाओ, लेकिन बांटो तब चार हाथों से बांटो। प्रत्येक कर्म को जग्यभाव से करो। ये भक्ति की प्राप्ति का पहला कदम है। बोलो तो जग्यभाव से। सुनो तो जग्यभाव से। चलो तो जग्यभाव से। देखो तो जग्यभाव से। थोड़ा एक महिना तो प्रयोग करो, फायदा हो तो रखना, वर्ना कहां हमने फी ली है आप से? छोड़ देना यार! वैद बदल देना।

मैं तो कल चला जाऊंगा लेकिन घड़ी पकड़ रखना, जिसको मैं मोमेन्ट सायन्स कहता हूं। इन पलों को पिरोई रखना। कल तो सब मेला बिखर जायेगा। मैं गाता रहता हूं -

एक पल है हंसना, एक पल है रोना,
कैसा है जीवन का मेला ...

उसको मेरी व्यासपीठ मोमेन्ट सायन्स कहती है। मेरा पूरा विश्व जग्यभाव से काम करे। अपनी प्रत्येक क्रिया जग्य से प्रेरित हो। ये भक्ति तक पहुंचने का पहला कदम है। मैं बोलूं जग्यभाव से। आप सुनो जग्यभाव से। आयोजक आयोजन करे जग्यभाव से। भोजन करे जग्यभाव से। तो, 'गीता' में लिखा है द्रव्य जग्य है। उसका मैं अपने ढंग से अर्थ करूं। द्रव्य मानी पैसा। कमाओ अर्थ को। जग्यभाव से कमाओ। तप करो, जग्यभाव से करो। योग करो, जग्यभाव से करो। स्वाध्याय करो, जग्यभाव से करो। 'मानस' का पाठ करो, 'भगवद्‌गीता' का पाठ करो। अथवा तो अपना-अपना जो ग्रंथ हो, मुझे तो कोई भेद नहीं है; जिसका जो धर्मग्रंथ उसका पारायण करो जग्यभाव से।

अब दूसरा चरण, भगवान राम इस जग्यभाव से चले हैं। जनकपुर पहुंचे हैं, लेकिन किस के साथ गए हैं? गुरु के साथ। मेरी व्यासपीठ को लगता है, सीतारूपी शांति अथवा सीतारूपी भक्ति को प्राप्त करने के लिए दूसरा कदम, दूसरा प्रयोग, आगे का पायदान है गुरुनिष्ठा। विश्वामित्र ने कहा, राघव, हम चरित्र देखने जाय। राघव ये भी नहीं बोले, पिताजी ने तो आपके जग्य के लिये भेजा था तो अब हम लौट जाये अयोध्या? लेकिन गुरुनिष्ठा कहती है कि गुरु बोलता है तो वो ठीक ही बोलता होगा। फिर कहते हैं, अहल्या को चरणरज दो; चरणरज दे दी। फिर कहते हैं, गंगास्नान करो; गंगास्नान कर लिया। फिर कहते हैं, तीर्थ के देवताओं को दक्षिणा दो, दे दी। अब सवाल ये आया, आप कहते हैं, गुरु में निष्ठा रखो, तो हम गुरु किसको माने? केवल शब्द की मायाजाल से भ्रमित कर दे वो गुरु कि प्रलोभन की

गुटलियां दिखा दे वो गुरु कि आमरस पिला दे वो गुरु? विश्वामित्र ने राम की यात्रा में जो-जो किया ऐसा कोई करके दिखाये उसको गुरु मानो। विश्वामित्र ने क्या किया? सम्राट के घर जाके उसकी संपत्ति न मांगी, उनकी संतति मांगी। वर्ना विश्वामित्र दशरथजी से बहुत संपत्ति मांग सकते थे। गुरु वो है उसको पहचानो, परखो जो तुमसे रूपया न मांगे, तुम्हारा हृदय मांगे। तुमसे तुम्हारी संपत्ति न मागे, तुम्हारी संतति मागे। तुम्हारे संतान दो। दो मीन्स साधु बनाने के लिए राम को नहीं ले गए विश्वामित्र। बाल दीक्षा में विश्वामित्रजी नहीं मानते थे। ले गए एक ब्रह्मचारी को और गुरु गृहस्थ बनाके ले आये। विश्वामित्र क्रान्तिकारी गुरु है। विश्वामित्र चाहते हैं कि राम-लक्ष्मण विश्व के मित्र बने। विश्वामित्र चाहते हैं संतति हो जग्यरक्षा के लिए; गायों की रक्षा के लिए; संस्कृति के लिए; इस सुंदर धरती का पर्यावरण न बिगड़े इसके लिए। ये गुरु का लक्षण है।

गुरु का दूसरा लक्षण है, सरलता से चल दिए। न दशरथ का रथ लिया, न घोड़ेसवारी की, न हाथी की सवारी पर बैठे। पदयात्रा करने लगे सहज। समयानुकूल सवारियां बदलनी पड़ती है, लेकिन कामना नहीं होनी चाहिए; सादगी होनी चाहिए। विश्वामित्र में एक गुरु का लक्षण है वचन की सादगी, वाणी की सादगी। इवन वस्त्र की भी सादगी, पहेरवेश की सादगी। फिर वो जनकपुर गए। और राम को मैं ही मेरे कमरे में बंद रखूं? गिरफ्तार करुं? नहीं। राम को सार्वजनिक कर दो। राम सबका है। उसके आगे। सेवा करनेवाले राम को गुरु बार-बार सावधान करते हैं कि राघव, मैं तो अब विश्राम कर लूंगा; बेटा, तुम भी विश्राम करो। गुरु सेवक की जान न खींच ले! गुरु ऐसा स्थितिस्थापक हो, ये भी गुरु का एक लक्षण। और धनुषजग्य में जब गये; विश्वामित्र उस समय बोले नहीं, बहुत देर कर दी विश्वामित्रजी ने क्योंकि गुरु का ये लक्षण है।

बिस्वामित्र समय सुभ जानी ।
बोले अति सनेहमय बानी।

गुरु वो है युवान भाईयों-बहेनों, वो शुभ समय जानके शिष्य को आवाज़ करे। गुरु समय जानकर शिष्य को प्रेरित करे, बेसमय नहीं। गुरु का आगे का लक्षण ये है कि हमारे साथ बोले, समयसर बोले, शुभ समय पर बोले और बोले तब अति स्नेहमयवाणी बोले। गुरु बोले तो ऐसा लगे कि इतना वात्सल्य तो हमारे माँ-बाप ने भी हमें नहीं दिया!

तो बाप, भक्ति प्राप्त करने के लिए धनुषजग्य में जो तीन बातें मेरी व्यासपीठ को गुरुकृपा से स्मरण में आती है। पहला कदम है प्रत्येक क्रिया जग्यमय हो। दूसरा कदम है गुरुनिष्ठा। तीसरा कदम है धनुषभंग। धनुषभंग का अर्थ स्वाभाविक है, अहंकार को तोड़ देना। हमारा अहंकार मिट जाये, बस। अहंकार कई प्रकार के होते हैं। धन का भी होता है। पद और सत्ता का होता है। समाज में मिली प्रतिष्ठा का होता है। ऐश्वर्य का भी होता है। रूप का भी होता है। आदमी को बल का भी अभिमान होता है। छोड़ो, कभी-कभी अधकच्चे हो उसको ज्ञान का भी अभिमान होता है! कहीं-कहीं देखा गया, वैराग का भी अभिमान! कभी-कभी जप करनेवालों में भी देखा गया। मैं इतने-इतने जप करता हूं! मैं इतनी माला करता हूं! तप करनेवालों में भी अभिमान! शंकर का धनुष न टूटा तब तक सीता ने जयमाला न पहनाई, इसका तात्त्विक अर्थ है, हमारा अहंकार टूटे। भक्ति का तीसरा बाधकतत्त्व है अभिमान। और अहंकार का धनुष टूटे।

कोई आदमी जग्यभाव से काम करे, गुरुनिष्ठा रखे और अभिमान छोड़ दे और भक्ति जयमाला पहना दे। लेकिन मेरे भाई-बहन, परिणयजग्य-विवाह होने में फिर एक और बाधा आती है वो है परशुराम का आगमन। और परशुराम की व्याख्या मेरी व्यासपीठ करती है, परशुराम मानी क्रोध। कई आदमी जग्यभाव से कर्म करते हैं। कई आदमी गुरुनिष्ठा भी रखते हैं। कई आदमी अहंकार नहीं करते, लेकिन ये सब होने के बाद उसको क्रोध आता है। ये क्रोध परिणयजग्य की बाधा है। विवाह नहीं होने देता। और आजकल लोगों को गुस्सा बहुत आता है! और मैं देखता हूं, लोग चौबीस घंटे क्रोध क्रोध! भक्ति की प्राप्ति तक पहुंचने में बाधा करता है क्रोध, आवेग, उग्रता। आप कहे कि हमारा क्रोध जाता नहीं, क्या करें? तो मेरी प्रार्थना है छः समय क्रोध न करो, बाकी करो। मैं आपको समय बता रहा हूं। छः वक्त क्रोध न करे, बस।

एक सुबह में जागते समय कभी क्रोध मत करो, प्लीज़। कई लोग सुबह जागते ही जग्य करने लगते हैं! क्रोध का जग्य! प्रातःकाल परमात्मा से मिलने का समय है। अपने बच्चों को माता-पिता या तो घर के जिम्मेदार व्यक्ति जगाये, तो प्यार से जगाये। गुस्से से नहीं। दूसरा, घर से जाये काम में तब क्रोध न करे। तीसरा भोजन करते समय क्रोध न करे। कई लोग भोजन करते ही गुस्सा करते हैं! भोजन करते समय क्रोध न करो। चौथा स्थान, आप पूजा करते हो, भजन करते हो, जप करते हो, ध्यान करते हो, तब भजन के समय क्रोध न करे। पांचवां स्थान, घर में जब प्रवेश करो तब क्रोध न करो सायंकाल को। और छठ्ठा स्थान, सोते समय क्रोध करते न सोओ। एक तो नींद तमोगुण है, क्रोध भी तमोगुण का लक्षण है। दोनों एक होंगे तो उजाला नहीं होगा! तो, क्रोध हमारा एक विघ्न है। हमारे यहां परशुरामजी आवेश अवतार है।

भगवान राम का जयजयकार करते हुए परशुरामजी तपस्या करने के लिए अवकाश प्राप्त कर लेते हैं। यहां सब विघ्न दूर हो गये। महाराज विश्वामित्र के चरणों में प्रणाम करते हुए जनकराज ने कहा, परशुरामजी का समर-यज्ञ भी पूरा हो गया। जनक राजा दूतों को पत्र देकर अयोध्या भेजते हैं। वशिष्ठ आदि महापुरुषों को लेकर, पूरी अयोध्या को लेकर दशरथजी जनकपुर की यात्रा करते हैं। विवाह की मागशर शुक्ल पंचमी, विवाह पंचमी ये तिथि निश्चित हुई। प्रभु पधारे दुल्हे के वेश में। जानकीजी को लेकर अष्ट सखियां विवाह मंडप में आती है। उसी समय वशिष्ठजी ने कहा, राजन्, मैंने सुना है, आप के भाई की दो बेटी कुंआरी है मांडवी, श्रुतकीर्ति और आप की बेटी ऊर्मिला। तो इसी मंडप में तीनों को ले आओ और हमारे तीन राजकुमार इनके साथ उसका भी ब्याह हो जाय। सब को आनंद हुआ। मांडवीजी भरत को समर्पित हुई; श्रुतकीर्तिजी शत्रुघ्न महाराज को और ऊर्मिलाजी लक्ष्मणजी को प्रदान हुई। बहुत दिन बारात रुकी। आख़िर बिदा दी गई। इस बिदाई के प्रसंग मैं प्रार्थना करूं कि तुम्हारें घर में किसी की बेटी बहु बनकर आये तब उसकी देखभाल उसकी सगी माँ करे इससे ज्यादा करना। क्योंकि किस तरह बेटीओं की बिदा होगी? हमारे गुजरात में तो एक कवि ने कन्याविदाय का एक करुण गीत लिखा है। गुजराती में एक गीत है कन्या विदाय का -

काळजा केरो कटको मारो गांठथी छूटी गयो...

मानो बाप कहता है कि मेरे कलेजे का एक टुकड़ा आज मेरे हाथ से छूटा जा रहा है। धन्य है भारत की बेटी को, धन्य है भारत की कन्याओं को और बाप-बेटी का जो रिश्ता है ये कुछ विशेष है। ममता के बंधनों मे ये कुछ विशिष्ट है।

रास्ते में निवास करते-करते, रास्तों के प्रजाजनों को सुख देते-देते पवित्र दिन बारात अयोध्या पहुंची। भव्य स्वागत हुआ। चारों दंपतीओं की पूजा, आरती हुई। मेहमानों का स्वागत हुआ। वेद रीति, लोकरीति हुई। आख़िर महाराज विश्वामित्र की बिदा की बेला आई। एक संत को बिदा देनी है। पूरा राज परिवार चूपचाप खड़ा है। जिस संत के कारण अयोध्या का आनंद इतना बढ़ा था वो विश्वामित्रजी जा रहे हैं। मैं आप को विश्वामित्र के दर्शन से गुरु के लक्षण बता रहा था कि गुरु किसको माने? ये आख़री लक्षण है गुरु का कि गृहस्थ के घर जाये; रहे, उसकी रोटी भी खाये, कहीं गुना ज्यादा सफल कर दे; उसके बाद वो ज्यादा गृहस्थ के घर रहे ना। अपना कार्य पूरा हो गया और अपने भजन और तपस्या के लिए वहां से निकल जाये ये गुरु का लक्षण है। विश्वामित्र देखिए, ईतना बड़ा अद्‌भुत काम हुआ, लेकिन जाते समय ये साधु पैदल अकेला चल पड़ा! सरजू के तट तक राज परिवार बिदाई के लिए गये। और विश्वामित्र को बिदा देते समय दशरथजी की आंखें भर आई।

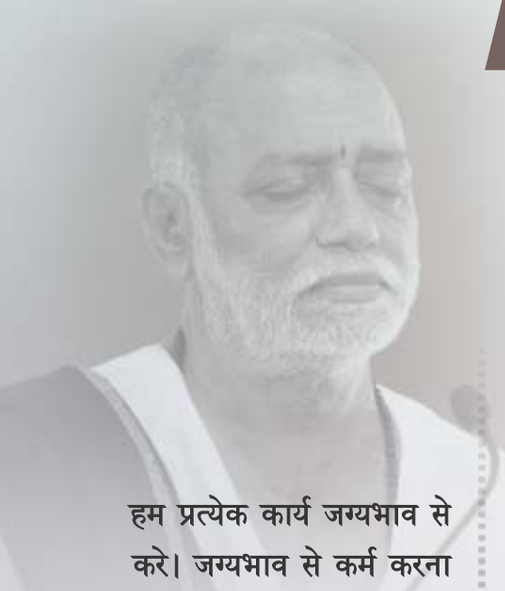

हम प्रत्येक कार्य जग्यभाव से करे। जग्यभाव से कर्म करना इसका मतलब बहुत सीधा-सादा कहूं तो, स्वाहा की वृत्ति से काम करना है। मुझे वाह-वाह मिले न मिले वो मेरी ख्वाहिश नहीं है। जग्यकर्म का ये भी अर्थ हो सकता है, निमित्त बनकर काम करना। और जग्यभाव से कर्म करने का मतलब है कि नमित बनकर काम नहीं करना; कायर बनकर काम नहीं करना। हम सब के हृदय में परमात्मा बैठा है।

हम प्रत्येक कार्य जग्यभाव से करे

'मानस-धनुषजग्य', जो इस कथा का विचार बिंदु रहा। नव दिन से हम केन्द्र में इस विचार को रखते हुए संवाद कर रहे हैं। आज आख़िरी दिन है। कल की कथा में भगवान राम ने धनुष भंग किया और सीता की प्राप्ति यानी भक्ति की प्राप्ति के लिए क्या-क्या कदम उठाने चाहिए इसकी थोड़ी सात्त्विक चर्चा मेरी व्यासपीठ ने आप के सामने रखी। पहले तो हम प्रत्येक कार्य जग्यभाव से करे। आज उसी संदर्भ में एक दो जिज्ञासा भी है कि 'बापू, हम ये नहीं समझ पाये जग्यभाव से कार्य करना मानी क्या? इसका मतलब क्या?' जग्यभाव से कर्म करना इसका मतलब बहुत सीधा-सादा कहूं तो, स्वाहा की वृत्ति से काम करना है; दूसरों के लिए काम करना है। मुझे वाह-वाह मिले न मिले वो मेरी ख्वाहिश नहीं है। मेरा बोलना, चलना, देखना, सोचना ये सब कुछ स्वाहा के हेतु हो। 'गीता' के न्याय से कहूं तो जग्यकर्म का ये भी अर्थ हो सकता है, निमित्त बनकर काम करना। निमित्त भाव से कर्म करना। जैसे 'गीता' में कृष्ण अर्जुन से कहते हैं, 'निमित्त मात्रम् भव सव्यसाची...।' अर्जुन तू निमित्त बन; ये बात कही।

दूसरी बात, जग्यभाव से कर्म करने का मतलब है कि नमित बनकर काम नहीं करना; कायर बनकर काम नहीं करना। हम सब के हृदय में परमात्मा बैठा है। हमारी जितनी औकात हो उतनी औकात से हम दूसरों के लिए कुछ करे। ये जग्यभाव माना जायेगा। फ़िर 'गीता' का न्याय, 'योग: कर्मषु कौशलम्।' कर्म की कुशलता, कर्म का कौशल्य। कर्म करने की कुशलता के साथ काम करना। इतना बड़ा प्रेमजग्य भरौल की भूमि पर प्रभुकृपा से संपन्न होने जा रहा है। इनके पीछे कार्यकौशल्य लगा है। दृष्टि सब के पास होती है, दृष्टिकोण नहीं होता। आंख सब के पास होती है, लेकिन आंख की सीमा होती है। मेरी और आप की आंख कितना देख सके? लेकिन जिसके पास दृष्टिकोण होता है, एक विचारधारा होती है, कार्य की कुशलता का बहुत बड़ा बाहुल्य होता है, वो जग्यभाव से कर्म करता है।

तो, कल के सूत्रों को मैं दोहरा रहा हूं। भक्ति प्राप्त करना, ईश्वर प्राप्त करना जटिल नहीं। ईश्वर मिला हुआ है लेकिन ईश्वर के प्रति प्रेम न हो तो ईश्वर का इतना अर्थ नहीं रहता। राम मिले हुए हैं, लेकिन राम की भक्ति सीता को प्राप्त करने के लिए ये तीन सूत्र अत्यंत आवश्यक है। हम जो भी करे जग्यभाव से करे। दूसरा सूत्र है, गुरुनिष्ठा से करे और तीसरा, अहंकार को तोड़ दे। जैसे धनुष को तोड़ा, फ़िर परिणय-जग्य संपन्न हुआ। ये तो व्यासपीठ का कहना है। मेरी जिम्मेवारी से लेकिन सीता-राम का मिलन हुआ इनके पीछे कई संतों ने प्रकाश डाला है कि किस रूप में ये परिणय-जग्य सफल होता है। मैंने दो-तीन संतों से भी सुना।

हमारी आदरणीय बहनजी मंदाकिनीजी, रामकिंकरजी की परम शिष्या, उसने मुझे किताब दी थी, जब मैं अयोध्या था। तो उसके कुछ पन्नें पढ़े। तो मुझे पंडितजी का दर्शन ओर निकट पड़ा। पंडितजी महाराज का मानना है कि भगवान राम ने पहले ताड़का को मारी। फ़िर अहल्या का उद्धार किया। फ़िर धनुष तोड़ा। फ़िर परशुरामजी का धनुष चढ़ाया। ब्रह्मलीन पंडित रामकिंकरजी महाराज का ये दर्शन बड़ा प्यारा दर्शन है। वो कहते हैं कि ताड़का को मारना यानी व्यक्ति को अपने मन की आशा मिटाना। हम संसारी है। आशा तो होती है। इच्छाएं तो होती है। लाख प्रवचन करें, आशाएं न रखो, इच्छाएं न रखो। लेकिन हम जीव है। आशा तो रहती है। लेकिन दुराशा नहीं अच्छी। खराब आशा, दुष्ट आशा ये ताडका है, ऐसा पंडितजी का मानना है। मन की गलत आशाओं को मिटाई जाय तो परिणय-जग्य पूरा हो जाय। हम मनुष्य है। हमारे पास मन है। हमारे मन बहुत तरंग करता है। लेकिन हमारे मन में पवित्र आशा हो। दुष्ट आशाओं का नाश हो। फ़िर अहल्या का उद्धार। वहां पंडितजी कहते हैं, बुद्धिजड़ता मिटाइ जाय। शिला हो गई अहल्या। बुद्धि की जड़ता खतम हो जाय। सीता-राम को एक करने के लिए बुद्धि की जड़ता मिटे। तीसरी बात यद्यपि चित्त आना चाहिए पर थोड़ा कर्म भेद कर दिया। अहंकार मिटना चाहिए। मन,बुद्धि, चित्त, अहंकार। मन में दुराशा ना रहे। बुद्धि में जड़ता ना रहे। अहंकार टूट जाये। और चौथा; विष्णु भगवान का धनुष परशुराम महाराज ने राम को दिया और धनुष चढ़ गया। विष्णु को तुलसीदासजी ने चित्त कहा है। जिसके मन की दुराशा मिटे। जिसकी बुद्धि की जड़ता मिटे। जिसके अहंकार टूटे। और जिसके चित्त का अनुसंधान श्री हरि से हो जाय; ऐसा महाराजश्री का दर्शन है।

तो, कई बातें हो सकती है परमतत्त्व को प्राप्त करने के लिए। कुछ ऐसी सात्त्विक-तात्त्विक चर्चा आप के सामने मैंने रखी। भगवान राम-जानकी का विवाह हुआ। विवाह कर रामजी अवध आये। फ़िर 'बालकांड' को हमने संक्षेप में पूरा कर दिया। अब छः सोपान। कितनी कथा लंबी बाकी है? मैं एक ही पंक्ति का आश्रय लेकर आगे बढ़ूं-

हरि अनंत हरि कथा अनंता।
कहहिं सुनहिं बहुबिधि सब संता ।।

हरि अनंत है; इसकी कथा इससे भी अनंत है। कौन कह सकताहै? इसीलिए संक्षेप करना ही पड़ता है।

'रामचरित मानस' का दूसरा सोपान 'अयोध्याकांड।' 'अयोध्याकांड' के आरंभ में बहुत सुख का वर्णन है। इतना सुख अयोध्या में जानकीजी के आने के बाद हुआ। मेरे भाई-बहन, सुख अच्छा है। सुख सब को मिलना चाहिए। सुख पाना हमारा अधिकार है। लेकिन अतिशय सुख दु:ख को जन्म देता है। अत्यंत सुख के बाद दु:ख आयेगा ही आयेगा। कौन कहेगा, दुनिया दु:खी हो? सब सुखी हो लेकिन 'मानस' का प्रथम अध्याय कहता है, अतिशय सुख दु:ख को जन्म देता है। सब लोग सब प्रकार से सुखी हो गये। मेरे भाई-बहन, अल्लाह करे किसीके जीवन में दु:ख न आये। लेकिन सुख आया है तो दु:ख भी आयेगा। राम के कारण अयोध्या में सुख ही सुख है। और इस सुख में डूबे थे अवधवासी। और महाराज दशरथजी निर्णय करते हैं राम को राज्य देने का। गुरुदेव को मिलकर कह दिया, राम को कल राज्याभिषेक

कर दिया जाय। ये निर्णय हुआ और इस निर्णय में डूबे महाराज दशरथजी कैकेयी के भवन जाते हैं। यहां कैकेयी की मति मंथरा ने फेर दी। और कैकेयी दो वरदान मांगती है, मेरे पुत्र को राज मिलना चाहिए; राम वनवासी हो जाय। अभी सुख ही सुख था, अब दु:ख का आरंभ हो चुका है! सुबह होती है। महाराज मूर्छित है! कैकेयी के सामने राम ने कहा, 'माँ, जल्दी बताओ, मेरे से कोई अपराध हुआ है कि मेरे पिता को इतना कष्ट हो रहा है? बात क्या है?' बोले, 'बेटा, ओर कोई कारण नहीं है। तेरे पिताजी तुझे राज्य देने की घोषणा करके उत्साह में मेरे पास आये। और मैंने दो वरदान मांगे, भरत के लिए राज, तुम्हारे लिए वनवास।' भगवान राम के चेहरे पे अधिक तेज आ गया! रामजी आनंदविभोर होकर कैकेयीजी से कहते हैं, 'हे जननी, वो पुत्र तो बड़भागी है, जो माता-पिता के वचन का प्रेमी है।' रामजी जाते हैं। माँ कौशल्या से बात करते हैं। माँ तो भोली है। माँ को तो पता भी नहीं, क्या हुआ है? 'बेटा, जलदी तैयारी करो, आज तो राज्यारोहण का दिन है।' अब रामजी कौशल्या से कहते हैं, 'मेरे पिता ने राज्य तो दिया है, लेकिन वन का राज्य दिया है। कितना बड़ा राज्य दिया! जहां मेरा सब प्रकार से कल्याण हो।' मेरे भाई-बहन, जीवन में एक दिन में परिस्थिति पलट जाये तो भी पोज़िटिव अर्थ निकालना, हकारात्मक अर्थ निकालना। आख़िर इस गति होगी, परम की गति होगी। क्योंकि कुछ घटनाएं हमारे टालने से भी टलनेवाली नहीं है। इसीलिए शंकर का सूत्र याद रखना-

होइहि सोइ जो राम रचि राखा।
को करि तर्क बढ़ावै साखा।।

भगवान राम ने हकारात्मक अर्थ रखा। राम-लखन-जानकी वन की यात्रा पे निकले। नगर के बाहर आये। महाराज जाग्रत होते ही सुमंत को कहते हैं कि तुम रथ लेकर जाओ और राम को चार दिन वन में घुमाकर ले आओ। सुमंत रथ लेकर सरजू के तट पर आते हैं। पूरी अयोध्या रो रही है। सुख कितनी क्षणों में परिवर्तित हो रहा है दु:ख में! ये मानव जीवन है। ब्रह्म के जीवन में भी ये परिवर्तन इतना भयानक हो सकता है, तो हम तो जीव है। सब को भगवान ने समझाने की ये चेष्टा की। सब तमसा के तट पर सो गये हैं। राम-लखन-जानकी सुमंत से कहते हैं, अयोध्या की जनता दु:खी है, हमें रथ में बिठाकर यहां से ले चलो, लोग हमें पकड़ न पाये। तीनों रथ में बैठे। रात्रि में रथ निकल गया। भोर भई। अयोध्या की जनता ने नदी का तट रामविहीन देखा! हाहाकार हो गया!

राम गंगा के तट पर पर आये। प्रभु ने नौका की मांग की और केवट ने जीद की कि प्रभु, आप के चरण धुलवाओ फ़िर मैं ले जाउं। केवट प्रभु के चरण-प्रक्षालन कर लेता है और फ़िर भगवान को नौका में चढ़ाया। गंगा पार किया। यहां भगवान उतराई देने के लिए तैयार होते हैं। केवट रो पड़ा कि नहीं, महाराज, मैं उतराई नहीं लूंगा। कहता है महाराज, फ़िर भी आप को देना है तो आप जब लौट आओ तब मुझे दे देना। और वो भी उतराई नहीं लूंगा, प्रसाद लूंगा। गंगा के तट पर प्रभु रहे। शिवजी की पूजा की। भगवान की पदयात्रा शुरू होती है। और भगवान भरद्वाज ऋषि के आश्रम में पहुंचे। उसके बाद भरद्वाज ऋषि के आश्रम से मार्गदर्शन लेकर भगवान आगे बढ़े। एक तापस आया। बड़ा रहस्यपूर्ण प्रसंग है। उसके बाद भगवान वाल्मीकि के आश्रम में आते हैं। वाल्मीकि ने भगवान को रहने के लिए चौदह स्थान बताए। और उसके बाद भगवान राम चित्रकूट में आकर निवास करने लगे।

सुमंत अयोध्या गया और महाराज दशरथजी को ख़बर दी, तीनों में से कोई नहीं लौटा। और आप जानते हैं, महाराज दशरथजी छ: बार 'राम' शब्द बोले। पूरी अयोध्या को पता चल गया, सूर्यवंश का सूर्य अब अस्त होने की तैयारी है। महाराज दशरथजी आख़िरी क्षणों में हैं। रामविरह सहा नहीं गया। तुलसी ने लिख दिया-

राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम।
तनु परिहरि रघुबर बिरहँ राउ गयउ सुरधाम।।

साहब, मानवी एक बार राम बोले तो कल्याण हो जाय। अवधपति छ: बार बोल पाये। महाराज की चेतना

सुरधाम पहुंची। कौशल्यादि सब रो पड़े। अयोध्या शोक से भर गई। वशिष्ठजी पधारे। और दूत भरत के पास पहुंचते हैं। जब से अयोध्या में ऐसी घटनाएं शुरू हो गई, भरत को अशगुन होते थे। शंका-कुशंका होती थी। रात में गलत सपने आते थे। इतने में दूत आ गये। दूतों ने कहा, राजकुमार, जल्दी अयोध्या पधारे। भरत-शत्रुघ्न मानो ऊड़कर इतनी तीव्र गति से अयोध्या आते हैं। और सब से पहले कैकेयी के भवन में गये क्योंकि भरत जिस समय अयोध्या पहुंचे है उस समय हंमेशा राम कैकेयी के भवन में प्रणाम करने जाते हैं। पूरी अयोध्या में उदासीनता देखी! केवल मंथरा और कैकेयी को राजी देखकर शीलवान भरत को एक संदेह प्रगट होता है और माँ से पूछने लगता है। कैकेयी बुद्धिभ्रष्ट हो चुकी है। और मैं करबद्ध आप से प्रार्थना करूं कि जगत में कुछ भी करना पर जिससे बुद्धि बिगड़ जाये ऐसी नीचमति से मैत्री मत करना। तुलसीदासजी ने लिखा है। आप कल्पना तो करो, जिस कैकेयी ने भरतरूपी संत को जनम दिया ऐसी माँ की बुद्धि भी कुसंग ने बिगाड़ दी! तो मेरी और आप की क्या औकात? सावधान रहीओ कि कुसंग न हो जाय। सत्संग हो तो बहुत अच्छा; न हो तो चिंता नहीं, लेकिन कुसंग न हो जाय। भरत-शत्रुघ्न के कौशल्या के पास आये। पिता का शब पड़ा है। पूरी अयोध्या रो रही है। महाराज का संस्कार हुआ। अयोध्या की सभा मिली, अब क्या किया जाय? वशिष्ठजी धर्म के नाते समझाने लगे कि पिता जिसको राज्य दे वो वारसदार माना जाता है। आप राजा बनो। लेकिन भरत ने शील के साथ कहा, मैंने सपने में भी कभी सत्ता के बारे में सोचा नहीं। हम सब चित्रकूट जाये। भगवान जो आज्ञा दे वो शिरोधार्य करेंगे। दूसरे दिन पूरी अयोध्या चित्रकूट राम को मिलने के लिए निकलती है। भरत की यात्रा चित्रकूट पहुंचती है। राम-भरत का अद्‌भुत परम प्रेममय मिलन होता है। चित्रकूट में प्रेमनगर बस गया। जनकजी पूरी जनकपूरी को लेकर चित्रकूट आते हैं। फ़िर चित्रकूट में बड़ी-बड़ी सभाएं होती हैं। आख़िर में निश्चित हुआ, राम जो निर्णय ले वो करे। और ये निर्णय भरत स्वाभाविक कुबूल कर ले। क्योंकि भरत सेवक है। चौदह साल के लिए भरत अयोध्या रहे और राम वन रहे। चार दिन भरत चित्रकूट की यात्रा करते हैं। उसके बाद भरत विदा के लिए आये हैं। सब की आंखें भरी है। और उसी समय 'मानस' का प्रसिद्ध प्रकरण-

प्रभु करि कृपा पाँवरी दीन्हीं।
सादर भरत सीस धरि लीन्हीं।।

प्रभु ने पादुका दी। भरतजी ने श्रद्धा से सिर पर धारण की। पादुका का अद्‌भुत दर्शन है वहां। राम-सीता पादुका के रूप में आते हैं। पादुका तो कईओं के पास होती है। कई को लकड़ी की लगती है। कई को पीले रंग की दिखती है। किसीको काले रंग की। किसीको उसमें साक्षात् अपना बुद्धपुरुष दिखता है। सवाल है हमारी श्रद्धा का। भरतजी लौटे। यहां आकर सिंहासन पर पादुका को प्रस्थापित किया। श्री भरतजी ने भी नंदिग्राम में तपस्वी बनकर रहने का निर्णय किया। और तुलसीदासजी 'अयोध्याकांड' को विराम देते हैं।

'अरण्यकांड' में भगवान करीब तेरह साल चित्रकूट रहे। अब भगवान को लगा, मुझे सब जान चुके हैं। मुझे लीला करने में मुश्किल होगी इसीलिए अब स्थलान्तर करे और राम-लखन-जानकी चित्रकूट छोड़कर आगे निकले। अत्रि ऋषि के आश्रम में आये। अत्रि ने भगवान रामकी स्तुति की। गोस्वामीजी ने 'मानस' में लिखा-

नमामि भक्त वत्सलं । कृपालु शील कोमलं ।।
भजामि ते पदांबुजं । अकामिनां स्वधामदं ।।

जानकीजी ने अनसूया माँ के दर्शन किये। आशीर्वाद लिया। प्रभु वहीं से आगे बढ़े। कुंभज के मार्गदर्शन में राम-लक्ष्मण-जानकी गोदावरी नदी के तट पर पंचवटी में निवास करने लगे। एक दिन रामजी को लक्ष्मणजी ने पांच आध्यात्मिक प्रश्न पूछे। प्रभु ने उसका जवाब दिया। उसके बाद शूर्पणखा आई। लक्ष्मण ने शूर्पणखा को दंडित की। शूर्पणखा ने खर-दूषण को उकसाया। चौदह हजार राक्षसों को परमात्मा ने निर्वाण दिया। और शूर्पणखा

रावण के पास जाकर रावण को उकसाती है। रावण सोचने लगा, खर-दूषण में मेरे समान ताकत है। भगवान के सिवा उसको कोई मार नहीं सकता है। क्या भगवंत ने अवतार ले लिया है? यदि परमात्मा अवतरित हो चुके हैं, तो वैर कर उनके बाण से मरकर मैं परम पद को प्राप्त करूं। रावण ने योजना बनाई सीता के अपहरण की। मारीच को लेकर रावण आता है। यहां जानकी को अग्नि में समाने की आज्ञा दी। प्रतिबिंब छाया रखती है जानकीजी की और रावण अपहरण करता है। जटायु ने बलिदान दे दिया और इस तरह रावण जानकीजी का अपहरण करके लंका में, अशोकवाटिका में जग्य करके सीताजी को रख देता है।

मारीच को परमगति देकर भगवान लौटते हैं। ललित नरलीला करनी थी इसीलिए प्रभु आश्रम को सीताविहीन देखकर प्राकृत व्यक्ति की तरह रोने लगे। सीता की खोज करते-करते आगे बढ़े। जटायु अंतिम सांस ले रहे थे। सब कथा सुनी। जटायु को पितातुल्य आदर देकर प्रभु ने अग्नि संस्कार किया। भगवान सीता की शोध करते आगे बढ़े और शबरी के आश्रम में पधारे। शबरी ने प्रभु का स्वागत किया। ईश्वर के दरबार में जाति-पांति का भेद नहीं है। शबरी ने कहा,मैं अधम जाति हूं; हलकी जाति हूं। प्रभु ने कहा, मैं केवल भक्ति के नाते को कुबूल करता हूं। मेरे भाई-बहन, फ़िर मैं जाते-जाते भी कहकर जाउं। कोई किसीको अधम न समझे; कोई अपनी जात को अधम न माने। परमात्मा अधम-उच्च को देखता नहीं, केवल प्रेमसंबंध को देखता है। शबरी के सामने नौ प्रकार की भक्ति की चर्चा की। उसके बाद शबरी योगअग्नि में प्रभु के शरीर में चली गई। राम-लक्ष्मण पंपा सरोवर आये और वहां नारदजी की भेंट हुई। नारद ने संत-लक्षणों के बारे में पूछा। प्रभु ने चर्चा की और उसके बाद नारद ब्रह्मलोक गये। 'अरण्यकांड' पूरा हुआ।

'किष्किन्धाकांड' बहुत छोटा कांड है। भगवान आगे चलते हैं ऋष्यमूक पर्वत की ओर। हनुमानजी आते हैं और पहली बार हनुमानजी का प्रवेश 'रामचरित मानस' में होता है। हनुमंत और राम का मिलन हुआ। हनुमानजी की कृपा से राम और सुग्रीव की मैत्री हुई। हनुमानजी का आश्रय होगा तो सुग्रीव जैसे विषयी जीव होगे तो भी रघुनाथजी से मैत्री हो जायेगी। वालिवध हुआ। सुग्रीव को राज दिया। अंगद को युवराजपद दिया। प्रभु चातुर्मास करने के लिए प्रवर्षण पर्वत पर गये। यहां सुग्रीव राम का कार्य भूल गया, क्योंकि सब कुछ मिल गया! भगवान की खोज के लिए अभियान चलाने प्रस्तुत बंदर-भालुओं को बिलग-बिलग दिशाओं में सीता की शोध के लिए भेज दिये। जामवंत और अंगद की टुकडी में हनुमानजी है। उसको दक्षिण दिशा में जाने का आदेश मिला। सब प्रभु को प्रणाम करके सीताशोध के लिए निकलते हैं।

सबसे अंत में हनुमानजी ने प्रणाम किया। प्रभु ने सोचा, कार्य हनुमंत से होगा; निकट बुलाया। मुद्रिका दी। दक्षिण की यात्रा शुरू हुई। स्वयंप्रभा मिली है। सब समुद्र के तट पर आ गए। वहां संपाति मिला। निर्णय हुआ कि जानकीजी अशोकवाटिका में है। सबने अपनी-अपनी शक्ति की घोषणा की। हनुमानजी कुछ नहीं बोले तब जामवंत बोले कि हे हनुमान, आप चूप क्यों है? आपका अवतार राम के लिए है। सुनते ही हनुमानजी पर्वत आकार हो गए! 'जामवंतजी, सलाह दो, लंका जाके क्या करके आऊं?' ओर कुछ नहीं करना, माँ को संदेश देना। माँ का संदेश लाना। फिर आप खबर करेंगे और राम सेना लेकर लंका जायेंगे और रावण को निर्वाण देंगे। 'किष्किन्धाकांड' पूरा हो जाता है और 'सुन्दरकांड' शुरू होता है। हनुमानजी महाराज जाने की तैयारी। 'सुन्दरकांड' का आरंभ -

जामवंत के बचन सुहाए।
सुनि हनुमंत हृदय अति भाए।।
तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई।
सहि दुख कंद मूल फल खाई।।

श्री हनुमानजी महाराज जामवंत का आदेश-मार्गदर्शन लेके तैयार होते हैं। हनुमानजी लंका में प्रवेश करते हैं। रास्ते में मुश्किलियां बहुत आयी, लेकिन पार करते हुए

हनुमानजी आखिर लंका में विभीषण से मिलते हैं। विभीषणजी को सीता के दर्शन की युक्ति बताते हैं। माँ और बेटे का मिलन हुआ। हनुमानजी को बांधकर इन्द्रजित लंका की राज्यसभा में ले आया। आखिर में हनुमानजी की पूंछ जलाने का निर्णय हुआ। हनुमानजी ने पूरी लंका जलाई। माँ से चूडामणि लेकर हनुमानजी वापस लौटे।

'लंकाकांड' के आरंभ में प्रभु का प्रयाण। सेतुबंध हुआ। भगवान रामेश्वर महादेव की स्थापना हुई। सुबेल पर डेरा। दूसरे दिन अंगद को राजदूत के रूप में भेजा गया। मंत्रणा विफल हुई। युद्ध अनिवार्य हुआ। आखिर इकत्तीसवें बाण से रावण का निर्वाण। विभीषण को राजतिलक हुआ। ठाकुर और माँ जानकी का मिलन हुआ। हनुमानजी को अयोध्या खबर देने के लिए भेजा गया। पुष्पक विमान में बैठकर प्रभु ऋषि-मुनिओं को मिलते हुए गंगा के तट पर उतरे। केवट, निषाद, दीन-हीन समाज को मिले। गुह को साथ लिया।

'उत्तरकांड' का आरंभ होता है। पुष्पक विमान सरजू के पटांगण में उतरता है। भगवान ने अमित रूप धारण किया। भगवान राम ने सोचा, मेरी माँ कैकेयी लज्जित है। पहले उसके घर गये। मेरे भाई-बहन, राम आये तो पहले कैकेयी के घर गये। नव दिन से कथा सुन रहे हो ना, कथा सुनने के बाद जिसके साथ अनबन हो, जिसके साथ आप बोलते न हो, उसके पास जाके पहले प्रणाम कर लेना। तभी जगत में रामराज्य आयेगा। सबको प्यार और महोब्बत से जीने का यहां तुलसी ने सिखाया। भगवान राम निज भवन आए। भगवान राम ने अपने तीनों भाईयों को स्नान करवाया। खुद ने अपने हाथ से स्नान किया। वशिष्ठजी ने ब्राह्मण देवताओं को पूछा, आज ही राजतिलक कर दें? बोले, हां महाराज, अब कल का भरोसा मत करो। क्योंकि कल का भरोसा करने गए तो चौदह साल तक राजगादी को धक्का लग गया! राम के लिए दिव्यसिंहासन लाया गया। भगवान राम ने पृथ्वी को प्रणाम किया। दिशाओं को प्रणाम किया। सूर्य भगवान को प्रणाम किया। माताओं को प्रणाम किया। जनता को प्रणाम किया। गुरु आदि सब मुनिवरों को प्रणाम किया। और राम गादी पर सीता संग बैठे सबसे पहले जगत को रामराज्य देते हुए। वशिष्ठजी ने राम के भाल से रामराज्य का तिलक किया। तुलसी ने लिखा -

प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा।
पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा।।

पहला तिलक भगवान वशिष्ठजी ने राम के भाल में किया और त्रिभुवन में जयजयकार हुआ। राम ने अपने साथ आये मित्रों को निवास दिया। धीरे-धीरे मित्रों को प्रभु ने बिदा दे दी। एक हनुमानजी रहे। अद्‌भुत रामराज्य का वर्णन तुलसीदासजी ने किया है। भगवान की नरलीला है ये। और समयमर्यादा पूरी होते ही जानकी ने दो पुत्रों को जनम दिया। वेद-पुराण जिनकी चर्चा करते हैं ऐसे लव-कुश का जनम हुआ। तुलसीदासजी ने अपने 'रामचरित मानस' में सीता का दूसरी बार का त्याग नहीं लिखा है, क्योंकि उसमें विवाद है। तुलसीजी चाहते हैं कि मेरी कथा संवाद की हो। रघुकुल के वारिसों का नाम देकर कथा वहां रोक दी। उसके बाद रामकथा में जो प्रसंग है वो बाबा कागभुशुंडि की कथा है। और आखिर में गरुडजी ने कागभुशुंडिजी से सात प्रश्न पूछे। आध्यात्मिक प्रश्नों के उत्तर सद्‌गुरु भुशुंडिजी ने दिये। भुशुंडिजी ने कथा को विराम दिया। यहां याज्ञवल्क्य महाराज ने भरद्वाजजी के सामने कथा को विराम दिया कि नहीं ये स्पष्ट नहीं। कैलास के उत्तुंग शिखर पर भगवान ने पार्वती के सामने कथा को विराम दिया। उसके बाद अपने मन को कथा सुनाते बाबा गोस्वामीजी कथाविराम देते हुए कहते हैं, इस कलियुग में ओर कोई साधन नहीं। गोस्वामीजी ने लिखा, तीन काम करो, राम का सुमिरन करो; राम को गाओ; और जहां राम को गाया जाता हो वहां राम को सुनो। ये तीन काम हम कर सकते हैं। राम का सुमिरन, राम का श्रवण और राम का गायन।

बाप, शिवजी ने कैलास के शिखर पर ज्ञानपीठ पर पार्वती के सामने विराम दिया। बाबाभुशुंडिजी ने

नीलगिरि पर्वत पर, उपासना की या तो भक्ति की पीठ पर बैठकर गरुड के सामने कथा को विराम दिया। याज्ञवल्क्य महाराज ने कर्म के घाट पर बैठकर भरद्वाजजी के सामने कथा को विराम दिया। और गोस्वामीजी ने शरणागति के घाट पर बैठकर अपने मन को और संतसभा को कथा सुनाते हुए विराम दिया। इन चारों आचार्यों की आशीर्वादक छाया में बैठकर माँ जानकी की भूमि में, भरौल के इस मिथिलाधाम में, इस पावन प्रदेश में मेरी व्यासपीठ नौ दिन के लिए मुखर हुई थी। आज मेरी व्यासपीठ भी शब्दों को विराम देने की ओर जा रही है तब कुछ आखरी बातें इस कथा के लिए सुन लीजिए।

बाप, सबसे पहली बात तो मैं ये कहूं कि समग्र आयोजन जो हुआ यहां बहुत कम दिनों में। मैंने तो ऐसे ही कथा दे दी, लेकिन खास करके बिपिनभाई और उनका परिवार और आप सब जुड़ गये। पूरी जनशक्ति, हर विभाग यहां जुड़ गये। इतने यज्ञकर्म आपने किये इसके लिए मैं दिल से मेरी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं कि आपने बहुत अच्छे सुचारु रूप से आयोजन किया। जाते समय मैं आपसे क्या कहूं? तुलसी ने तो तीन सूत्र दिये। राम को स्मरो। राम को गाओ। राम को सुनो। तीनों करना है। लेकिन ये कलियुग है। तुलसी चारसौ-पांचसौ साल पहले ये कह गये। मोरारिबापू इतना कहना चाहता है, शायद तुम सुन न पाओ; सुनना चाहिए, तो भी न अवसर मिला तो गीला मत करना। लेकिन मैं इतनी ही रिक्वेस्ट करूं, केवल राम को स्मरोगे; आपको खेती करते-करते, अपना काम करते-करते जब कोई काम बाकी नहीं रहा, आप पांच मिनट बैठके भी शांति से राम सुमिरन करोगे तो भी परमविश्राम को पा लोगे। केवल एकमात्र हरिनाम। राम का सुमिरन करते रहो। प्रभु का सुमिरन; जो तुमको नाम प्रिय हो। धन्यता प्राप्त होगी।

मेरे युवान भाई-बहन, कल ही एक युवान मुझे पूछ रहा था, 'हम युवानों को जाते-जाते आप क्या कहना चाहते हैं?' तो मैंने कहा, देश का युवान बलवान होना चाहिए। लेकिन युवान बुद्धिमान न हो तो बल का गलत उपयोग करेगा। तोड़-फोड़ करेगा युवान। दूसरा सूत्र याद रखना मेरे युवान भाई-बहन, बलवान होना और साथ-साथ बुद्धिमान होना। क्योंकि बुद्धि हमें बचाएगी। लेकिन बुद्धि बांध देती है। इसलिए तीसरा सूत्र है, विद्यावान होना। तो मेरे भाई-बहन, न मेरे पास कोई उपदेश है; न मैं कोई आदेश देनेवाला हूं। मैं तो आपके साथ सरल बोली में बात करनेवाला आदमी हूं। नव दिनों से आपके साथ संवाद कर रहा था 'मानस-धनुषजग्य' को केन्द्र में रखते हुए। इनमें से कोई बात आपके दिल तक पहुंच गई हो तो उसको पकड़ रखिएगा। मेरी पोथी आज बांध दूंगा। आप जीवन की पोथी को खोल दीजिएगा। और जीवन का कोई कांड, जीवन का कोई विभाग यदि ठीक नहीं है तो रामकथा के सूत्रों को याद करके जीवन के प्रत्येक कांड को 'सुंदरकांड' बनाने का शिवसंकल्प करना। तो मेरे भाई-बहन, फिर एक बार मैं मेरी प्रसन्नता व्यक्त कर रहा हूं। इस मिथिला धाम की श्रद्धा को मैं नमन करके बिदा ले रहा हूं। मैं तो बिहार आता रहूंगा जब-जब परमात्मा कृपा करे, माँ जानकी बुलायेगी। आपको भी निमंत्रण देता जाता हूं। मैं आया हूं तो मेरा गांव भी छोटा ही है। आप भी कभी मौका मिले तो आईयेगा। क्योंकि हमारा रिश्ता अब राम का रिश्ता है। तो बाप, मैं जाते-जाते हंमेशा चार पंक्ति बशीर बद्र की बोलता हूं -

सितारों को आंखों में महफूज रखना।
बहुत दूर तक रात ही रात होगी।
मुसाफिर है हम भी मुसाफिर हो तुम भी,
किसी मोड पर फिर मुलाकात होगी।

और हमारी मुलाकात तो चित्रकूट के घाट पर होगी यानी 'रामायण' के घाट पर होती रहेगी। खुश रहो, खुश रहो, खुश रहो। और बाप, नव दिन की रामकथा का एक फल इकठ्ठा होता है, सुक्रित इकठ्ठा होता है। ये नव दिवसीय रामकथा का फल में इस मिथिला धाम में, इस माँ जानकी की भूमि पर बिहार की समग्र जनता को समर्पित करता हूं। ये रामकथा आप सबको समर्पित हो।

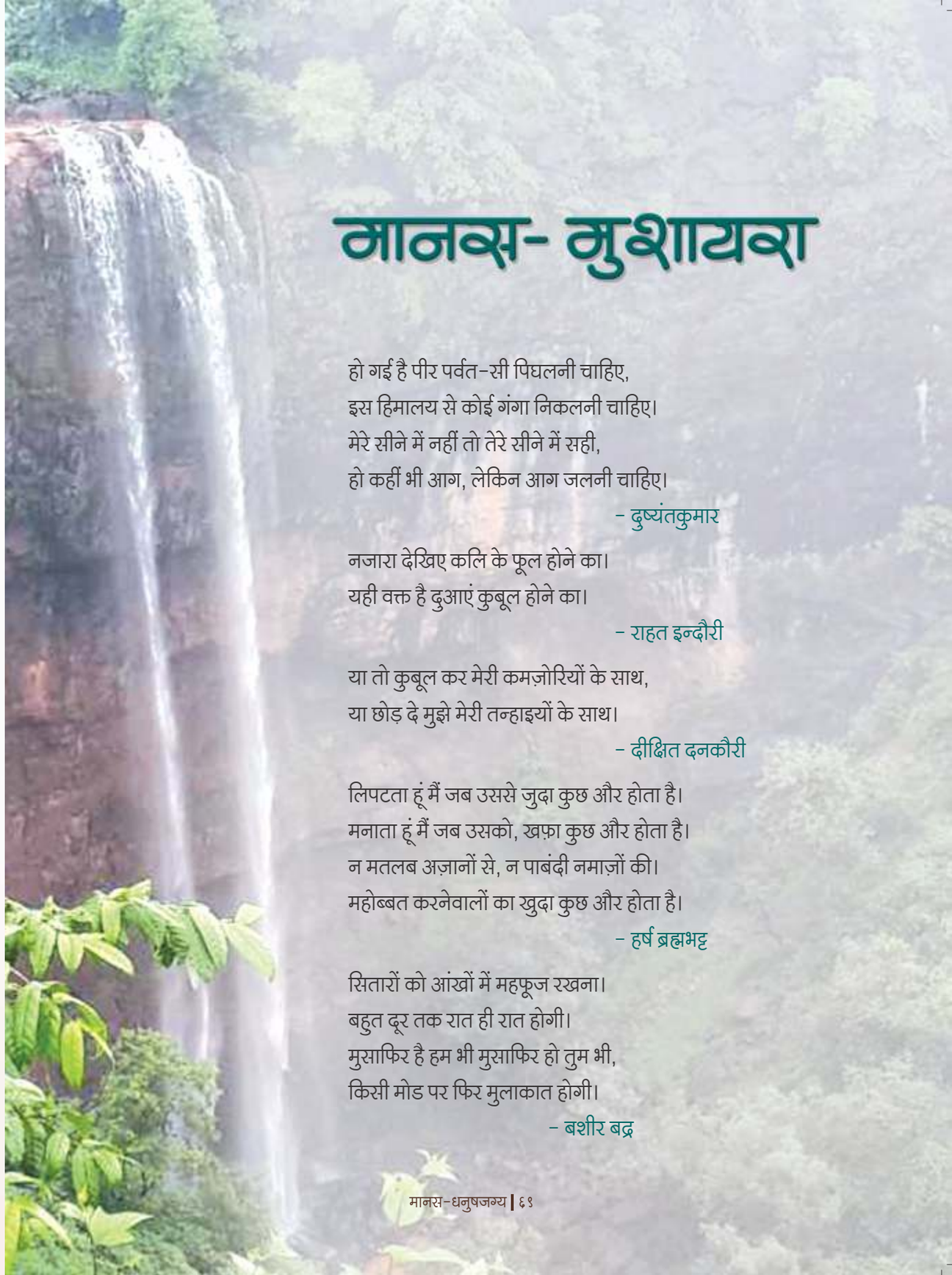

मानस- मुशायरा

हो गई है पीर पर्वत-सी पिघलनी चाहिए,
इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए।
मेरे सीने में नहीं तो तेरे सीने में सही,
हो कहीं भी आग, लेकिन आग जलनी चाहिए।

– दुष्यंतकुमार

नजारा देखिए कलि के फूल होने का।
यही वक्त है दुआएं कुबूल होने का।

– राहत इन्दौरी

या तो कुबूल कर मेरी कमज़ोरियों के साथ,
या छोड़ दे मुझे मेरी तन्हाइयों के साथ।

– दीक्षित दनकौरी

लिपटता हूं मैं जब उससे जुदा कुछ और होता है।
मनाता हूं मैं जब उसको, खफ़ा कुछ और होता है।
न मतलब अज़ानों से, न पाबंदी नमाज़ों की।
महोब्बत करनेवालों का खुदा कुछ और होता है।

– हर्ष ब्रह्मभट्ट

सितारों को आंखों में महफूज रखना।
बहुत दूर तक रात ही रात होगी।
मुसाफिर है हम भी मुसाफिर हो तुम भी,
किसी मोड पर फिर मुलाकात होगी।

– बशीर बद्र

मन, कर्म, वचन के त्रिकूट का नाम भजन है

संतवाणी एवोर्ड समारोह में मोरारिबापू का उद्‌बोधन

कार्तिक शुक्ला द्वितीया को प्रति वर्ष संतवाणी एवोर्ड, संतवाणी प्रस्तुति तथा भजन पर अलग-अलग विषय पसंद कर अधिकृत वक्ता यहां आकर हमें मार्गदर्शन दे ऐसा जो प्रारंभ हुआ है, उसका यह आठवां मुकाम है। ऐसे मंगल प्रसंग पर आप सब का हार्दिक स्वागत करता हूं। दोपहर के तीन से छः बजे तक तीन वक्ताओं ने भजन विषयक अपना अभ्यास और अपने विचार प्रगट कर हमें प्रसन्नता दी, जिसका संयोजन आदरणीय निरंजनभाई ने किया, आदरणीय संजु वाला ने सत्रहवीं सदी के भजन विषयक अपने विचार बहुत ही विधिवत् कहे। दादा मेकरन की पावन परंपरा में आते महंतबापू, जिन्हें प्रथमबार सुने। एक विषय लेकर एक बावलिया बिन्दास बल्लेबाजी करता है इसकी प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। भाई भरत की खानदानी में तो संगीत और साधना उतरी हुई है। उन्होंने रामग्री प्रकार विषयक शास्त्रीय, ऐतिहासिक स्वरूप देकर काफी जानकारी दी। उनके लिए भी अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता हूँ।

फिलहाल संतवाणी एवोर्ड दिए जाते हैं। 'एवोर्ड' शब्द तो आज की परिभाषा का है। संतवाणी को किसी एवोर्ड की आवश्यक्ता नहीं है। संतवाणी की कोई हूंडी स्वीकारे ऐसे दाता की भी जरूरत नहीं है। संतवाणीवालें की हूंडी तो मेरा शामळिया स्वीकार करता है। वो भी नरसिंह महेता अकिंचन था, आर्थिक संकट में था, इस हेतु नहीं पर द्वारिकाधीश लज्जित न हो। लक्ष्मीजी कहे, अपना मुंह मत दिखाना, इस डर से हूंडी स्वीकारने आया था। संतवाणी एवोर्ड में जो वंदना की। 'रण की रोटी' शब्द पसंद आया। 'रण की रोटी' देनेवाला दादा मेकरण, हम सबने उनकी वंदना की है। उनके स्थान में से पधारे पूजनीय बापू ने हमारी वंदना का स्वीकार किया है इसकी मुझे प्रसन्नता है। मैं शाम को मंजीरा बजाते बरसों से देख रहा हूं। चालीस बरसों से बजा रहा है। अभी भी वैसा का वैसा लग रहा है! जब वह बजाता है तब पता चलता है, उसके लटके में कोई फर्क नहीं पडा है! ऐसा शाम आज हनुमानजी के चरण में सन्मानित होता है तब प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। शाम दुगुनी प्रगति करे ऐसी शुभकामना व्यक्त करता हूं। अपने में मस्त होकर हंसते-हंसते बजाता है। उनके मंजीरा को मैं अपने शब्दों का मंजीरा अर्पण करता हूं।

राज्यगुरुसाहब एक वाद्य लेकर इतना बडा काम कर सके और शिक्षण भी दे सके! ऐसे एक समर्थ बेन्जोवादक, उनकी भी हम वंदना कर सके इसका बहुत आनंद है। मुझे कान में कह गए, एवोर्ड लौटाने का मौसम चल रहा है पर में लौटाऊंगा नहीं! बापू, बहुत धन्यवाद। समर्थ तबलावादक जिन्हे नारायणबापू के साथ वर्षों से बजाते देखा है। सुगम संगीत में बजाते देखा है। ऐसे समर्थ तबलावादक धीरुभाई जो महुवा के दामाद है और दामाद के तो चरण छूने ही चाहिए। उनके तबले की थाप को वंदन करता हुं।

यह करसन, उसके उच्चार उसके जिन्स के हैं। उसने शब्द सुधार नहीं किया है। बम्बई का है। कितनों के साथ संगत कर चुका है! गाते समय उनके खेल हम सबने देखे हैं। आवाज़ ऐसी ही है। तबीयत अच्छी हुई है। मैं आपको सुनते- सुनते वंदन कर रहा हूं इसका मुझे आनंद है। करसनभाई के लिए तालियां। उन्होंने एवोर्ड कुबूल किया पर पैसे लौटा दिए। मैं लूं तो आप दे न? मैंने दिया वो आपने ले लिया, यह मैं वापिस नहीं लूंगा। आप को जैसे भी इस्तेमाल करना हो करना।

बस, मेरी प्रसन्नता पूरी हुई। सबसे ज्यादा प्रसन्नता है कि आज के दिन, यह तिथि, एक वर्ष याद रखकर मेरे प्रेमादर के कारण विद्याधर यहां आते हैं इसका मुझे बहुत आनंद है। यह आपका बडप्पन है साहब! आपसे बहुत सीखने को मिलता है। आप यहां आकर हमें विशेष प्रसन्न करते हैं। आप बदले में कुछ नहीं चाहते पर मेरा हनुमान सवा गुना करके आपको दे ऐसी मेरी हनुमानजी के चरणों में प्रार्थना है।

भजन को लेकर तीन से छः तक चर्चा हुई। प्रतिवर्ष यह विचारगोष्ठि होती है। भजन के विविध पहलूओं को स्पर्श कर सभी विद्वान यहां सुंदर बोलकर हमें आनंद देते हैं। पर यह भजन है क्या? गाया जाय, लिखा जाय, कहा जाय, जीवन है, देख सके, खुली और बन्द आंखों से, अनेक विधा में प्रवेश करता और परमतत्त्व के साथ बैठता यह तत्त्व क्या है? हमारे समर्थ भजनिकों ने अनुभव में से वाणी का उच्चार कर, गाकर, सुनाकर हमारे भीतर को ज्यादा पवित्र कर रहे हैं। किसी भी वस्तु को समझने की युक्ति होती है। वह युक्ति पकड में आनी चाहिए। एक चाबी होती है। यहां 'जुगति' शब्द का प्रयोग हुआ। यह 'रामचरित मानस'का शब्द है। हनुमानजी ने विभीषण से पूछा, 'जानकी कहां है?' जानकी माने जीवंत भजन। क्या बतायेगा कि सीता कहां है? तुलसी ने शब्दब्रह्म का प्रयोग किया है-

जुगुति विभीषन सकल सुनाई।
चलेउ पवनसुत बिदा कराई।।

ग्यारहवें रुद्र जैसे हनुमानजी को भजन की जुगति एक राक्षस बताता है! यह किसीकी बपौती नहीं है कि भजन

की जुगति हम ही बताए। वहां वर्ण, जाति, देश, काल जैसा कोई भेद नहीं है। अत: हनुमानजी पूछे और विभीषण बताए। हनुमानजी स्वीकार करे और फिर सीतातत्त्व तक पहुंचे। तो भजन क्या है? गुरुकृपा से जितना जाना हो, तलगाजरडी आंखों से जितना देखा हो और हनुमानजी की कृपा से जीने का प्रामाणिक प्रयास किया हो इसके आधार पर मैं इतना ही कहूंगा कि हमारे यहां तीन शब्द प्रयोग है 'मनसा, वाचा, कर्मणा।' भजन क्षेत्र में कौन खेल सके? एक वस्तु समझ ले, भजन के क्षेत्र में अभयपद तो आखिर मैं है। पहले तो डरना ही होता है। अभय लेकर प्रथम पायदान नहीं चढ सकते। पहली पायदान तो थरथराहट ला दे। कंपन ला दे। डरा दे। हृदय थरथर हो उठे। इस मार्ग में पैर रखूं या न रखूं? अनेकबार विचलित कर दे।

ऐसा कोई लम्हा नहीं कि उनका खयाल न आता हो।
आंख नम न हुई हो और दिल तडप जाता न हो।

प्रथमबार मुश्किल लगे।

ए मोहब्बत ऐसा कदम कहीं देखा नहीं,
कि तेरी राह में उठे और ठहराता न हो।

वो भक्ति, भजन और मोहब्बत।

ऐसा एक भी कदम मैंने जिन्दगी में नहीं देखा,
कि पहलीबार तेरी ओर उठे और वो कांपा न हो।

भजन की शुरूआत तो हिला दे। आखिर में अभयपद मिले। निर्भयपद, अभयपद। कितनी बाधाओं के बाद मिलता हो।

नया हादसा मेरी प्यास के साथ हुआ कि आश,
ऐसे बादलों से रखी कि जिसको बरसना आता न हो।

यह दुर्घटना मेरे साथ ऐसी हुई कि जो बादल बरसना ही नहीं जानते, उनसे आशा रखी! यह ऐसा मार्ग है। वहाँ पहलीबार तो कदम थरथराते ही है। बापू, मन-वचन-कर्म के त्रिकूट का नाम भजन है। भजन त्रिवेणी तीर्थ है।

हम ऐसा क्या करे कि भजन शुरू हो जाय? ऐसा मन कैसा होता है? मुझे जो थोड़ा समय में आया है वह है, बगैर विकल्प के मन का संकल्प भजन का आरंभ है। अनेक विकल्प रखनेवाला भजनमार्ग का पथिक हो ही नहीं सकता। प्रथम तो डर लगे, विकल्प शुरू हो जाय कि ऐसा न करे। कुछ लोग ताने भी मारे! ऐसा कहे, भजन ठीक से गाइए! मंजीरा बजाइए! ये सब अच्छी भाषा की गालियां है! ये सब प्रहार करते तत्त्व ये हमारे भजन के संकल्प में विकल्प पैदा करते हैं, ऐसा न करके ऐसा किया होता तो अच्छा था!

जिस व्यक्ति का मन विकल्पमुक्त संकल्प का मार्ग ग्रहण करेंगे वे भजन में प्रवेश कर सकते हैं। भजन का मध्यभाग माने वचन में विश्वास। भजन प्रदेश का सम्राट गुरु होता है। गुरु के वचन में विश्वास होना चाहिए। शहेनशाह तत्त्व गुरुतत्त्व है। वचन में विश्वास भजन का मध्यभाग है। सद्गुरु के वचन में संपूर्ण विश्वास जगे तब समझना कि हमने 'मधोमध निरख्या मुरारि।' सवाबापू कहते हैं, जिन्होंने सद्गुरु वचन या संतवाणी को कलम और जीवन समर्पित किया; जैसे मेकरणदादा पहुंचे थे। जिसे इनकी वाणी पर विश्वास न हो वे इस मार्ग में न आए।

मैं कहीं भी जाऊँ, मुझे अपनी बैठने की जगह की खबर होनी चाहिए। मैं गलत जगह बैठा हूं ऐसा नहीं हुआ है। मैं पहले देख लेता हूं, कहीं ऐसी जगह नहीं बैठा हूं कि कोई आकर खडा कर दे। बापू, भजन का भी ऐसा ही है। बुद्धपुरुष के वचन के विश्वास से यह शक्ति मिलती है। यह दूसरी युक्ति है। ओशो कहते थे, अमेरिका की एक बहुत बडी फेक्टरी, उसमें एक बहुत बडा यंत्र बिगड गया। पांच हजार कर्मचारी काम करते थे। मुख्य एन्जिन बंद रहने पर पूरा यंत्रालय बन्द रहे। इतने लोग बेरोजगार हो जाय। महीना, दो महीना हो गया। दुनियाभर के

निष्णात आ गए। मशीन चालू करने की कोई युक्ति सूझती नहीं है। आखिर में जापान से एक आदमी आया। मशीन देखकर छोटी-सी हथौडी मागी। आधी मिनट में एक विशाल यंत्र में एक ऐसी जगह हथौडी का स्पर्श करवाया कि मशीन चालू हो गई! चार्ज? पच्चीस हजार डोलर। किसीने कहा, ऐसा तो हम भी कर सकते थे। उसने कहा, 'अभी तक क्यों नहीं किया? क्योंकि आप को इसकी सूझ नहीं थी। आपने अनेक प्रयास किए।' भजन की सूझ भी सद्गुरु की हथौडी के स्पर्श से आ जाती है। मैं इस कल को मारग कहता हूं। यह मंजीरा भी हरि का मारग है। बजाते-बजाते मन शून्य हो जाय। बेन्जो या वायोलीन कोई भी वाद्य हो, आपकी विद्या को वंदन करता हूं कि भजन के साथ में उपयोग होता है। नहीं तो कितने ही अन्य क्षेत्र है, जहां जूते पहनकर नाचते हैं और साथ में बजाते भी है! सार्थक वह दिन होता है जब आप किसी संतवाणी गायक के साथ संगत करते हैं। यह बेन्जो कोई दूसरा मार्ग नहीं बताता। स्वर्ग में शहनाई है। वहां बेन्जो को छोडकर दूसरे वाद्य भी है। आप कथा में यह वाद्य बजायेंगे तो ही पहुंचेगा, साहब! अन्यथा कई दूसरे मार्ग है, साहब! अपनी कोई भी विद्या प्रभु का मारग बन सकती है। राजगुरुभाई, आपकी साधना को मेरा नमन है। आप भी मध्य में पहुंचे हैं। तबला और संतवाणी के सर्जकों ने कितने रूपक दिए? तबला, दोकल! जिसकी कल यों ही घूमे वह दोकल है। यह दो कल का मारग हमें वही पहुचाता है। हमें पुन: पुन: वहीं पहुंचना है। एकतार और मंजीरा को भी थोड़ा घूम लेने दीजिए। पुन: वहीं जाना है। मूल तो वही है।

भजन का मध्यभाग गुरु वचन पर रखा विश्वास कार मारग है। यह महंतबापू बोले, मुझे नया लगा। उन्होंने कहा कि जितनी अगम वाणी है वो सभी नकारात्मक है। हकादान कहे कि 'बापू, मैंने माताजी की स्तुति लिखी कि माई, तेरी शरण में कुष्ठ रोगी आए, रोगी आए, दु:खी आए, विकलांग आए, बीमार आए, दरिद्र आए। एक दिन माताजी ने मुझे सपने से जगाया कि हका, मैंने तेरा क्या बिगाडा है? किसी अच्छे आदमी को मेरी शरण में लाओ। हमारे पास सकारात्मक चिंतन ही नहीं है! सब नकारात्मक है! आचार्यों ने नकारात्मक चर्चा की है। सद्गुरुओं ने नहीं की है। आचार्य से ऊंचा सद्गुरु है। उपनिषद भी सद्गुरु को बांध नहीं पाया है। 'मातृदेवो भव', 'पितृदेवो भव', 'आचार्य देवो भव' वहीं अटक गए। 'अतिथि देवो भव' कहकर पूरा कर डाला। उसे पता है, आचार्य और गुरु एक नहीं है। साहब, गुरु तो कोई अलग ही देश है।

तुलसीदासजी ने पूरा मायावाद शंकराचार्यजी से लिया है। शंकराचार्य आचार्य है, तुलसी संत है। आचार्य में नकरात्मकता है। यह माया है; यह जूठ है; प्रपंच है; करने जैसा नहीं है! तुलसीदास संत है इसीलिए भजन करने को कहते हैं। न करने जैसा स्वयं ही निकल जाएगा। जबरदस्ती मत कीजिए। भजन का अंतिम पडाव कर्मणा है। उसमें नकारात्मक चिंता नहीं होनी चाहिए। मेकरणदादा ने सकारात्मक बातें की है। रेल्वे स्टेशन पूछिए तो कहे, टिकट नहीं है! प्रोग्राम लेने आए तो कहे, तारीख नहीं है! मेरे पास कथा लेने आए तो कहे, तारीख नहीं है! तारीखें तो होती है पर स्वभावत: उसकी कसौटी करते हैं या हम व्यस्त होते हैं। नकारात्मक वृत्ति निकल जानी चाहिए। अपना कर्म सकारात्मक विचार है। तभी भजन का एक पिंड बंधता है। फिर कोई आकार बनता है कि जिस आकार में हरि को भी एकाकार होने की इच्छा हो जाती है। भजन ऐसा है।

संस्कृत की 'भज्' धातु से भजन बना है। भजन का स्पष्ट अर्थ है, जो सेवा करता है, वही भजन करता है। मेकरणदादा ने सेवा की। सभी भजनिक ने सेवा की है। प्रथम 'भ'कार ही सेवा प्रेरित है। फिर 'ज' अखंड स्मरण का प्रतीक है। 'न'का अर्थ, भजनानंदी के जीवन में

नकारात्मक्ता नहीं होती। मंजीरा, तबला, बेन्जो बजाते हो, कथा करते हो इसके सामने विरोधी तत्त्व खड़े होंगे। पर इसकी ओर ध्यान नहीं देना चाहिए। राह छोड़नी नहीं चाहिए। थकना नहीं है।

गांव में किसान बीज बोने गया। एक आदमी ने पूछा, क्या बोते हो? कहा, 'नहीं बताऊंगा!' तो उसने कहा, 'कोई बात नहीं। थोड़े दिनों के बाद बारिश होगी, अंकुर फूटेंगे तो पता चल जाएगा कि तूने क्या बोया है?' तो उसने कहा, 'मुझे कुछ बोना ही नहीं है!' लोग तो ऐसे मुद्दे खडे करेंगे! पर बीजाई बन्द न की जाय, मौसम चुक न जाय! खेत के मालिक को पता नहीं चलता पर खेत के किनारे खडे हुए साक्षियों को ही पता है कि तत्त्व क्या है?

मैं कहूं कि हनुमानजी लंका में गए तब लंकावालों की ओर से कोई विघ्न आए हीं नहीं। एक लंकिनी ड्यूटी पर थी। यह विघ्न नहीं है। हम एयरपोर्ट पर उतरे और कस्टम चेकिंग हो, वो हमारा विरोधी नहीं है। वह उसकी ड्यूटी है। जो विघ्न आए वो रावण ने लंका में से ही नहीं भेजे, आकाश के देवताओं ने भेजे हैं। भजन में केवल दुराचारी ही विघ्न नहीं भेजते। कभी-कभी तथाकथित सुरी तत्त्व भी भेजते हैं। ऐसे विघ्नों के वक्त साधक को आगे बढ़ना चाहिए। भजन गाना और लिखना जारी रखना चाहिए। यदि नहीं आता तो भजन सुनते रहिए। 'भजन'का नकद परिणाम आना चाहिए। योग का परिणाम बाद में आता है। आए या न आए कितने ही योगी भ्रष्ट होते हैं! भजन तो उसी पल आनंद है, सिर डोलता रहे, भीतर झूम जाए। यहां संतवाणी के उपासक अपने प्रोग्राम एडजस्ट करके आते हैं। मैं बहुत खुश हूं। आनंद मिलता है। मैं मंजीरा, झांझ थोड़ा-थोड़ा जानता हूँ। साधुपुत्र को ढोलक तो आता ही है। चाय-शक्कर के डिब्बे से चाय बने इससे पहले एकाद ताल तो बज ही जाता है! विद्या के उपासकों को ये हाथ प्रणाम करे यही उसकी सार्थकता है।

वाणीगुणानुकथनं श्रवणोकथायां...

शुकदेवजी कहते हैं, जिसकी वाणी गुणकथनमें प्रयुक्त हो, जिनके कान हरिगुण सुनने में काम आए, जिनके हाथ ऐसे मंगलकार्य में उपकरण बने। हमारा जीवन धन्य है। मैं बहुत प्रसन्न हूँ।

बस, हमें चलते-चलते एक जगह पर पहुंचना है। मिले फिर बिछड जायेंगे। प्रारब्ध चलेगा वहां तक मिलते रहेगे। पर कोई ऐसी जगह है जहां पुनः हम इकठ्ठे होंगे। ऐसी यह यात्रा है। मार्गी का मार्ग है। नाथाभाई गोहिलसाहब, अभी मार्गी परंपरा का कार्य कर रहे हैं। मैं प्रसन्न हुआ। इस मार्गी की महिमा यह है कि यह वाममार्गी, दहीनमार्गी नहीं है। किसीको ओवरटेइक करके बढनेवाला मार्गी नहीं है। मौत आए तो भी कोई पीछे चलनेवाला नहीं है। किसी पर टूट पडनेवाला नहीं है। भूमि में से निकला कांटा भी नहीं। यह कूटस्थ-तटस्थ मार्ग के मार्गी की यह परंपरा है। हम सब ऐसे मार्गी बने। बुद्ध का तो मध्यम मार्ग है। पर मैं तो इसे मध्यम मार्ग भी नहीं कहता। नाम है वहां तकलीफ है। कृष्णमूर्ति के शब्दों में कहूं तो 'पाथलेस पाथ' है। मार्गमुक्त मार्ग। इसी का नाम भजन है। अन्य साधना सांप्रदायिक होती है पर भजन सदैव बिनसांप्रदायिक है। ऐसे माहौल में हम बैठे हैं। पुनः स्वागत कर सब को नमन करता हूं। आते रहिए, यह साधु एकदम फ्री है।

भले फाटी पडे पृथ्वी, बीवे नहीं ते बावो।
समाधि लई ले जाते, होठ सीवे नहीं ते बावो।

-जगदीश त्रिवेदी

(संतवाणी अवोर्ड अर्पण समारोह में तलगाजरडा (गुजरात) में प्रस्तुत वक्तव्य : दिनांक २७-११-२०१५)

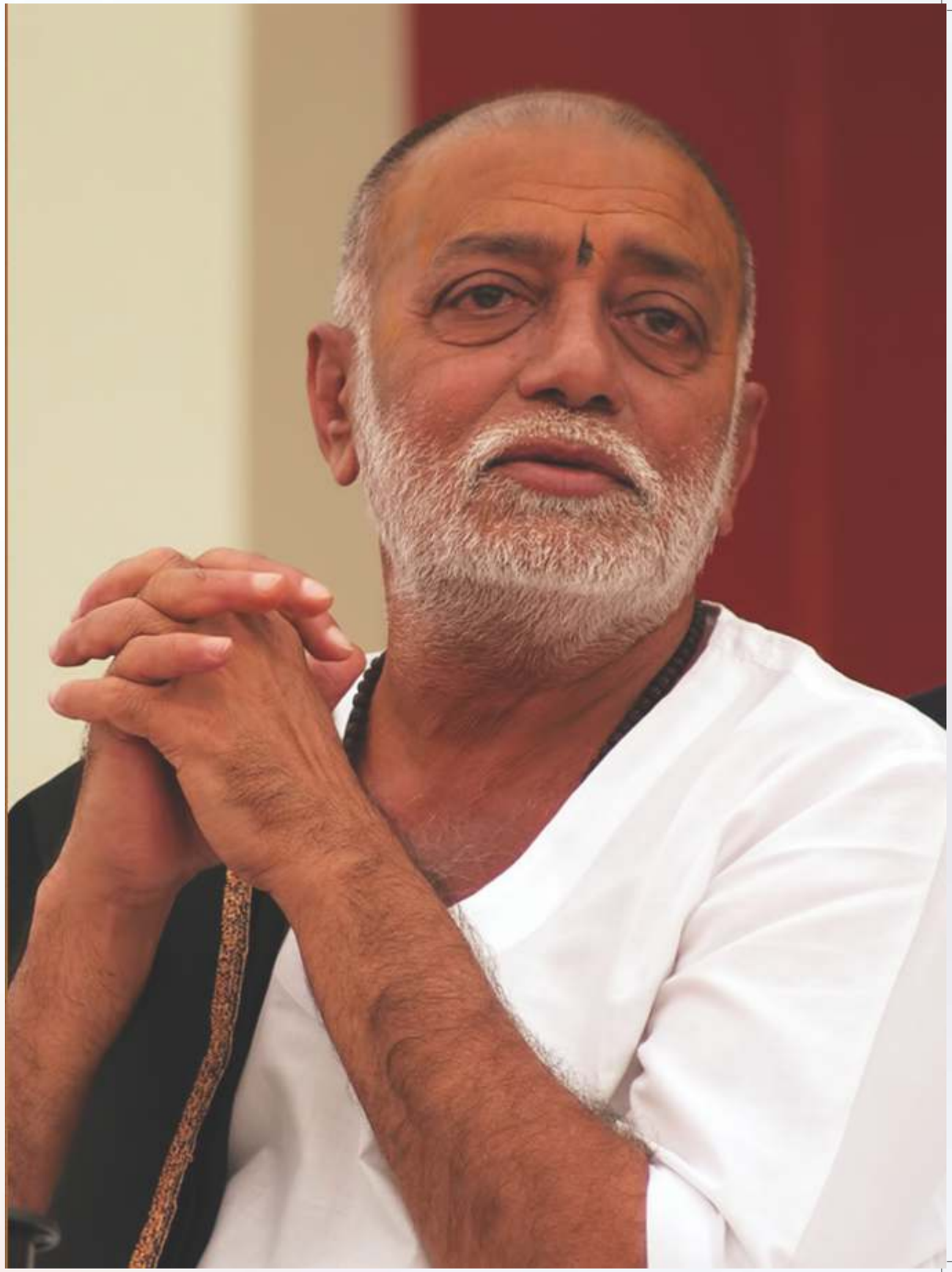

॥ जय सीयाराम ॥